ISSN NO. : 0970-9398

राजभाषा भारती

वर्ष : 40 • अंक 155 • अप्रैल–जून 2018

विशेषांक

विश्व भाषा की ओर हिंदी

वाँ

जन जन की
भाषा है हिंदी

विश्व हिंदी सम्मेलन

मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

प्रकाशकों के लिए आयोजित बैठक के दौरान राजभाषा भारती का विमोचन करते अतिथिगण

दक्षिण तथा दक्षिण–पश्चिम क्षेत्रों के राजभाषा सम्मेलन एवं पुरस्कार वितरण समारोह के दौरान राजभाषा भारती का विमोचन करते मंचासीन अतिथिगण

ISSN No. 0970-9398

विश्व विद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त

भारति जय विजय करे, कनक–शस्य–कमल धरे
–निराला

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष : 40 अंक : 155

(अप्रैल–जून, 2018)

(विशेषांक –विश्व भाषा की ओर हिंदी)

☛ संरक्षक
शैलेश
सचिव, राजभाषा विभाग

☛ प्रतिपालक
डॉ. बिपिन बिहारी
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

☛ संपादक
डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल
संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका)
दूरभाष : 011–23438250

☛ उप संपादक
डॉ. धनेश द्विवेदी
दूरभाष : 011–23438159

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक
राजभाषा विभाग
एनडीसीसी भवन–II, चौथा तल, बी विंग,
जय सिंह रोड, नई दिल्ली–110001
ईमेल–patrika-ol@nic.in
वेबसाइट–rajbhasha.nic.in

निःशुल्क वितरण के लिए

❖ संदेश 1

❖ उद्‌बोधन–सचिव (राजभाषा) 2

❖ संयुक्त सचिव की कलम से... 3

❖ संपादकीय 5

❖ साक्षात्कार –1 6

❖ साक्षात्कार –2 10

क्र.सं.	लेख का शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
1.	वैश्विक भाषा के संदर्भ में राजभाषा हिंदी	प्रो. (डॉ.) नन्दलाल कल्ला	15
2.	हिंदी विश्वभाषा की ओर	डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह	19
3.	हिंदी कैसे बने विश्व–भाषा	डॉ. वेदप्रताप वैदिक	26
4.	एक बार स्वाभिमान जाग गया तो दुनिया हिंदी का इंतजार करेगी	डॉ. अशोक चक्रधर	30
5.	विश्व भाषा के मार्ग पर तीव्र गति से अग्रसर–हिंदी	डॉ. महेश चंद्र गुप्त	33

6.	बदलती दुनिया और विश्व भाषा के रूप में हिंदी	डॉ. विभा सिंह	40
7.	हिंदीः वैश्वीकरण का परिप्रेक्ष्य	डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा	43
8.	हिंदी का प्रवासी साहित्य : सामान्य अवलोकन	डॉ. राजेश कुमार मांझी	49
9.	विश्व में सांस्कृतिक सुगंध बिखेरता प्रवासी हिंदी–लेखन	प्रो. पूरन चंद टंडन	55
10.	भाषा एवं संस्कृति की वैश्विक उड़ान और हिंदी पत्रकारिता	डॉ. जवाहर कर्नावट	59
11.	हिंदी को समृद्ध करती सरनामी हिंदी	भावना सक्सेना	64
12.	हिंदी का विश्वभाषाई वर्चस्व और अंतःबाह्य विश्लेषण	डॉ. शुभ्रता मिश्रा	69
13.	हिंदी का वैश्विक परिदृश्य और केंद्रीय हिंदी संस्थान	प्रो. नंद किशोर पाण्डे	74
14.	हिंदी का आकाश	डॉ. हरीश नवल	79
15.	हिंदी का विश्व, विश्व की हिंदी	डॉ. प्रेम जनमेजय	84
16.	हिंदी : भाषा, भारतीयता एवं भविष्य	डॉ. नरेश मोहन	87
17.	विश्वभाषा की ओर हिंदी के बढ़ते कदम	राकेश शर्मा 'निशीथ'	91
18.	विश्व भाषा के रूप में हिंदी	सुश्री स्मिता शुक्ला	96
19.	हिन्दी की वैश्विक प्रतिष्ठा में 'राजभाषा भारती' की भूमिका	सुश्री प्रेरणा गौड़	100
20.	विश्व क्षितिज पर प्रकाशमान होती हिंदी	डॉ. धनेश द्विवेदी	104

राजनाथ सिंह
RAJNATH SINGH

सत्यमेव जयते

गृह मंत्री
भारत
नई दिल्ली-110001
HOME MINISTER
INDIA
NEW DELHI-110001

संदेश

गृह मंत्रालय, संविधान के अनुरूप राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार की दिशा में सतत् प्रयासशील है। केन्द्र सरकार के कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों आदि में राजभाषा हिन्दी के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने का महती दायित्व गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग पर है और वह अपने इस दायित्व का बखूबी निर्वहन कर रहा है।

"हिन्दी" भारतीय संस्कृति की भाषा है और यह हमारे धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म को वैश्विक स्तर पर आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। यही कारण है कि आज पूरा विश्व हिन्दी में कार्य करने को तत्पर है। विभिन्न बहुराष्ट्रीय संस्थान हिन्दी भाषा को व्यापार की मुख्य भाषा के रूप में प्रयोग कर रहे हैं।

यह हम सभी के लिए गौरव की बात है कि हिन्दी भाषा के जानकार पूरे विश्व में मौजूद हैं, ऐसे में राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित होने वाली पत्रिका राजभाषा भारती का "**विश्व भाषा की ओर हिन्दी**" विषय पर विशेषांक पाठकों के लिए अत्यन्त उत्साहवर्धक होगा।

मेरा विश्वास है कि राजभाषा भारती हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अग्रणी भूमिका निभाती रहेगी। पत्रिका राजभाषा भारती के लिये मेरी शुभकामनायें।

14.05.18

(राजनाथ सिंह)

सचिव (रा.भा.) का उद्‌बोधन

राजभाषा भारती के माध्यम से पहली बार पाठकों से जुड़ने में अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित होने वाली इस त्रैमासिक पत्रिका के द्वारा अपने पाठकों से मैं कहना चाहता हूं कि राजभाषा हिंदी में कार्य करना हम सभी के लिए सम्मान एवं गौरव की बात है। हिंदी शासन–प्रशासन की भाषा तो बहुत बाद में बनी, उससे पहले यह जन–मानस के हृदय में विराजमान हो चुकी थी। स्वतंत्रता आंदोलन इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि हिंदी ने पूरे राष्ट्र को एकजुट करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी निरंतर अपनी आवश्यकता सिद्ध करती जा रही है। विश्वभर में हिंदी सीखने के लिए जो गहरी अभिरुचि जगी है, उसका सांस्कृतिक कारण होने के साथ–साथ आर्थिक कारण भी है। हिंदी ने भारत से होते हुए आज विश्व में एक सशक्त संपर्क भाषा के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करा ली है। यही कारण है कि विश्व के अनेक देश भाषा–ज्ञान के अंतर्गत हिंदी के ज्ञान को प्रथम स्थान पर रखते हैं। भौगोलिक दृष्टि से भी हिंदी विश्व भाषा है क्योंकि हिंदी बोलने, लिखने या समझने वाले पूरे विश्व में हैं। इन सबका प्रमुख कारण यही है कि हिंदी एक सरल तथा सहज भाषा है, जिसे आसानी से सीखा जा सकता है।

हम सब के लिए उत्साह की बात है कि हिंदी के वैश्विक सम्मेलनों में हिंदी प्रेमियों का अपार जन–समूह एकत्र होता है। इन सम्मेलनों में न सिर्फ हिंदी के वर्तमान पर बल्कि हिंदी भाषा के भविष्य पर भी खुलकर विचार रखे जाते हैं। विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी भाषा के साथ–साथ भारत की गरिमामयी संस्कृति से भी विश्व समुदाय को अवगत कराया जाता है और इस बार का विश्व हिंदी सम्मेलन 'हिंदी विश्व और भारतीय संस्कृति' पर केंद्रित है। विश्व हिंदी सम्मेलन में विमोचित होने वाले 'राजभाषा भारती' के अंक में 'विश्व भाषा की ओर हिंदी' विषय पर रचनाएं शामिल की गई हैं।

मुझे विश्वास है कि 11 वां विश्व हिंदी सम्मेलन हिंदी प्रेमियों एवं हिंदी सेवियों के लिए अत्यंत उत्साहवर्धक होगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित

संयुक्त सचिव की कलम से..

पिछले कई अंकों से 'राजभाषा भारती' के द्वारा मैं राजभाषा विभाग की उपलब्धियों को आपके समक्ष रखता आ रहा हूं । आप सभी के द्वारा मेरे इस प्रयास की सराहना की गई, जिससे मुझे और आत्मबल प्राप्त हुआ। 'राजभाषा भारती' का यह अंक अत्यंत विशेष है। विशेष इसलिए नहीं कि यह एक विशेषांक के रूप में है, विशेष इसलिए भी नहीं कि यह राजभाषा भारती का 155 वां पायदान हैं बल्कि इस अंक की विशेषता इसलिए है कि पहली बार 'राजभाषा भारती' देश के बाहर विमोचित हो रही है। विश्व हिंदी सम्मेलन में माननीय अतिथियों द्वारा इस अंक का विमोचन इस बात का प्रमाण है कि 'राजभाषा भारती' अपनी उच्च गुणवत्ता को बनाये रखते हुये, पाठकों को सम्पूर्ण जानकारी देने वाली एक विश्वस्तरीय 'राजभाषा हिंदी केंद्रित' पत्रिका है।

राजभाषा विभाग लगातार हिंदी के कार्यान्वयन, प्रचार–प्रसार की दिशा में कार्य कर रहा है इसलिए विगत तीन माह में भी विभाग ने कई उपलब्धियां हासिल की हैं। चाहे वह अनुवाद का कार्य हो या कार्यशालायें आयोजित करने का, सभी में राजभाषा विभाग ने अच्छी प्रगति की है। किंतु जो विशेष और उल्लेखनीय कार्य विगत तीन माह में हुए हैं उन्हें आप तक पहुंचाने में मुझे विशेष आनंद की अनुभूति हो रही है।

10 वें विश्व हिंदी सम्मेलन की अनुशंसा अनुपालन समिति की पहली बैठक में माननीय गृह राज्य मंत्री जी को दो विषय 'प्रशासन में हिंदी' तथा 'विधि एवं न्याय क्षेत्र में हिंदी तथा भारतीय भाषायें' आंबटित किये गये थे। इन विषयों पर कुल सात बैठकें माननीय विदेश मंत्री जी की अध्यक्षता में तथा पांच बैठकें माननीय गृह राज्य मंत्री जी की अध्यक्षता में हुईं। प्रत्येक बैठक में सभी अनुशंसाओं पर हुई प्रगति की समीक्षा की जाती रही, संबंधित मंत्रालयों के अधिकारियों के साथ चर्चा की जाती रही और सुखद परिणाम यह रहा कि ''प्रशासन में हिंदी'' विषय पर काफी प्रगति देखने को मिली है। सम्मेलन के मुख्य सत्र 'भोपाल से मॉरीशस' के दौरान इस संबंध में हासिल की गई उपलब्धियों पर रिपोर्ट प्रस्तुत की जायेगी।

राजभाषा विभाग विगत 43 वर्षों से राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने का प्रयास कर रहा है और आज केंद्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों/बैकों/उपक्रमों आदि में काफी कार्य हिंदी में होने लगा है। विभाग को पहली बार विश्व हिंदी सम्मेलन में सक्रिय भागीदारी का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और राजभाषा विभाग को एक पूर्ण सत्र प्राप्त हुआ है। इस सत्र की अध्यक्षता माननीय गृह राज्य मंत्री जी करेंगे और संयोजन का दायित्व मुझे दिया गया है। इस सत्र का विषय 'राजभाषा वाँ विभाग द्वारा प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी एवं भारतीय भाषाओं का विकास' रखा गया है और तकनीकी को आधार बनाते हुए हिंदी एवं भारतीय भाषाओं के विकास में राजभाषा विभाग के योगदान एवं भविष्य की योजनाओं पर चर्चा की जायेगी।

राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित होने वाली राजभाषा हिंदी पर केंद्रित पत्रिका ''राजभाषा भारती'' का विमोचन भी किया जाएगा। विश्व हिंदी सम्मेलन में विभाग को तथा मुझे मिले इस दायित्व का निर्वहन करने में अत्यंत खुशी हो रही है।

दूसरी ऐतिहासिक उपलब्धि मैं आपके साथ साझा करना महत्वपूर्ण समझता हूं वह है 'विदेशों में नराकास का गठन'। जैसा कि आप जानते हैं विभिन्न नगरों में राजभाषा हिंदी की प्रगति को सुनिश्चित करने तथा उसके कार्यान्वयन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों (नराकास) का गठन किया गया है। नराकासों के कार्यों में वार्षिक कार्यक्रम की सभी मद पर चर्चा कर कार्रवाई का रोड–मैप समय–सीमा के साथ बनाना, सभी कार्यालय प्रमुखों एवं सदस्यों की पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना, मूल कार्य हिंदी में करने के लिए सभी सदस्य कार्यालयों की भूमिका की विस्तृत समीक्षा करना

तथा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए प्रौद्योगिकी आधारित कार्यान्वयन सुनिश्चित करना शामिल है। इससे सुव्यवस्थित रूप से हिंदी के कार्यान्वयन एवं प्रचार–प्रसार को नई गति मिलती है।

भारत से बाहर कई देशों में भारत सरकार के कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों आदि की शाखाएं हैं। जिन देशों में ऐसी शाखाओं की संख्या 7 से अधिक हैं वहां नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित करने का प्रस्ताव राजभाषा विभाग द्वारा दिया गया था। दिनांक 16.05.2018 को माननीय गृह राज्य मंत्री जी की अध्यक्षता में अनुवर्ती कार्रवाई की बैठक में विदेशों में नराकास गठन का कार्य विदेश मंत्रालय द्वारा करने के लिए फिजी इत्यादि किन्हीं दो स्थानों से प्रारंभ करने को कहा गया। इसके फलस्वरूप विदेश मंत्रालय द्वारा सिंगापुर एवं सुवा (फिजी) में नराकास गठन की स्वीकृति दे दी गई है। यह एक ऐतिहासिक कदम है, जो विदेशों में मितव्ययता के साथ हिंदी के कार्यान्वयन, प्रचार–प्रसार एवं आपसी समन्वय के साथ भारतीय संस्कृति को व्यापक बनाने का मार्ग प्रशस्त करेगा ।

हिंदी दिवस 2017 पर माननीय राष्ट्रपति जी के कर–कमलों से ''लीला'' मोबाइल एप को लोकार्पित किया गया था, जिससे आप भली–भांति परिचित हैं। तकनीकी के साथ हिंदी भाषा का समन्वय बढ़ाने का यह प्रयास भर था। इस दिशा में आगे बढ़ते हुए राजभाषा विभाग में 'हिंदी प्रौद्योगिकी संसाधन केंद्र' की स्थापना की गई है। इस केंद्र का उद्देश्य एकल खिड़की के माध्यम से हिंदी से संबंधित सभी तकनीकी समस्याओं का राष्ट्रीय स्तर पर निराकरण करना है। उच्च स्तरीय सॉफ्टवेयर निर्माण सहित आधुनिक तकनीकी माध्यमों के साथ हिंदी भाषा को जोड़ना, इस केंद्र की पहली प्राथमिकता होगी। हिंदी प्रौद्योगिकी संसाधन केंद्र के अंतर्गत 'स्मृति आधारित अनुवाद टूल' (कंठस्थ) का निर्माण सी–डेक के माध्यम से कराया जा रहा है। यह अनुवाद प्रणाली, स्मृति आधारित (टीएमबीएस) होगी अर्थात् यह किए गए अनुवाद सामग्री को संग्रहीत करेगी। अनुवाद स्मृति (टीएम) आमतौर पर स्थानीयकरण उद्देश्य के अनुवाद में प्रयोग किया जाता है। अनुवाद स्मृति (टीएम), अनुवाद में मानकीकरण/स्थिरता में मदद करता है और दोहराव वाले पाठों का अनुवाद कम करके समय बचाता है। राजभाषा विभाग द्वारा परियोजना का वेब तथा स्टैंड अलोन संस्करण बनाया जा रहा है, जो अनुवाद प्रक्रिया में शामिल अधिकारियों और अनुवादकों को उनके संबंधित स्थान पर अनुवादित दस्तावेज प्राप्त करने में मदद करेगा। इस सॉफ्टवेयर को केंद्र सरकार के कार्यालयों को निःशुल्क उपलब्ध कराया जा रहा है। सॉफ्टवेयर के सही उपयोग के लिए कार्मिकों के ट्रेनिंग मॉड्यूल्स भी तैयार कराए गए हैं। इस टूल से अनुवादकों को सुविधा मिलेगी तथा अनुवाद की उत्कृष्ट गुणवत्ता पाठकों को मिल सकेगी। 'कंठस्थ' का लोकार्पण भी विश्व हिंदी सम्मेलन के मुख्य सत्र में किया जाना है।

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा हिंदी भाषा का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कार्मिकों के साथ–साथ जनसाधारण को हिंदी भाषा का उच्चतर ज्ञान प्राप्त कराने के लिए ''हिंदी प्रवाह'' नामक एक नया पाठ्यक्रम तैयार किया गया है। इस पाठ्यक्रम को भी 'लीला पैकेज' की भाँति अंग्रेजी के अलावा 14 भारतीय भाषाओं क्रमशः असमिया, बोडो, बांग्ला, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, तमिल एवं तेलुगू के माध्यम से जनसाधारण तक ऑनलाइन वेबवर्जन एवं मोबाइल ऐप के रूप में उपलब्ध कराने की दिशा में कार्य किया गया है। 'लीला हिंदी प्रवाह' के वेबवर्जन एवं मोबाइल ऐप में पाठों से संबंधित शब्दों को समझने एवं समझाने के लिए बृहत शब्दावली की व्यवस्था भी की गई है। इस बृहत शब्दावली में पाठों में सम्मिलित शब्दों के अर्थ यूज़र द्वारा चयनित भाषा में वर्णक्रमानुसार दिए गए हैं। इस भाग की विशेषता यह है कि इसमें शब्दों के उच्चारण के साथ–साथ रिकॉर्ड एवं कम्पेयर सुविधा भी उपलब्ध करवाई गई है। यूज़र, पाठ में आए शब्दों का अर्थ अपनी भाषा में देखने एवं जानने के अलावा हिंदी में उनका उच्चारण सुनने के बाद स्वयं उस शब्द को बोलकर रिकॉर्ड कर सकते हैं और फिर मूल शब्द एवं स्वयं द्वारा रिकॉर्ड किए हुए शब्द को एक के बाद एक सुनकर उच्चारण संबंधी अपनी कमियों को दूर कर सकते हैं।

राजभाषा विभाग का लगातार प्रयास रहा है कि हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार एवं कार्यान्वयन सर्वोत्कृष्ट ढंग से किया जा सके। मॉरीशस में आयोजित 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में विभिन्न देशों के हिंदी विद्वान/हिंदी प्रेमी उपस्थित रहेंगे, जिनके समक्ष 'राजभाषा भारती' का लोकार्पण गौरव की बात है।

मुझे विश्वास है कि 'राजभाषा भारती' के पाठक इसी प्रकार राजभाषा विभाग को प्रोत्साहित करते रहेंगे।

विपिन बिहारी

संपादकीय

साहित्य, भाषा, लिपि, शब्द–सामर्थ्य, बोलने वाले की संख्या आदि की दृष्टि से हिंदी विश्व की प्रमुख भाषाओं में से एक है। हिंदी का वर्तमान स्वरूप इतना व्यापक है कि यह विश्व के लगभग एक सौ देशों के कालेजों, विश्वविद्यालयों आदि में किसी–न–किसी स्तर पर पढ़ाई जाती है। यही नहीं केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् की विभिन्न पीठों और देश के प्रमुख विश्वविद्यालयों के माध्यम से दुनिया भर के हजारों विद्यार्थी प्रतिवर्ष हिंदी का अध्ययन किसी–न–किसी स्तर पर करते हैं। हिंदी सिनेमा और इसके गीतों की मिठास की अनुभूति से धरती का कोई कोना वंचित नहीं है।

हिंदी के प्रचार–प्रसार में विश्व हिंदी सम्मेलनों का विशेष योगदान रहा है। 10 जनवरी 1975 को नागपुर से आरंभ होकर यह सम्मेलन अब अपने ग्यारहवें पायदान पर है। अन्यान्य महाद्वीपों में यह आयोजन हिंदी के प्रचार–प्रसार में नई ऊर्जा का संचार करता है। इन सम्मेलनों के माध्यम से विश्वभर के हिंदी प्रेमियों को लेखकों, कवियों और रचनाकारों के सानिध्य में आने के लिए एक मंच प्राप्त होता है। विश्व हिंदी सम्मेलनों में पारित मंतव्यों के फलस्वरूप अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा और विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस जैसी संस्थाओं का उदय हुआ है। ये संस्थाएं हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए विश्वस्तर पर कार्य कर रही हैं।

अगस्त 2018 में मॉरीशस में यह सम्मेलन तीसरी बार आयोजित किया जा रहा है। इसके पहले यह आयोजन अगस्त 1976 और दिसंबर 1993 में मॉरीशस में आयोजित किया जा चुका है। तीसरी बार मॉरीशस में किया जा रहा यह आयोजन यह द्योतित करता है कि हिंदी भाषा मॉरीशस के जन–जन में कितनी लोकप्रिय है।

राजभाषा विभाग की पत्रिका 'राजभाषा भारती' मॉरीशस में आयोजित ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन को समर्पित है। 'विश्व भाषा की ओर हिंदी' इस अंक का प्रतिपाद्य है। इस अंक में हिंदी के वैश्विक स्वरूप पर चुनिंदा लेखों को पिरोने का भरसक प्रयास किया गया है। राजभाषा विभाग देश में राजभाषा के रूप में हिंदी को कार्यान्वित करने का एक महती कार्य कर रहा है। विभाग द्वारा किया जा रहा कार्य प्रकारान्तर से हिंदी को विश्व मंच पर स्थापित करने के लिए सकारात्मक भूमिका का निर्वहन करता है। हिंदी को प्रौद्योगिकी से जोड़ना, मोबाइल ऐप के माध्यम से हिंदी सीखने की व्यवस्था करना, हिंदी के प्रयोग को सरल और सहज बनाने के लिए भरसक उपाय करना, विभाग द्वारा जनहित में किया जाने वाला विशिष्ट कार्य है। विभाग का शीर्ष प्रशासन हिंदी को विश्वमंच पर सुशोभित करने के लिए मार्ग प्रशस्त कर रहा है।

आशा है राजभाषा भारती का यह विशेषांक आपको रुचिकर और उपयोगी लगेगा।

पूर्व सूचना और प्रसारण मंत्री सुश्री स्मृति ईरानी जी का साक्षात्कार

1. भारतीय परिदृश्य में हिंदी भाषा की भूमिका को किस प्रकार देखती हैं?

भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वाधीनता संग्राम से लेकर आज तक के सफर में हिंदी भाषा ने जन–जन को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य किया है। संवैधानिक उपबंधों को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हेतु इस भाषा ने भारतवर्ष में एक नई जनचेतना पैदा की है। जनसंचार माध्यमों, चाहे वह इलेक्ट्रॉनिक मीडिया हो या प्रिंट मीडिया हिंदी भाषा का बढ़ता वर्चस्व आज सर्वविदित है। सरकारी काम–काज में भी इसके प्रयोग में बढ़ोत्तरी दर्ज की जा रही है। वस्तुतः आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अन्य विकसित देशों की तरह अपने देश को भी भाषायी एकता की मणिमाला में सुसज्जित करने का प्रयास करें। मुझे लगता है कि हिंदी भाषा के माध्यम से इस कार्य को बखूबी पूरा किया जा सकता है।

2. हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में चलचित्र की भूमिका किस प्रकार की है?

चलचित्र आधुनिक युग में मनोरंजन का सबसे प्रभावी साधन है। आज सिनेमाघरों का विस्तार शहर से लेकर गांव एवं छोटे–छोटे कस्बों तक है। इन सिनेमाघरों तथा घरों में टेलीविजन के माध्यम से दिखाए जाने वाले चलचित्र लोगों के मनोमस्तिष्क पर विचारों तथा संवेदनाओं की एक ऐसी अमिट छाप छोड़ते हैं जिनका हमारे आचार–व्यवहार पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है। इसी क्रम में यदि हमारी बोलचाल की भाषा में फिल्मों का निर्माण किया जाए तो निःसंदेह उसके माध्यम से प्रभावी रूप से जनसंदेश का संचार किया जा सकता है और किसी जीवंत विषय पर सोचने–समझने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। आज विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि विषयों को लेकर बोलचाल की भाषा हिंदी में बनने वाली फिल्मों का बोलबाला है जिससे हिंदी बोलने–समझने वालों की संख्या मे लगातार वृद्धि हो रही है। हिंदी की लोकप्रियता ने विदेशों में भी हिंदी फिल्मों की धूम मचा रखी है। अतः यदि मैं यह कहूं कि चलचित्र के माध्यम से हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में तेजी आई है, तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

3. आपने विभिन्न धारावाहिकों में काम किया है, आपको लोकप्रिय बनाने में हिंदी भाषा की भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण है?

मैं हिंदीतर भाषी परिवेश से संबंध रखती हूं और मुझे कई धारावाहिकों जैसे 'आतिश', 'हम हैं कल आज और कल', 'क्योंकि सास भी कभी बहू थी' आदि में काम करने का सुअवसर प्राप्त हुआ तथा मैंने 'थोड़ी सी जमीन थोड़ा सा आसमान', 'विरुद्ध', जैसे धारावाहिकों का निर्माण भी किया। मैंने बंगाली फिल्म 'अमृता' में भी अपना योगदान दिया। मनोरंजन उद्योग में अलग–अलग भाषाओं में कार्य करते समय मुझे कई बार ऐसा महसूस हुआ कि हिंदी भाषा के कार्यक्रमों के माध्यम से मैं अपनी भूमिका के जरिए दर्शकों तक अपने विचारों, मनोभावों को संप्रेषित कर

पाने में अधिक सक्षम रही हूं। यही कारण है कि मेरे कुछ धारावाहिक जैसे 'सास भी कभी बहू थी' दर्शकों को अपने घर–परिवेश की कहानी लगने लगी थी। खासतौर पर 'तुलसी' के रूप में मेरे किरदार को दर्शकों ने अधिक सराहा। निश्चित रूप से हिंदी भाषा के कार्यक्रमों ने मुझे दर्शकों के बीच नई पहचान प्रदान की।

4. मीडिया के अलग–अलग स्वरूपों में कार्य के दौरान आपने किस भाषा का अधिक प्रभाव महसूस किया?

जैसा कि मैंने आपको पहले भी बताया कि मुझे धारावाहिकों, फिल्मों, संगीत सभी में अभिनय करने का अवसर प्राप्त हुआ था और साथ ही मुझे हिंदी के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं में भी काम करने का मौका मिला था। इस दौरान मैंने सभी भाषाओं में अभिनय का आनंद प्राप्त किया परंतु हिंदी एक ऐसी भाषा थी जिसने मेरे किरदार को घर–घर तक पहुंचाया। मुझे इस बात की खुशी है कि दर्शकों ने मेरे अभिनय की सराहना की। संभवतः भारत की बहुसंख्यक आबादी द्वारा हिंदी बोली समझी जाने के कारण इस भाषा के धारावाहिकों का प्रभाव क्षेत्र अधिक व्यापक है।

5. क्या मीडिया समूहों में हिंदी भाषा ज्ञान को लेकर गुणवत्ता कमी देखी जा रही है?

मैं इससे सहमत नहीं हूं। भाषा को सिर्फ पुस्तकों तक सीमित कर देना उचित नहीं है अपितु व्यावहारिक धरातल पर उसमें नए–नए प्रयोग किए जाना आवश्यक है ताकि भाषा की गतिशीलता बरकरार रखी जा सके। प्रयास यह होता है कि अंग्रेजी भाषा का ज्ञान रखने वाले लोग अंग्रेजी भाषा के कार्यक्रमों में अपना योगदान दें तथा हिंदी भाषा का ज्ञान रखने वाले व्यक्ति हिंदी भाषा के कार्यक्रमों के निर्माण में अपना सहयोग दें। मिश्रित प्रयोग से बचने का प्रयास किया जाता है। हालांकि निजी मीडिया चैनलों में कुछ हद तक मिश्रित भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है लेकिन इसके पीछे हिंदी ज्ञान की कमी अथवा हिंदी भाषा से जुड़ी संवेदनाओं को ठेस पहुंचाने की मंशा नहीं होती।

6. क्या मीडिया संस्थाओं में हिंदी में पाठ्यक्रम उपलब्ध कराने की आवश्यकता है?

सूचना और प्रसारण मंत्रालय के कुछ अधीनस्थ माध्यम एककों जैसे एफटीआईआई में प्रवेश परीक्षा हिंदी माध्यम में देने का विकल्प मौजूद है। छात्र हिंदी में अपने असाइनमेंट प्रस्तुत कर सकते हैं। इसी प्रकार, आईआईएमसी में हिंदी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं तथा साथ ही दोनों भाषाओं में परीक्षा देने का विकल्प भी मौजूद है।

7. आपने मानव संसाधन मंत्रालय में भी कार्य किया है, क्या आपको लगता है कि राजभाषा हिंदी के प्रति अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है?

वाँ

जी, हां। मानव संसाधन विकास मंत्री के तौर पर कार्य करते हुए मुझे हिंदी के प्रचार–प्रसार को और गति प्रदान करने की आवश्यकता महसूस हुई। इसी कारण मैंने 'मातृभाषा दिवस' मनाने का निर्णय लिया ताकि हिंदी को देश के कोने–कोने तक पहुंचाया जा सके। शैक्षणिक संस्थाओं को भी इस ओर विशेष रूप से ध्यान देने के निर्देश जारी किए गए ताकि हिंदी को भारतीयता से जोड़ा जा सके और वैश्विक स्तर पर भारत की विशिष्ट पहचान स्थापित की जा सके।

8. मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाविदों का मानना है कि बच्चों को मातृभाषा में शिक्षा देना अधिक लाभप्रद होता है, आप इस बारे में क्या कहती हैं?

मैं इस बात से पूर्णतः सहमत हूं। बच्चों को यदि उनकी मातृभाषा में शिक्षा दी जाए तो उनका

स्वाभाविक विकास अधिक सहजता से होता है और यही शिक्षा का सर्वोत्तम तरीका है। मातृभाषा में शिक्षा का लाभ यह होता है कि बच्चा अपने परिवार, परिवेश से अपनी शिक्षा का तादात्म्य स्थापित कर पाता है और आनंदपूर्वक ज्ञान अर्जित कर पाता है।

9. सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिंदी मे कार्य करने के लिए हाईस्कूल तक हिंदी का ज्ञान आवश्यक है किंतु कई शिक्षा परिषदों में हाई स्कूल में हिंदी विषय अनिवार्य नहीं है, इसका क्या कारण है तथा इसे कैसे प्रभावशाली बनाया जा सकता है?

इस दिशा में स्वप्रेरणा से हिंदी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना अधिक श्रेस्यकर होगा। भाषा को सहजता से स्वीकार करना बेहतर होता है, न कि किसी पर थोपा जाना। सहज स्वीकृति मनोभावों को अभिव्यक्ति की नई दिशा प्रदान करती है और यही वह माध्यम है जिसके जरिए हम हिंदी भाषा को लोकप्रिय और प्रभावशाली बना सकते हैं।

10. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार में किस प्रकार अपनी भूमिका का निर्वहन कर सकता है।

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के मुख्य सचिवालय में साप्ताहिक आधार पर सभी अनुभागों के हिंदी कामकाज का मूल्यांकन शुरू किया गया है ताकि सरकारी कार्यों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाया जा सके। इसके अतिरिक्त यह मंत्रालय राजभाषा विभाग द्वारा समय–समय पर जारी निदेशों का भी अनुपालन सुनिश्चित करता है। मंत्रालय के हिंदी कामकाज को बढ़ावा देने के लिए हिंदी सलाहकार समिति का गठन किया गया है। अगर हम गत वर्ष की स्थिति देखें तो सूचना और प्रसारण मंत्रालय के माध्यम एकक डीएवीपी के माध्यम से हिंदी भाषा में विज्ञापन तथा होर्डिगों पर अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक व्यय किया गया है।

11. क्या आप महसूस करती हैं कि राजभाषा हिंदी को स्थापित करने में दूरदर्शन की अग्रणी भूमिका है? दूरदर्शन पर लघु फिल्मों के माध्यम से राजभाषा प्रचार–प्रसार को बढ़ावा दिया जा सकता है?

राजभाषा हिंदी को स्थापित करने में दूरदर्शन की अग्रणी भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। दूरदर्शन ने लोकप्रिय कार्यक्रमों, फिल्मों, प्रामाणिक समाचारों आदि का हिंदी में प्रसारण करके दर्शकों के बीच अपनी लोकप्रियता को बरकरार रखा है। हालांकि, यह भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि दर्शकों को ध्यान में रखते हुए रोचक तथा ज्ञानवर्धक विषय–वस्तु का प्रसारण किया जाए और कार्यक्रमों के दौरान विज्ञापनों की अवधि को भी नियंत्रित रखा जाए जिसके संबंध में सूचना और प्रसारण वाँ मंत्रालय ने समय–समय पर निर्देश भी जारी किए हैं। फिल्मों को यदि रोचक बनाया जाए तो दर्शक लघु फिल्मों के साथ–साथ लंबी फिल्में भी देखना पसंद करेंगे। इसमें हिंदी की विषय–वस्तु का सुरुचिपूर्ण एवं बेहतर तरीके से किया गया प्रयोग कारगर सिद्ध हो सकता है।

12. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अधीन प्रकाशन विभाग किस प्रकार राजभाषा हिंदी में प्रकाशन सामग्री में बढ़ोतरी कर सकता है।

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय का अधीनस्थ माध्यम एकक प्रकाशन विभाग पहले से ही हिंदी में बृहत सामग्री का प्रकाशन करता आ रहा है। 'आजकल', 'कुरूक्षेत्र', 'योजना' व 'बालभारती' जैसी महत्वपूर्ण पत्रिकाओं का हिंदी में प्रकाशन किया जा रहा है। महात्मा गांधी के संपूर्ण जीवनवृत्त को 100 खंडों में हिंदी में प्रकाशित

किया गया है जो अपने आप में एक विशिष्ट उपलब्धि है। 'काशी नगरी एकः रूप अनेक', 'संगीत मन को पंख लगाए', 'संस्कृत साहित्य रत्नावली', 'एकता की बोलती तस्वीरें', 'मतदान में विश्वास', 'आदिकवि और उनकी रामायण', 'सफर सुहाना स्वच्छता का' आदि जैसे नवीन प्रकाशन उक्त विभाग की हिंदी भाषा के लिए प्रतिबद्धता जाहिर करते हैं।

13. वैश्विक परिदृश्य में हिंदी भाषा की भूमिका को किस प्रकार देखती हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक स्तर पर अपनी नई पहचान स्थापित कर रही है। वर्तमान सरकार के आगमन के पश्चात इस ओर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है कि कैसे वैश्विक स्तर पर भारतीयता को हिंदी भाषा से जोड़ा जाए। प्रधानमंत्री महोदय तथा अन्य वरिष्ठ मंत्रीगणों का अधिकतर यह प्रयास रहता है कि वे न केवल देश में, अपितु विदेशों में भी हिंदी में अपने विचार प्रस्तुत करें। इससे वैश्विक धरातल पर हिंदी को एक नया आयाम प्राप्त हुआ है तथा विदेशों में रहने वाले भारतीय मूल के लोग एवं अप्रवासी भारतीय भी स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं। इस दिशा में निरंतर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

14. राजभाषा हिंदी को किस प्रकार रोजगार की भाषा बनाया जा सकता है तथा इस दिशा में सूचना एवं प्रसाण मंत्रालय के प्रयास किस प्रकार के हैं?

हमारी सरकार रोजगार सृजन के लिए प्रतिबद्ध है तथा शहरों के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी इस दिशा में पर्याप्त प्रयास किए जा रहे हैं। वैश्विक स्तर पर हिंदी की साख स्थापित करके तथा इसे व्यापार की भाषा बनाकर रोजगार की नई संभावनाएं तलाशी जा सकती हैं। राजभाषा विभाग तो इस दिशा में प्रयासरत है ही, यह मंत्रालय भी अपने माध्यम एककों विशेषकर आकाशवाणी, दूरदर्शन के जरिए हिंदी भाषा के कार्यक्रमों तथा प्रकाशन विभाग के माध्यम से हिंदी भाषा की रोचक एवं ज्ञानवर्धन पुस्तकें प्रकाशित करने के क्रम में हिंदी में रोजगार के नए अवसरों का सृजन करने के लिए प्रतिबद्ध है और इस दिशा में सकारात्मक प्रयास किए जा रहे हैं।

15. मंत्रालय कि हिंदी सलाहकार समिति की बैठक नियमित रूप से हो इसके लिए किस प्रकार के प्रयास किए जा रहे हैं।

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय की दिनांक 20.04.2018 को हुई हिंदी सलाहकार समिति की बैठक में अध्यक्ष के नाते मैंने यह भरोसा दिलाया है कि आगे से इस समिति की बैठक नियमित रूप से आयोजित की जाएगी तथा साथ ही साथ दीपोत्सव के बाद समिति की बैठक पुनः आयोजित करने का निदेश दिया है।

16. हिंदी को आगे बढ़ाने और इसका अधिकाधिक प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए भविष्य में किस प्रकार की तैयारी की आवश्यकता है?

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग सुनिश्चित करने की दिशा में निरंतर प्रयासरत है। इसी क्रम में साप्ताहिक आधार पर मंत्रालय के सभी अनुभागों के हिंदी कामकाज का मूल्यांकन शुरू किया गया है जो अपने आप में एक अनूठा प्रयास है। साथ ही साथ दिनांक 20.04.2018 को हुई हिंदी सलाहकार समिति की बैठक में भी इस संबंध में ठोस निर्णय लेते हुए मंत्रालय के अधीनस्थ माध्यम एककों नामतः दूरदर्शन, डीडी न्यूज, आकाशवाणी, प्रकाशन विभाग तथा उक्त समिति के गैर–सरकारी सदस्यों को शामिल करते हुए एक उप–समिति का गठन करने तथा तीन माह के अंदर हिंदी का प्रयोग बढ़ाने की दिशा में उठाए जाने वाले ठोस कदमों की रूपरेखा प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया है।

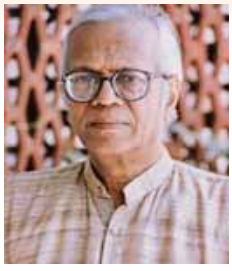

छोटे–छोटे देशों के अंदर भी लोग हिंदी में लिखने लगे हैं–कमल किशोर गोयनका

प्र. आपके साहित्यिक जीवन की शुरूआत कैसे हुई?

मैंने 1958 में बुलंदशहर से बी.ए. किया था। बी. ए. करने के बाद मैं दिल्ली आया। दिल्ली विश्वविद्यालय से मैंने एम.ए. किया, उस समय में मेरी प्रथम श्रेणी आई थी और उसके बाद दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर होने का लक्ष्य लेकर आया था। मेरा पूरा परिवार एक व्यापारिक पृष्ठ भूमि से था। किसी ने नौकरी नहीं की थी तो मेरा मन यह था कि मुझे अध्यापन की तरफ जाना चाहिए। ईश्वर ने मेरी मद्द की और मैं 1962 में दिल्ली के जाकिर हुसैन कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय) में हिंदी का अध्यापक हो गया। उसके बाद पी.एच.डी. की, फिर मैंने प्रेमचंद विश्वकोश तैयार किया। वर्ष 1980 प्रेमचंद का शताब्दी वर्ष था, उस शताब्दी वर्ष में उसका लोकापर्ण अमृतराय ने किया। उसमें इतनी सामग्री थी जिसके बारे में लोग जानते नहीं थे। प्रेमचंद के जीवन के बारे में, उनके विचारों के बारे में, उनके साहित्य के बारे में इतनी सारी सामग्री तैयार की कि हिंदी संसार में तहलका मच गया। उसके बाद मैंने यह सिद्ध किया कि वे गरीब नहीं थे, तो इसके बाद बहुत ज्यादा भयंकर स्थिति का सामना करना पड़ा। मैंने एक हजार चार सौ पृष्ठों का नया साहित्य खोजा, जो उनके बेटों को भी मालूम नहीं था। मैंने बड़े प्रमाण के साथ सिद्ध किया कि प्रेमचंद भारतीय परंपरा के लेखक थे और उनके मन में अद्वितीय देश प्रेम था और उन्होनें लिखा भी है कि मैं भारतीय आत्मा कि रक्षा करना चाहता हूँ। इस विश्वकोश के बाद भी मेरा बराबर काम होता रहा और प्रेमचंद पर मेरी 30 किताबें छपीं।

प्र. इतना सारा संकलन करने में आपको किस तरह की परेशानी का सामना करना पड़ा?

उ. मैंने सारे देश की यात्रा की। पुराने पुस्तकालयों के चक्कर लगाये, पत्रिकाएं– एकत्र कीं और जो पांडुलिपि जिसके पास थीं, जिनके पास मूलपत्र थे, उनसे संपर्क किया। उन्होंने मुझे सहज रूप से दे दिया और उन लोगों ने कहा कि हम ऐसे ही आदमी की प्रतीक्षा में थे जो इसका उपयोग कर सके। उनके लगभग 3000 ओरिजनल दस्तावेज आज मेरे संग्रह के अंदर हैं। गोदान के 2 मूल ड्राफ्ट मेरे पास है। शतरंज के खिलाड़ी कहानी की, उनके हाथ की लिखी हुई पांडुलिपि है। इस नई सामग्री से एक नया प्रेमचंद सामने आया, मुझे बहुत समर्थन मिला लेकिन मेरा विरोध भी कम नहीं हुआ। विरोध करने वाले केवल प्रगतिशील लेखक थे और किसी ने मेरा विरोध नहीं किया। मेरे जमाने में जितने बड़े–से–बड़े लेखक थे सब मेरे साथ खड़े होते थे। ऐसी रिसर्च पहले कभी हिंदी में हुई नहीं थी। इससे लोगों में मेरे काम के प्रति आकर्षण पैदा हुआ। लेकिन जब मेरा विरोध हुआ, उससे भी मुझे ताकत मिली। मेरा विरोध नहीं होता तो मुझे पता ही नहीं चलता कि मेरी उपयोगिता क्या है। मैं तो उनके प्रति भी कृतज्ञ हूं जिन्होंने मेरा विरोध किया। तो इस तरह से प्रेमचंद को नया जीवन देकर मुझे संतोष है कि मुझे एक नया ज्ञान प्राप्त हुआ।

प्र. प्रेमचंद के साहित्य को उनके समतुल्य दूसरे साहित्यकारों से किस तरह अलग मानते हैं?

उ. प्रेमचंद के जमाने में प्रसिद्ध पीढ़ी जो आ रही थी उनमें जयशंकर प्रसाद और जैनेंद्र कुमार प्रसिद्ध थे। इनकी धारा इतिहास और संस्कृत की धारा थी। प्रेमचंद की धारा मूल रूप से है तो समाज ही, लेकिन वह

संस्कृति के मूल अंग को भी लेकर चलते हैं। मनुष्य के उन्नयन की बात करते हैं, और वर्तमान के साथ वो एक संवाद करते हैं। उन्होंने इतिहास की भी खूब कहानियां लिखी हैं लेकिन इतिहास का उपयोग वर्तमान के लिए करते हैं। तो मैं कहता हूँ कि प्रेमचंद अपने वर्तमान के साथ–साथ अतीत को भी देखते हैं और उनके देखने का लक्ष्य यह है कि भविष्य कैसा होगा। भारत के भविष्य के प्रति बहुत बड़ी चिंता है और मूलतः वो भारत की आत्मा को सुरक्षित रखना चाहते हैं।

प्र. आपने लगभग 40 वर्षों से ज्यादा अध्यापन कार्य किया है। अपने समय के शिक्षक तथा आजकल के शिक्षकों में किस तरह का परिवर्तन देखते हैं?

उ. जो आपने प्रश्न किया है उस वस्तुस्थिति से मैं बहुत दुखी हूँ। 40 वर्षों तक मैंने विश्वविद्यालय में पढ़ाया है। मुझे अपने जैसा कोई शिक्षक नहीं मिला जिसने रिसर्च के लिए अपना पूरा जीवन दिया हो। मुझे अफसोस है कि मुझे जीवन में कोई ऐसा विद्यार्थी नहीं मिला, जिसे मैं ये कह सकूँ कि वह मेरे से बेहतर निकलेगा। हर अध्यापक यह चाहता है कि उसका विद्यार्थी उससे बेहतर निकले। अब तो शिक्षा की व्यवस्था बहुत खराब हो गयी है और मैं नहीं जानता कि विश्वविद्यालय का ढांचा कैसे बना रहेगा। जो लोग पी.एच.डी. करके आ रहे हैं, उन्हें अपने विषय का ज्ञान नहीं है। पी. एच.डी. मिलने और नौकरी मिलने के बाद वह पढ़ना लिखना बंद कर देते हैं। विश्वविद्यालय का स्तर ऐसे कतई नहीं चलेगा। शिक्षा व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

प्र. सर आपने हाईकू विधा में बहुत लेखन कार्य किया है। हाईकू विधा के बारे में पाठकों को कुछ बताइये?

उ. हाईकू विधा में मैंने शुरू में लेखन किया था। लेकिन जब रिसर्च का आनंद आने लगा तो मेरी क्रिएटिव राईटिंग समाप्त होने लगी। मेरे मित्र थे प्रो. सत्य भूषण वर्मा, जो नेहरू विश्वविद्यालय में जापानी विभाग के अध्यक्ष थे, उनके कहने पर कुछ मैंने कुछ हाइकू लिखे थे। लेकिन मुझे लगा कि हाइकू लिखना बहुत आसान नहीं है। हाइकू को नरेटिव बना देंगे तो बहुत आसान है लेकिन हाइकू का मूल तत्व है कि उसमें प्रकृति का तत्व आना चाहिए। उसके लिए जब तक आप गहरे रूप से कवि नहीं हैं तब तक आप हाइकू नहीं लिख सकते। मुझे यह भी लगता है हाइकू एक ऐसी विधा जरूर है जो वास्तविक कवि की परीक्षा लेती है। आप पाँच–सात अक्षरों में अपने मन के सत्य का उद्घाटन कर दें यह कोई आसान काम नहीं होता है। अब जो हाइकू आ रहे हैं वे नरेटिव हैं और नरेटिव से कोई कविता बनती नहीं है। जब तक उसमें संवेदना या अनुभूति की गहराई नहीं होगी, जब तक नया बिंब आप क्रिएट नहीं करते, जब तक नया उपमान ऐसा नहीं लाते जो आपके हृदय को स्पर्श कर दे, तब तक कविता नहीं बनती। वर्तमान का हाइकू अधिकांश रूप से इससे विहीन है इसलिए वो काव्य कोई पढ़ता नहीं है। हाइकूकार को पहले एक संवेदनशील कवि होना चाहिए जो दुर्भाग्य से नहीं हो रहा।

प्र. वर्तमान साहित्य पर क्या कहना चाहेंगे?

उ. प्रेमचंद की कहानियों की तरह से कहानियों को कोई नहीं पढ़ता। जो कविता एवं कहानियां लिखी जा रही हैं, अधिकांश के बहुत बड़े पाठक नहीं है। जो पत्रिका छपती हैं उनकी संख्या आज 500 हो गयी है। इतने विशाल देश के अंदर 500 की संख्या क्या होती है। आप कल्पना करिये कि जब 1925 में प्रेमचंद का लघु–उपन्यास छपा था, तो उसकी पांच हजार प्रतियां छपी थीं।

प्र. इसका मुख्य कारण क्या है?

उ. जो हमारी सभ्यता आई है, मोबाइल आ गए हैं उसने सारी मानसिकता को बदल दिया है। अब हर आदमी अपने मोबाइल को लेकर बैठा हुआ है। वह– यह नहीं देखता कि पत्रिका में क्या लिखा हुआ है। जो मोबाईल कल्चर है इसने मनुष्य की पूरी सभ्यता को बदल दिया है। उस समय का अब वापिस लौटना संभव नहीं हैं। क्योंकि मोबाइल में ही इतनी डिस्कवरी हो रही है। आने वाले समय में और भी बढ़िया मोबाइल आएगा जिसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते और आप यंत्र

से नहीं लड़ सकते, आप विज्ञान से नहीं लड़ सकते, जो नये–नये आविष्कार कर रहा है।

प्र. हमें मुद्रित सामग्री यानि पत्र–पत्रिकाओं को जीवित रखना है, इसके लिए किस प्रकार के प्रयास करने होगें?

उ. उसके लिए मनुष्य के संबंधो के देखना पड़ेगा। विज्ञान ने मनुष्य के संबंधों को खत्म कर दिया है। घर में छह आदमी हैं, सभी चारो कोनों में अपने–अपने मोबाइल लेकर बैठे हुए हैं। वे आपस में बात ही नहीं कर रहे, आपस में उनके संबंध ही नहीं बन रहे। उन संबंधों को आपस में कैसे जोड़ा जाए, ये साईंस के माध्यम से देखना पड़ेगा। ये संबंध जब तक नहीं जुडेंगे, जब तक एक–दूसरे से प्रेम नहीं होगा, स्वस्थ समाज की कल्पना नहीं की जा सकती और तब तक पठन–पाठन का माहौल भी स्वस्थ नहीं हो सकता।

प्र. आपने प्रवासी साहित्य पर बहुत काम किया है, इसकी प्रेरणा आपको कैसे और कहाँ मिली और इसमें क्या विशेषताएं हैं?

उ. 1980 में प्रेमचंद की जनशताब्दी पर मैंने दिल्ली में एक संस्था बनाई थी 'प्रेमचंद जनशताब्दी राष्ट्रीय समिति'। मैं उसका महामंत्री था और जैनेंद्र कुमार उसके अध्यक्ष थे। मैंने मॉरीशस की 'हिंदी प्रचारिणी सभा' को लिखा कि आप शताब्दी वर्ष मनाइये, उन्होंने मेरी बात स्वीकार की। भारत सरकार ने उस समारोह के लिए मुझे और जैनेंद्र कुमार को मॉरीशस भेजा था और 1980 में मेरी मॉरीशस की पहली यात्रा हुई। वहाँ के माहौल को देखकर लौटते हुए मैंने प्रतिज्ञा की कि मैं प्रेमचंद के साथ प्रवासी साहित्य पर भी कोई काम करूंगा। उसका परिणाम यह हुआ कि 1986 में अभिमन्यु अनंत पर मेरी 150 पृष्ठ की किताब आई और जो केवल पत्र–व्यवहार से तैयार की गई है। उसके बाद तो क्रम लग गया और उसके बाद अभिमन्यु पर मेरी 4–5 किताबें आई। इसके माध्यम से सारे विश्व में जहाँ– जहाँ लेखक थे उनसे मैंने सम्पर्क किया। उस जमाने में सम्पर्क का रास्ता केवल पत्र ही हो सकता था। मैंने हजारों चिट्ठियां लिखी होंगी जिससे मेरे संबंध सारी दुनिया के अंदर बने। आज स्थिति यह है कि भारतवर्ष में जो प्रवासी साहित्य प्रमोट हुआ है, लोग यह स्वीकार करते है कि उसमें मेरा योगदान रहा है। इतनी पत्रिकाओं के प्रवासी विशेषांक मैंने निकलवाए हैं, मॉरीशस में 500 किताबें हिंदी में प्रकाशित हो चुकी हैं। इस साहित्य को हमें सुरक्षित रखने की जरूरत है और इन सारे प्रयासों से एक प्रवासी–विमर्श भी बन गया है। दलित विमर्श की तरह ही एक प्रवासी–विमर्श स्थापित हो चुका है और ये पूरा साहित्य हमारी हिंदी की मुख्य धारा का ही अंग है।

प्र. आपने एक संपादकीय में लिखा है प्रवासी साहित्य एक आंदोलन है, ये एक नया साहित्य–विमर्श है इसका आधार क्या है?

उ. छोटे–छोटे देशों के अंदर भी लोग हिंदी में लिखने लगे हैं। हिंदी में चाहे वो स्तरीय रचना नहीं है लेकिन कोशिश तो कर रहे हैं ना। उस कोशिश का परिणाम यह हुआ कि विदेशों में जहाँ–जहाँ हमारे भारतीय लोग हैं वह लिखकर के प्रकाशित भी हो रहे हैं और अपने देश में वो पत्रिकायें भी निकाल रहे हैं। एक तरह से ये धीरे–धीरे मूवमेंट बन गया। आज आस्ट्रेलिया में लिखा जा रहा है, अमेरिका में लिखा जा रहा है, जापान में भी लिखा जा रहा है। अब ऐसा देश नहीं है, जहाँ भारतीय लोग हों, हिंदी भाषी हों और हिंदी में नहीं लिखा जा रहा हो।

प्र. क्या प्रवासी साहित्य पूरी तरह से हिंदी भाषा पर केंद्रित है?

उ. ऐसा तो नहीं है, और भी भाषाएँ है जैसे तमिल, तेलुगू, मराठी आदि लोग उसमें अपना साहित्य लिख रहे हैं। हमारा औचित्य चूंकि हिंदी भाषा से है इसलिए हम हिंदी भाषा को लेकर चलते हैं। लेकिन ये प्रवासी साहित्य अन्य भाषाओं में भी लिखा जा रहा है। उससे हमारा संपर्क बहुत कम है, लेकिन मैं यह चाहता हूँ कि ये संपर्क हो, हमें मालूम हो कि उन भाषाओं में प्रवासी साहित्य कैसा लिखा जा रहा है? आपकी पत्रिका के माध्यम से यह कहना चाहूंगा कि इस दिशा में प्रयास होना चाहिए।

प्र. केंद्रीय हिंदी संस्थान में आप महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। समय के साथ केंद्रीय हिंदी संस्थान किस प्रकार अपनी कार्य शैली में बदलाव कर रहा है?

उ. हमारे दो प्रमुख काम हैं। एक भारत के अहिंदी क्षेत्रों के विद्यार्थियों को हिंदी पढ़ाते हैं। दूसरा विदेशों से आने वाली विद्यार्थियों को भी हिंदी पढ़ाने का कार्य किया जाता है। विदेशों से 26–30 देशों के करीब 100 विद्यार्थी विदेशों से आकर पढ़ते हैं। ये प्रमुख काम है। लेकिन इसके अतिरिक्त हमारी बोलियों के कोश तैयार करने की योजना चल रही है। करीब 16 कोश प्रकाशित हो गये हैं तथा 40 कोश तैयार होने वाले हैं। भारत की पूर्वोत्तर की बोलियों के साथ हिंदी के कोश तैयार हो रहे हैं। एक हमारी योजना चल रही है। 'हिंदी ज्ञान कोश' जिसके हम 16 वॉल्यूम निकाल रहे हैं। हिंदी के अलावा गणित, भौतिकी, रसायन आदि पर भी हिंदी में कोश तैयार हो रहे हैं। हिंदी भाषा के माध्यम से आप पूरी टेक्नोलॉजी, उसकी पारिभाषिक शब्दावली, उसकी व्याख्या, उसके चित्र, इन सारे कोशों में आप देख सकेंगे।

प्र. भाषा के तकनीकीकरण पर भी काम चल रहा है ताकि भाषा को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके?

उ. तकनीकी का जो मूल काम है उसको हम अभी इतना टेकअप नहीं कर पा रहे हैं। आधारभूत सामग्री को तैयार कर रहे हैं। अभी हमारे यहॉ से 7 पत्रिकाएँ निकलती हैं। हमने आगरा में एक सभागार तैयार किया है। हमको नागालैंड में, वहॉ की सरकार ने हिंदी भवन बनाने के लिए फ्री जमीन दी है, शिलांग में हमारा भवन बन रहा है, हैदराबाद में हमारा नक्शा तैयार हो गया है। श्रीलंका में हमारी शाखा चल रही है और मास्को में हम अपनी शाखा खोलने जा रहे हैं। ये सब कार्य पिछले तीन वर्षों में हुए हैं। हमारी कोशिश है कि केंद्रीय हिंदी संस्थान को अंतर्राष्ट्रीय हिंदी के शिक्षण का केंद्र बनाया जाए। अगर हम अपने काल में एनसीआरटी की तरह केंद्रीय हिंदी संस्थान को अंतर्राष्ट्रीय हिंदी शिक्षण का केंद्र बना सके, शोध क्लब बना सके, तो मैं समझता हूं कि यह हमारे जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

प्र. हिंदी के प्रचार–प्रसार में विश्व हिंदी सम्मेलनों की भूमिका किस प्रकार की रहती है?

उ. वर्तमान में विश्व हिंदी सम्मेलन तीन वर्ष में एक बार होता है। मैं सोचता हूं कि यह समय थोड़ा ज्यादा है। इसे एक या दो वर्ष में हम कर पाएं तो ज्यादा बेहतर होगा। सारे विश्व के हिंदी के लोग एकत्रित होते हैं, सब मिलते हैं, संवाद करते हैं। क्या लिखा जा रहा है, क्या पढ़ा जा रहा है, क्या नया साहित्य आ रहा है, इसकी जानकारी मिलती है। दूसरी बात यह है कि इससे हिंदी की गतिविधियां विकसित होती हैं। जैसे अब मॉरीशस में हो रहा है। उससे पूरा मॉरीशस पॉच दिन से एक हफ्ते तक हिंदीमय हो जायेगा। भोपाल जैसा बढ़िया कार्यक्रम अब तक किसी सम्मेलन में नहीं हुआ। इससे हिंदी का मान बढ़ता है। अगर हिंदी के लोग मिलते रहेंगे, संवाद करते रहेंगे, एक दूसरे की योजनाओं से परिचित होते रहेंगे तो इससे हिंदी का विकास ही होगा। अमेरिका, इंग्लैंड में बहुत सारे हिंदी के राइटर हैं,बहुत सी हिंदी की संस्थायें हैं, पत्रिकाएं भी वॉं निकल रही हैं।

प्र. दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन के मुख्य बिंदुओं के बारे में क्या कहना चाहेंगे?

उ. दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन का एक मुख्य बिंदु था, संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को स्थापित करना। जहॉ तक मुझे ज्ञात हुआ है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के रेडियो आदि के संचार के साधनों में हिदीं का उपयोग शुरू हो जाएगा। संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनने में बहुत बाधाएं है जिसे पार करना बहुत ही मुश्किल है। लेकिन यूनाइटेड नेशन के कम्यूनिकेशन के उपकरणों में हिंदी शामिल हो जाएगी, यह भी कम उपलब्धि नहीं है।

प्र. 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में मुख्य बिंदु क्या हैं?

उ. 'हिंदी विश्व और भारतीय संस्कृति' 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन का मुख्य विषय है। हिंदी विश्व और भारतीय संस्कृति के अंतर्गत सारे सत्रों का आयोजन किया जायेगा। हमारी कोशिश रहेगी कि जो सत्र हों,वो इस केंद्रीय विषय के आस–पास हों। एक व्यक्ति इसकी

अध्यक्षता करेगा और एक बीज भाषण के लिए वक्ता को बुलाया जाएगा। इस पर विचार होगा कि हिंदी भाषा के माध्यम से सारे विश्व के अंदर जो साहित्य की रचना हो रही है, उसमें भारतीय संस्कृति कहाँ तक विद्यमान है। जो भी भारतीय,विदेशों में जाता है, चाहे वो संस्कार, उसका आलोचक है या उसका प्रशंसक है, दोनों चीजें उसके मन में रहती हैं। जब विदेशों में जाकर वहां संस्कृति से टकराहट होती है, तो उसके भारतीय संस्कार उसकी कितनी मदद करते हैं या उसकी कितनी हानि करते हैं, ये समझ हमें साहित्य से विकसित होती है। मैं समझता हूँ कि पहली बार ऐसा विषय लिया गया है। इससे प्रवासी साहित्य की दुनिया को समझने में भी आसानी होगी।

प्र. केंद्र सरकार के कार्यालयों में हिंदी के कार्यान्वयन का दायित्व राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय का है। इसके लिए विभाग के कार्यों को किस प्रकार देखते हैं?

उ. हिंदी राजभाषा है, इसका मूल अर्थ यही हुआ कि राजभाषा विभाग हिंदी के विकास और प्रचार के लिए काम करता है। सरकार के केंद्रीय कार्यालयों में हिंदी में पत्राचार होना चाहिए, खासकर हिंदी प्रान्तों में।

प्र. राजभाषा विभाग के वार्षिक कार्यक्रमों में लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं और उन लक्ष्यों को ध्यान में रखकर केंद्रीय सरकार के कार्यालय काम करते हैं?

उ. जो आपके लक्ष्य है वे कितने फलीभूत हुए और कितने नहीं हुये, इसका नियमित सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। सभी नामपट्ट, लेटरहेड आदि हिंदी में होने चाहिए। दैनिक व्यवहार की चीजों में हिंदी का उपयोग किया जाना आवश्यक है। हस्ताक्षर हिंदी में करना चाहिए।

प्र. इन चुनौतियों से निपटने के लिए राजभाषा विभाग किस प्रकार का प्रयास कर सकता है?

उ. ये तो अनिवार्य बनाया जाए। केंद्रीय कार्यालयों में राजभाषा हिंदी का उपयोग होना चाहिए। अगर आप अनिवार्य नहीं करेंगे, इच्छा पर छोड़ देंगे तो कोई काम नहीं हो सकता। टर्की में जब कमालपाशा प्रधानमंत्री हुए तो उन्होने पूछा हमारी जो भाषा है इसे कितने दिन लगेंगे राजभाषा बनने में, तो कहा गया कि सर 10–15 साल लगेंगे। उन्होंने कहा कि आप मान लो कि कल 15 साल पूरे हो गए और आदेश निकाल दिया कि कल से टर्की की यह भाषा होगी और टर्की की राजभाषा हो गई।

प्र. क्या भारतीय परिदृश्य में ये संभव है?

उ. यह संभव नहीं है। हमारी डेमोक्रेसी अगर कहीं संकट पैदा करती है तो उसका रास्ता निकाला जाना चाहिए। हमारी डेमोक्रेसी का मतलब ये नहीं है कि अराजकता हो जाए, हमारी डेमोक्रेसी का मलतब ये नहीं होना चाहिए कि कानून का पालन नहीं होना चाहिए। हमारी डेमोक्रेसी का मतलब ये नहीं होना चाहिए कि देश के टुकड़े कर दिये जाएं। हमारी डेमोक्रेसी के ये अर्थ कतई नहीं होना चाहिए। हमारा मूल लक्ष्य यह है कि देश को संगठित रहना है। देश की भाषा जो कानून के द्वारा स्वीकृत है, आप उसका पालन नहीं करेंगे तो देश की व्यवस्था कैसी होगी, देश का प्रशासन कैसे चलेगा। अगर मैं स्वयं कानून का उल्लघंन करूंगा तो देश के प्रति क्या कर रहा हूं। इसके कारण मुझे लगता है आपके विभाग को थोड़ी सी कठोरता करनी पड़ेगी।

प्र. विश्व हिंदी सम्मेलन में राजभाषा विभाग की भूमिका किस प्रकार की हो सकती है?

उ.हिंदी की वर्तमान स्थिति क्या है इसके लिए आपको वहाँ जाकर एक अपनी प्रदर्शनी लगानी चाहिए। इससे लोगों को ज्ञात होगा कि भारत में हिंदी की वर्तमान स्थिति कैसी है। दूसरा यह है कि जितने आपके प्रकाशन है उन सबकी प्रदर्शनी लगानी चाहिए। जिनको आप पुरस्कृत करते हैं उनको वहां पर ले जाना चाहिए और बताना चाहिए कि उनको क्यों पुरस्कृत किया है। चौथा एक सत्र आपके पास, आपके लिए होना चाहिए उसमें केवल आपके विभाग के क्या लक्ष्य थे, कितने पूरे हुए और कितने पूरे होने चाहिए थे,इस पर विचार–विमर्श होना चाहिए। मैं समझता हूं इस तरह की सोच पर आपके विभाग को निश्चित रूप से विचार करना चाहिए।

बहुत बहुत धन्यवाद सर

साक्षात्कारकर्ता: डॉ. धनेश द्विवेदी

वैश्विक भाषा के संदर्भ में राजभाषा हिंदी

–प्रो. (डॉ.) नन्दलाल कल्ला

मनुष्य के उच्चारण अवयवों से उच्चरित ध्वनि प्रतीकों की सतत परिवर्तनशील, अध्ययन–विश्लेषणीय, व्याकरण सम्मत ध्वनि प्रतीकों की यादृच्छिक व्यवस्था का ही नाम 'भाषा' है। भाषा, दैवीय उत्पत्ति न हो कर मनुष्य की पारस्परिक वैचारिक आदान–प्रदान की अनिवार्य आवश्यकता की वैखरी परिणति है। भाषा सामाजिक धरोहर है। मनुष्य की सांस्कृतिक प्रज्ञा का ध्वन्यार्थ मूलक वरदान ही भाषा है। वैश्विक भाषा परिवार में भाषा विज्ञानियों के मतानुसार भारत–यूरोपीय परिवार का मौलिक महत्त्व है। इसी भारत–यूरोपीय भाषा परिवार की एक शाखा भारतीय आर्य भाषा है, जिसका सबसे पुरातन स्वरूप संस्कृत में भली–भाँति दृष्टव्य है। इसी संस्कृत के वैदिक हिमालय से उद्भावित लौकिक संस्कृत अग्रेषित हुई और पालि, प्राकृत, अपभ्रंश की वक्रिल विथिकाओं से संचरित होती हुई अन्ततः हिंदी के महार्णव में सन्निहित हुई। हिंदी–महासागर में पूर्ववर्ती अपभ्रंश, प्राकृत और पालिजन भावनाओं को काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए अभिन्न भाव से समाहित हो गई। इस प्रकार हिंदी भाषा का अवतरण हुआ। विगत सहस्त्राब्दि काल से हिंदी भाषा की विकास यात्रा अजस्त्र भाव से गतिशील है। यही यशस्वी हिंदी हमारे साहित्येतिहास के आदिकाल में महाकवि चंदबरदाई के रासो की छंदस, सिद्धों की 'संध्या', नाथों की हठयौगिक षट्चक्री मुद्रा, विद्यापति की गीत–पद शैली की भाषा बनी। मध्यकाल के स्वर्ण कालीन भक्तिकाल में कबीर की अवधूती अक्खड़–फक्कड़ प्रेम भावना एवं साधनात्मक रहस्यवाद की पंचमेल खिचड़ी बनी, सूफियों के प्रेमासव के प्याले में इश्क–ए–मजाजी से इश्क–ए–हकीकी बनकर सांप्रदायिक–सांस्कृतिक एकता का महासेतू रूप में प्रकट हुई तो उत्तर मध्यकाल में दरबारी संस्कृति की पोषक शृंगार रस सम्वलित होकर काव्यशास्त्र के रीतिबद्ध आचार्यों की भावाभिव्यक्ति का सशस्त माध्यम बन कर प्रस्तुत हुई। वर्ष 1857 ई. के प्रथम सशस्त्र स्वतंत्रता संग्राम में जन आक्रोश का शंखनाद तथा उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में घटित वाँ धार्मिक–सामाजिक पुनर्जागरण आंदोलन की चेतना की मुखर लोकवाणी भी यही हिंदी थी। कहने का तात्पर्य यह है कि हिंदी ने चंद के छंदों की उर्जस्विता, कबीर की अनासक्ति, जायसी की प्रेमानुभूति, तुलसी की लोकमर्यादा, सूर का लोकानुरंजन, मीरा की तन्मयता, बिहारी की बहुज्ञता, केशव का आचार्यत्व, घनानंद की प्रेमपीर को व्यक्त किया तो स्वाधीनता संग्राम काल में दयानंद सरस्वती, विवेकानंद, महात्मा गाँधी प्रभृति राष्ट्रनायकों के विचारों की अभिव्यक्ति के संप्रेषण का सशक्त जयघोष का माध्यम बनी। इसी हिंदी ने भारतेन्दु के जन जागरण का संदेश दिया, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की उर्वर लेखनी ने खडी बोली हिंदी का प्रथम महाकाव्य रचा, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने इसी हिंदी के माध्यम से समाज की चिरकालीन उपेक्षित, तिरस्कृत एवं विस्मृत नारी चरित्रों को उद्घाटित किया। छायावादी काव्य सृष्टि के 'मनु' जयशंकर प्रसाद के काव्य की मधुरता,

संचरणशील कवि सुमित्रानन्दन पंत की सौन्दर्य चेतना, वेदना और करूणा की मूर्ति महादेवी वर्मा की रहस्य भावना तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की उर्जस्वी अभिव्यक्ति इसी हिंदी के माध्यम से उद्घाटित हुई। यही हिंदी अपने गद्य रूप में देवकीनंदन खत्री की औपन्यासिक सृष्टि का तिलस्म, गोपालराम गहमरी का जासूसी तंत्र, उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद का त्रासद यथार्थवाद, जैनेन्द्र का मनोविज्ञान, रांगेय राघव एवं रेणु की आँचलिकता, वृंदावनलाल वर्मा की ऐतिहासिकता, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की सांस्कृतिक चेतना, श्रीलाल शुक्ल का तेजाबी व्यंग्य, आचार्य रामचंद्र शुक्ल की लोक मंगल की साधनावस्था, विद्यानिवास मिश्र की लालित्य चेतना और लोकतंत्र के चतुर्थस्तम्भ पत्रकारिता की अचूक प्रहारी प्रभावी भाषा भी यही हिंदी बनी है। युगानुरूप परिवर्तनशीलता के शाश्वत धर्म का अनुशीलन करने वाली लोकगृहीत भाषा आज हमारे संविधान की आठवीं अनुसूची में राजभाषा और हमारे विशाल देश की अस्सी प्रतिशत जनता द्व ारा शिरोधार्य होकर जनभाषा के रूप में समादृत है। निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि हिंदी हमारी सांस्कृतिक अस्मिता का व्यक्त अभिधान है और अर्थ व मर्म में अभिव्यंजन भी है। भारत माता के भव्य भाल की शोभित बिन्दी हिंदी राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक है। राष्ट्र भाषा हिंदी का भाव चित्र सृजित किया जाए तो वह साक्षात् 'गणेश जी' के रूप में ही दर्शित होगी। आज हिंदी गणेश जी की तरह 'महाकाय' है। भारत की समस्त प्रादेशिक ही नहीं बल्कि अनेक यूरोपीय एवं अरबी, तुर्की–पश्तो शब्दावली को सुपाच्य करने वाली 'महोदर' भी है। हिंदी की मूल प्रकृति अंग्रेजी की भाँति उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी तथा शोषक प्रवृत्ति न होकर औदार्य पूर्व विस्तृत 'चौड़े ललाट' से शोभित है। वैश्विक धरातल पर होने वाले बाजारवाद, उपभोक्तावाद तथा भूमण्डलीकरण जन्य अपसंस्कृति के संदर्भ में 'खुले विशाल कर्ण पटल' से युक्त हिंदी तद्विषयक समस्त चुनौतियों को सुनती है। हिंदी उत्तर, पश्चिम, पूर्व, दक्षिण चारों दिशाओं में अपने सुदृढ़ लोक आस्था की भूमि पर सशक्त चरण स्थापित किये हुए है। हिंदी का जनाधार सनातन श्रद्धा से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि विगत एक सहस्त्राब्दि में न जाने कितनी राजनैतिक, सांप्रदायिक, साम्राज्यवादी चुनौतियों के प्रचार झंझावात भी हिंदी की गरिमा को धूमिल नहीं कर सके।

आज हिंदी का क्षेत्रफल कश्मीर से कन्याकुमारी या राजस्थान से त्रिपुरा, मेघालय और अरूणांचल प्रदेश तक ही सीमित नहीं है बल्कि उसका प्रभाव क्षेत्र वैश्विक शिखर को स्पर्श कर रहा है। यह हिंदी की सामर्थ्य और शक्ति का प्रभाव है। अनेक विदेशी विद्वान वारान्निकोव, चैली शैव, जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, कामिल बुल्के, डॉ. वूलर, कीथ, वाँ गार्सा द तासी प्रभृति न जाने कितने लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान हैं, जो हिंदी सेवी के रूप में अपनी अक्षुण्ण छवि निर्मित किये हुए हैं। आज बाजार की सर्वाधिक लोकगृहीत भाषा के रूप में हिंदी अपना मौलिक स्थान बनाये हुए है। इसलिए आज हम हिंदी को मात्र राष्ट्रीय भाषा ही नहीं बल्कि उसे वैश्विक भाषा का भी सम्मान प्रदान करें तो अनुचित नहीं होगा। यह कहने में कोई संशय नहीं कि अब हिंदी यूरोपीय महाद्वीप से लेकर अमेरिका तक एवं सम्पूर्ण दक्षिण पूर्व एशिया के सभी देशों में हिंदी की प्रायोगिक लोकप्रियता निरन्तर विस्तारित होती जा रही है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी लिखते हैं–''हिंदी भाषा के रूप में खड़ी बोली के विकास और फिर हिंदी भी वैश्विक छवि का पल्लवन भाषा की स्वाभाविक गत्यात्मक प्रकृति का ही परिणाम है। मौजूदा सदी में हिंदी ने जिस श्रम और सौष्ठव के साथ राजभाषा, सम्पर्क भाषा और विश्व भाषा के रूप में अपनी अस्मिता का विस्तार किया है वह

स्तुत्य है।''[1]

हिंदी की महत्ता को विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने रेखांकित करते हुए कहा था–''आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है। जिसका एक–एक दल, एक–एक प्रान्तीय भाषा और उसका साहित्य संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रान्तीय बोलियाँ जिसमें सुन्दर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने–अपने घर में रानी बन कर रहे।. ..... आधुनिक भाषाओं के हार के मध्य मणि हिंदी भारत भारती होकर विराजती रहे।''

संघर्षशील हिंदी का इतिहास इस तथ्य का साक्षी रहा है कि उसे मध्यकाल में अरबी और तुर्की से संघर्ष करना पड़ा। उत्तर मध्यकाल तक आते–आते उर्दू उसकी प्रतिद्वन्द्वी बन गई फिर अंग्रेजी ने उसके अस्तित्व को चुनौती दी। लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति में हिंदी की प्रतिष्ठा शून्य कर दी गई। बाद में हिंदी का न केवल उर्दू व अंग्रेजी बल्कि हिन्दुस्तानी से भी संघर्ष हुआ। हिन्दुस्तानी के पक्ष में महात्मा गाँधी एवं उनके अनुयायी थे तो हिंदी के पक्ष में राजर्षि पुरूषोत्तमदास टण्डन एवं सेठ गोविन्ददास आदि थे। अन्ततोगत्वा हिंदी को राजभाषा के रूप में संविधान सभा ने स्वीकार किया।

हिंदी के वैश्विक रूप के विषय में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी हिंदी की महत्ता तथा उससे अपेक्षाओं के संदर्भ में ठीक ही लिखते हैं–''भारतवर्ष के पड़ोसी देशों में आजकल हिंदी साहित्य पढ़ने और समझने की तीव्र लालसा जाग्रत हुई है। चीन, मलय, सुमात्रा, जावा, समस्त एशिया से माँग आ रही है। एशिया के देश अब अंग्रेजी पुस्तकों में प्राप्त सूचनाओं से संतुष्ट नहीं हैं। वे देशी दृष्टि से देशी भाषा में लिखा हुआ साहित्य खोजने लगे हैं। आगे यह जिज्ञासा और भी तीव्र होगी।''[2]

हिंदी के वैश्विक दायरे के संदर्भ में डॉ. सुरेश माहेश्वरी लिखते हैं–''आज विश्व में भारत ने अपनी पहचान बना ली है। भारत एक स्वतंत्र जनतांत्रिक राष्ट्र है। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों का मुखिया भारत है। सार्क परिषद का प्रणेता और संस्कृति की दृष्टि से भी वह विश्व का पथप्रदर्शक और अगुआ है। ऐसे भारत की भाषा हिंदी है। इसलिए यदि भारत से निकटता बनानी हो तो हमें हिंदी के अध्ययन–अध्यापन को महत्त्व देना चाहिए, ऐसा विश्व के सभी राष्ट्रों ने सोचा। दूसरे भारतवंशी लोग रोजगार हेतु पश्चिम के राष्ट्रों में गए हैं और पूरब के राष्ट्रों में भाईचारा, स्नेह, संस्कृति को लेकर अपना स्थान बनाया। इस कारण से भी हिंदी का अपना वैश्विक दायरा निर्माण हुआ।''[3]

हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा के लिए परतंत्र भारत के अंग्रेज शासकों की भी भूमिका रही है। उन्होंने अपने आर्थिक हितों को साधने के लिए अधीनस्थ उपनिवेश सूरीनाम, फिजी, मॉरीशस, त्रिनिडाड आदि जगहों पर बिहार, उत्तरप्रदेश के सैकड़ों श्रमिकों को वहाँ ले गये। वे सभी भारतवासी अपने साथ तुलसीदास का रामचरितमानस और भारतीय संस्कृति की परम्परा को जीवन धन मानकर ले गये। यही कारण है कि आज भी इन देशों को 'लघु भारत' कहा जाता है। धीरे–धीरे वैश्वीकरण के कारण आज सभी यूरोपीय व अफ्रीकी देशों के विश्वविद्यालयों व बाजार में हिंदी की लोकप्रियता एक अनिवार्य आवश्यकता बन गई। आज विश्व के करीब एक सौ बीस देशों में हिंदी का पठन–पाठन होता है। प्रभूत मात्र में विदेशों में साहित्य सृजन भी हो रहा है। भारत सरकार भी प्रवासी साहित्यकारों की हिंदी सेवा के लिए उत्कृष्ट सम्मान एवं पुरस्कार प्रदान करती है। साहित्यिक पत्र–पत्रिकाओं का भी प्रचुर प्रकाशन विदेशों में हिंदी

की अपार लोकप्रियता का प्रमाण है।

यह भी स्थापित सत्य है कि बाजारवाद के कारण हिंदी का एक रूप 'हिंग्लिश' बन कर उभरा है। इंटरनेट एवं मोबाइल कल्चर की अतिशयता ने हिंदी के पारस्परिक रूप को किंचित विकृत भी किया है तो दूसरी ओर उसकी व्यापकता भी बढ़ाई है, इसमें कोई संदेह नहीं किया जा सकता। आज भारत ही नहीं विश्व के किसी भी कोने में जाएं तो हिंदी की लोकप्रियता स्वतः परिलक्षित हो जायेगी। डॉ. सुकुमार भंडारे लिखते हैं–''हिंदी विश्व में तीनों सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में परिगणित है। डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल के वर्ष 2005 के 'भाषा शोध रिपोर्ट' के अनुसार विश्व में हिंदी जानने वालों की संख्या 1,10,29,96,447 है।''[4]

सारांश रूप में डॉ. अर्जुन चव्हाण के इन शब्दों का उल्लेख समीचीन होगा– ''संगीत, फिल्म, रेडियो और टेलीविजन के विविध चैनलों के जरिए हिंदी ने अपनी भौगोलिक सारी सीमाओं को तोड़ दिया। उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण के माहौल ने दुनिया के विभिन्न देशों को हिंदी को अपनाने के लिए विवश कर दिया। भूमंडलीकरण के नाम पर भूमंडलीकरण में बदलती जा रही दुनिया के सारे सौदागरों को भारत जैसे विशाल देश में पहुँच कर व्यावसायिक सफलता अर्जित करने हेतु हिंदी को अपनाने के लिए मजबूर बना दिया। परिणाम स्वरूप वैश्विक संदर्भ में हिंदी अपनी शक्ति का परिचय देती है।''[5]

जुलाई 2007 न्यूयार्क में सम्पन्न आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की सातवीं भाषा के रूप में मान्यता दिलाने हेतु प्रस्ताव भी पारित हुआ। सम्मानीय पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने साधारण सभा में पहली बार हिंदी में सम्बोधित किया। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी भी हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा के लिए प्रतिबद्ध प्रतीत होते हैं।

हिंदी की जीवन यात्रा को 'लोक' ने ही संरक्षित किया। वह शासन तंत्र द्वारा भले ही समादृत नहीं हुई लेकिन कोटि–कोटि जन आस्था ने अपने हृदय सिंहासन पर उसे प्रतिष्ठित किया। वह अपनी अजातशत्रु प्रवृत्ति के कारण भी लोक कंठ का दैदीप्यमान हार बनी। कवियों, लेखकों सुधारकों, राजनेताओं व राष्ट्रनायकों की वाणी का शृंगार बनी। उसमें समन्वय की विराट चेष्टा है, सम्प्रदान की अपूर्व क्षमता, समयानुकूल परिवर्तन की अद्भुत दक्षता है। वह उपनिवेश की शोषक भाषा नहीं बल्कि जनता जनादेश की सहज अभिव्यक्ति है। उसने किसी अन्य भाषा को शोषित नहीं किया बल्कि उसे पोषित कर प्रांजल की बनाया। हिंदी समन्वय, सौहार्द, स्नेह तथा करूणा की भाषा है, इसीलिए वह अतुल्य है, ग्रहणीय है और वंदनीय भी है।

वाँ

संदर्भ–

1. डॉ. सुरेश माहेश्वरी (सम्पा.) : हिंदी राष्ट्रभाषा से विश्व भाषा की ओर (भूमिका)
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी : विश्व भाषा हिंदी संस्कृति और समाज, पृ. 51
3. डॉ. सुरेश माहेश्वरी (सम्पा.) : हिंदी राष्ट्रभाषा से विश्व भाषा की ओर, पृ. 100
4. डॉ. सुकुमार भंडारे : वैश्वीकरण के युग में हिंदी की स्थिति और गति (लेख) डॉ. देवीदास इंगले (सम्पा.) भाषा तथा भाषा विज्ञान के अंग, पृ. 146
5. डॉ. अर्जुन चव्हाण : विश्व मंच पर हिंदी : शक्ति और सीमाओं के विविध आयाम (लेख) डॉ.रणजीत जाधव (सम्पा.) डॉ. अंवादास देशमुख अभिनंदन ग्रंथ, पृ. 236

मातोश्री, चौका,
चांदपोल, जोधपुर–342001

हिंदी विश्वभाषा की ओर

—डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के पूर्व विश्व संचार की गति अत्यन्त धीमी थी, विश्वसंचार के केन्द्र में राजनैतिक आक्रमण, संधियाँ और साम्राज्य विस्तार एवं धार्मिक व आर्थिक आदान–प्रदान था। किन्तु संचार साधनों के अपरिमित विकास के फलस्वरूप उत्पन्न वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने जनसामान्य के बीच वैश्विक संचार को संभव बनाया है। इन परिस्थितियों में भाषाओं का अंतरण तेजी से संभव हुआ। इससे कुछ क्षेत्रीय भाषाओं पर संकट के बादल मंडराने लगे तो अंग्रेजी जैसी भाषाओं का तेजी से विस्तार हुआ। स्वाभाविक ही दुनिया के स्तर पर संवाद के लिए एक समान्य भाषा की जरूरत थी। इस परिवेश में दुनिया के बड़ी आबादी और विस्तार वाले देशों के लोगों की भाषा को फलने–फूलने का अवसर मिला। जर्मनी, जापान और चीन जैसे देशों की राष्ट्रवादी चेतना के फलस्वरूप उनका अपने भाषा प्रयोग और संरक्षण की नीति ने जहाँ उन्हें अपने विकासवादी प्रयत्नों के बावजूद उनकी भाषा को विस्तारवादी होने से बचाया, वहीं उन्हें भी अनुभव होने लगा है कि आज के वैश्वीकरण के युग में भाषा संबंधी दीवारों को तोड़ते हुए उन्हें भी विश्व संचार की ओर अग्रसर होना होगा। चीन, जापान से इस आशय के समाचार और विचार समीक्षाएँ प्रायः मिलने लगी हैं।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया में कुछ विद्वानों ने विश्व संचार की कृत्रिम भाषा को गढ़ने का प्रयत्न किया है। 'ग्लोबिस' (Globish) जैसी भाषा की चर्चा इन्हीं प्रसंगों में खड़ी हुई है। दुनिया की भाषाओं के शब्द और स्वरूप के समन्वय के आधार पर अन्तरताना (इन्टरनेट) के अनुरूप संचार भाषा की फलश्रुति है, — 'ग्लोबिस'। किन्तु बिडम्बना है कि भाषा कुछ व्यक्तियों के प्रयत्नों के आधार पर गढ़ी ही नहीं जा सकती। भाषा तो जनता की जुबान पर गढ़ी जाती है। भाषा के विकास की असली ताकत उनके स्वाभाविक प्रयोगकर्त्ताओं पर निर्भर है।

अब यह प्रश्न स्वाभाविक है कि क्या हिंदी विश्वभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हो सकती है? इस प्राक्कल्पना की परीक्षा निम्न तर्कों के आधार पर की जा सकती है—

वाँ
विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

कोई भी भाषा विश्वभाषा कहलाने की अधिकारिणी निम्न कारणों से हो सकती है। प्रथम, उसके बोलने वालों की संख्या में व्यापकता है, जो भाषा दुनिया के अधिकांश देशों में संवाद का माध्यम बने और उनके द्वारा बेहिचक प्रयोग हो। दूसरे, जिस भाषा में वैश्विक भाव संवेदन की अभिव्यक्ति हो एवं जो ज्ञान–विज्ञान के विविध आयामों को अभिव्यक्त करने में समर्थ हो। इसके अतिरिक्त जो भाषा अपने समृद्ध साहित्य से अपनी भौगोलिक सीमा का अतिक्रमण करते हुए अन्य भाषा–भाषियों के भाव–संवेदना के साथ सेतु बन सके अर्थात व्यापकता के स्तर पर जिसका साहित्य अन्य भाषाओं में पर्याप्त अनूदित हो और दूसरी भाषा के साहित्य को स्वीकार कर सके। अन्य कारणों में एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी है कि जिस भाषा–संस्कृति में दुनिया के लोग रुचि लें और विस्तारवादी न होकर भी एक सामीप्य का बोध विकसित कर सके। अब इस

प्राक्कल्पना की परीक्षा की जाए।

हिंदी की व्यापकता

वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार भारत की पूरी आबादी 83,85,83,988 थी और 1652 भाषाओं को बोलने वाले देश में हिंदी को अपनी भाषा स्वीकार करने वालों की संख्या 33,72,72,114 थी। बोलने और समझने वाले जनसामान्य को ध्यान में रखे तो हिंदी और उर्दू में कोई खास फर्क नहीं है। उर्दू को भी हिंदी की एक शैली माने तो 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में उर्दू बोलने वालों की संख्या 4,34,06,932 थी। इस प्रकार आज से पूर्व हिंदी एवं उर्दू बोलने वालों की कुल संख्या 38,06,79,046 थी। जो भारत की कुल आबादी की 45 प्रतिशत थी, जबकि इसी समय अंग्रेजी बोलने वालों की दुनिया में कुल संख्या 33,70,00,000 थी। भारत व पाकिस्तान के अलावा हिंदी एवं उर्दू बोलने वालों की एक बड़ी संख्या नेपाल, बंग्लादेश, मॉरीशस, फिजी, गयाना, सूरीनाम, त्रिनीडाड एवं टुबैगो, भूटान, म्यांमार, बहरीन, कुवैत, ओमान, कतार, सउदी अरब, श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में है और इधर के कुछ वर्षों में अमेरिका और यूरोप के देशों में भी हिंदी भाषा–भाषियों की संख्या बढ़ी है। यह बात किसी से छिपी नहीं है कि नासा और सिलिकन वैली में हिंदी भाषा– भाषियों की बड़ी संख्या मौजूद है। निश्चित ही दुनिया के विशालतम भू–भाग में बिखरी यह बड़ी संख्या हिंदी को विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की पूर्वापेक्षा को भलीभांति पूर्ण करती है।

हिंदी साहित्य का विशाल वैश्विक अनुवाद

आज हिंदी के रचनासंसार की धमक, हिंदी की भाषागत सीमा का उल्लंघन कर दुनिया के अनेक भाषाओं के साहित्य में पहुँच चुकी है। अज्ञेय, अमरकांत, काशीनाथ सिंह, कैलाश बाजपेयी, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', प्रेमचन्द, बेढ़ब बनारसी, निराला, शमशेर बहादुर सिंह, सुभद्रा कुमारी चौहान, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह 'दिनकर', मोहन राकेश, राही मासूम रजा, निर्मल वर्मा, भीष्म साहनी, मन्नू भंडारी, जैनेन्द्र कुमार जैसे अनेक साहित्यकारों की रचनाओं का जापानी भाषा में अनुवाद हो चुका है।[1] कबीर, सूर, तुलसी, मीरा बाई की रचनाओं का रूसी भाषा में अनुवाद हो चुका है। प्रेमचन्द, वृन्दावन लाल वर्मा, यशपाल, जैनेन्द्र कुमार, भगवती चरण वर्मा, इलाचन्द्र जोशी, अमृतलाल नागर, अश्क, रेणु, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, विष्णु प्रभाकर, आदि कथाकारों एवं निराला पंत, दिनकर, बच्चन, केदारनाथ अग्रवाल, मुक्तिबोध, अज्ञेय, शमशेर बहादुर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, नागार्जुन, प्रभृत कवियों की रचनाओं का रूसी भाषा में अनुवाद हो चुका है। वारान्निकोव, बेकायेवा, ई0पी0 चेलीशेव, बालिन, गफरोवा, गुनामोवा, सेरेब्रयान्नी आदि ऐसे उल्लेखनीय रूसी नाम हैं, जिन्होंने अपने अनुवाद से हिंदी और रूसी भाषा के बीच सेतु स्थापित किया है।[2] तुलसीकृत रामचरित मानस और प्रेमचन्द की अनेक रचनाओं का चीनी भाषा में अनुवाद हो चुका है। डॉ0 (श्रीमती) माग्रेट गात्स्लाफ ने यशपाल, प्रेमचन्द एवं कृश्न चन्दर की कहानियों एवं प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' एवं भीष्म साहनी के 'बसंती' का जर्मन में अनुवाद किया है। इसी प्रकार सेलान्दवीर ने सूरदास के पदों का 'सूरदास कृष्णायन' शीर्षक से अनुवाद किया है। वेनिस विश्वविद्यालय के डॉ. मारियोल्ला आफरी दी ने 'गोदान' तथा 'आत्मजयी' (कुँवर नारायण) का तथा चेलीलिया कोस्सियो ने रेणु के 'मैला आँचल' का इतालवी भाषा में अनुवाद किया है। इंग्लैण्ड के मैकग्रेगर ने नंददास के पदों का अनुवाद किया है। नीदरलैण्ड के प्रो0 वेगेल ने प्रेमचन्द की कहानियों का डच भाषा में अनुवाद किया है। फ्रांस की श्रीमती चसैउचली ने 'रामचरित मानस',

'ढोला मारू रा दूहा' तथा कबीर की रचनाओं का फ्रेंच भाषा में अनुवाद किया है। प्रेमचन्द, प्रसाद, जैनेन्द्र, कृश्न चंदर, फणीश्वर नाथ रेणु, ऊषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी आदि हिंदी रचनाकारों की रचनाओं का पोलिश भाषा में अनुवाद कर पोलैण्ड में प्रकाशन हो चुका है। अनुवाद की परंपरा के विस्तार से विश्व साहित्य में हिंदी को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है और हिंदी एक विश्वभाषा की संभावना साकार हुई है।

आज विश्व के स्तर पर यह अनुभव किया जा रहा है कि दुनिया के अधिकांश देशों में परस्पर संचार के अभूतपूर्व विस्तार से अधिकांश देशों की भाषाओं की आधुनिक साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियाँ एक–सी हैं, उनमें थोड़ा–बहुत कालावधि या समय का अंतर भर है। आधुनिक कालीन साहित्य की प्रवृत्तियाँ विश्व के स्तर पर लगभग एक–सी प्रतीत होने लगी हैं। हिंदी दुनिया के अन्य भाषाओं के साहित्य के साथ कदम–से–कदम मिलाते हुए आगे बढ़ रही है। हिंदी की साहित्य निधियों का न केवल दुनिया की अधिकांश भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और निरंतर हो रहा है बल्कि संसार की अन्य भाषाओं के साहित्य का हिंदी में भी पर्याप्त अनुवाद हो रहा है।

हिंदी की भाषिक सहिष्णुता अद्वितीय है

वैश्वीकरण के कारण परंपरागत राष्ट्रीयता की दीवारें खण्डित हो चुकी हैं। विभिन्न देश–समाज की संस्कृतियों के अन्तरावलम्बन, समझदारी और आदान–प्रदान की प्रक्रिया तीव्र हुई है। परंपरागत समाज के संक्रमण की पीड़ा को भी इसी प्रक्रिया के अंतर्गत समझा जा सकता है। जो समाज इन नए बदलावों को समझने, परखने और उसमें अपने को समायोजित करने की कोशिश में होगा, वही समाज सांस्कृतिक अभ्युदय का स्वप्न देख सकता है। भाषा के संदर्भ में एक बात महत्त्वपूर्ण है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया के पूर्व सांस्कृतिक साझेदारी में एक भाषा के शब्द जब दूसरे भाषा–भाषी क्षेत्र में पहुँचते थे तो वे शब्द थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ नयी भाषा की प्रवृत्तियों के अनुसार ढल जाते थे। उदाहरणार्थ अंग्रेजी का लैण्टर्न, हॉस्पिटल, अरिस्टोटल, एलक्जेन्डर आदि शब्द हिंदी में आकर क्रमशः लालटेन, अस्पताल, अरस्तू व सिकन्दर आदि हो गया किन्तु वैश्वीकरण की प्रक्रिया के उपरान्त संचार की गति इतनी तीव्र हो गयी कि दूसरे समाज और भाषा से आया हुआ शब्द, ग्रहीता समाज में यथावत् बिना किसी परिवर्तन के ग्रहण हो जाता है, उसमें किसी भी प्रकार की ग्रहीता भाषा की प्रवृत्तियों के अनुसार परिवर्तन आए कि उसके पूर्व ही वह प्रचलन में आ जाता है। यही कारण है कि आज अन्य भाषा के बहुत–से शब्द बिना परिवर्तन के हिंदी में स्वीकार कर लिए गए और उसी प्रभाव में 'ऑ' जैसी ध्वनि ने भी हिंदी में अपना स्थान बना लिया है।

विभिन्न अनुसंधान या किसी नवाचार के साथ, किसी खबर अथवा विज्ञापन के साथ प्रसारित अंग्रेजी या अन्य भाषा के शब्द बड़ी तेजी से दुनिया में फैलते हैं। तीव्र संचार की प्रक्रिया ने आज के वैश्वीकरण के दौर में सार्वदेशिक शब्दों की संभावना को बढ़ा दिया है। इन परिस्थितियों में वही भाषा और उसके शब्द विस्तार पा रहे हैं, जिसके बोलने और समझने वाले दुनिया में फैले हैं और उनकी संख्या सर्वाधिक है। यही कारण है कि विश्व स्तर पर एक भाषा की आवश्यकता और संभावना जैसी अवधारणा को बल मिल रहा है। ध्यान देने योग्य तथ्य है कि यह एकात्मकता प्रवृतिगत नहीं है अपितु शब्दगत है और व्याकरणिक कोटियों के विघटन के फलस्वरूप है। इसका वास्तविक उदाहरण मोबाइल के 'एस एम एस' की भाषा के रूप में देखा जा सकता है जहाँ लिपि, शब्द और वाक्य रचना किसी एक भाषा के व्याकरण में बंधे नहीं होते हैं वरन् वे संकरीकरण की प्रक्रिया के प्रतिफलन होते हैं। संकरीकरण की इस

प्रक्रिया में यदि हिंदी अपनी भाषिक प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर उसे आत्मसात करती है तो निश्चित ही हिंदी को और विस्तार मिलेगा। अपनी अस्मिता को सुरक्षित रखते हुए पूरे लोच के साथ सहिष्णुता की भंगिमा हिंदी की स्वाभाविक स्थिति है, क्योंकि हिंदी एक लोकभाषा है और अपनी विकास यात्रा में इसने उस स्वभाव को प्रमाणित किया है। यही कारण है कि हिंदी ने ज़, फ, ऑ जैसी अन्य भाषा की बहुत–सी ध्वनियों को स्वीकार कर लिया है।

भारतीय लोगों का संचरण आज वैश्विक स्तर पर है। भारत की प्राचीन हड़प्पा सभ्यता अपने समकालीन सभ्यताओं में संचार की स्थिति में रही है। इस बात के प्रमाण मिले हैं। प्राचीन भारत यवनों के साथ रिश्ते–नातों के डोर में बंधे थे। दज़ला–फरात से लेकर मध्यकाल में इरान इराक के संबंध इसके वैश्विक संबंधों का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। भारत किसी–न–किसी रूप में दुनिया के शेष भागों से जुड़ा रहा है। भारत की सहिष्णु परंपरा सामाजिक–सांस्कृतिक और भाषिक स्तरों पर अपने समवर्ती भाषा–संस्कृति को सम्मानजनक स्थान देते हुए अपनी विकास यात्रा पूरी करती है।

हिंदी एक लोकतांत्रिक भाषा है

वैश्वीकरण के कारण 'विश्वभाषा' का पर्याय विकसित हुआ है। ये दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं। विश्वभाषा, विश्वकोश, विश्वसाहित्य आदि वैश्वीकरण की देन है। ये शब्द पहले से भी हों तो इन शब्दों का वर्तमान अर्थ वैश्वीकरण से मिला है। वैश्वीकरण ने संस्कृतियों और भाषा के अन्तरावलम्बन का उपयुक्त वातावरण तैयार किया है। इससे भाषा का भी अन्तरावलम्बन तेजी से बढ़ा है। वैश्वीकरण के प्रादुर्भाव से भाव और वैचारिकी की क्षितिज का अभूतपूर्व विस्तार हुआ है। वैश्विक साधनों ने भाषा के एकांतिक स्वरूप को तोड़ते हुए विश्व संचार के प्रवाह में उसे ला खड़ा किया है। इस वातावरण में दुनिया की बहुत–सी भाषाएँ जो पूर्व में संकुचन की शिकार हो रहीं थी वे सभी खुल गयीं और सुदूर स्थित अपने प्रयोगकर्त्ताओं के मध्य स्वाभाविक संचार की वाहिका बन गयीं हैं। वैश्विक संचार की इस व्यवस्था में भाषाओं का एक नया लोकतंत्र स्थापित हुआ है।

किसी भाषा के विश्वभाषा होने की पूर्वापेक्षा है उसके पास पूर्व की भाषा/भाषाओं की साहित्य समृद्धि और शब्द सम्पदा की थाती हो और भविष्य की भाषाओं को संरक्षित करने की ताकत हो। इस दृष्टि से विचार करें तो हिंदी के पास पारंपरिक दाय के रूप में संस्कृत से लेकर अपने समवर्ती भाषाओं की ज्ञान संपदा मिली है। संस्कृत के धातु से असीमित संख्या में शब्द निर्माण की अमोघ शक्ति हिंदी के पास उपलब्ध है, जिसके आधार पर अनन्त पारिभाषिक शब्दों का निर्माण संभव है।

विगत सहस्राब्दि का इतिहास इस बात का साक्षी है कि हिंदी न केवल अपनी जननी संस्कृत की देन के साथ एक लोकभाषा के स्वरूप में उभरी वरन् उसने अपनी बोलियों को विकसित और स्थापित होने का पूरा अवसर प्रदान किया। समय–समय पर ब्रज, अवधी, कौरवी, बुन्देली, भोजपुरी, मैथिली आदि बोलियों का भाषा के स्तर पर स्थापित होने में अन्य बोलियों के साथ किसी प्रकार का संघर्ष नहीं दिखाई देता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि हिंदी की अपनी ही उपभाषा भोजपुरी और मैथिली संविधान की आठवीं अनुसूची में अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनानें में सतत् प्रयत्नशील हैं तो भी हिंदी भाषा का कोई निषेधात्मक भंगिमा और चरित्र नहीं दिखता है।

विगत सदी का एक दौर था जब विचार के आधार

पर लोकतांत्रिक आंदोलन खड़े हुए एवं उसके प्रतिनिधि स्वरूप वैचारिक आधार पर राजनैतिक सत्ताएं स्थापित हुईं। औद्योगीकरण प्रसूता बाजारवाद ने अपने को अत्यंत मजबूत कर लिया। सम्प्रति बाजार की ताकत सत्ता की ताकत के समांतर या कहें कि उससे ऊपर है तो अतिशयोक्ति न होगी। बाजार के कुछ अपने नियम होते हैं, जो उपभोक्ताओं की इच्छा से शासित होते हैं। इस व्यवस्था में सत्ता का बंधन कुछ शिथिल होने लगता है। इस बाजार के खुलने से भाषा का लोकतांत्रिक चेहरा उजागर हुआ है। अब भाषा के बोलने वालो की आबादी के आधार पर ही भाषा की राजनीति हो सकती है। अब वैश्विक स्तर पर भाषाओं की भौगोलिक दीवारें खुल चुकी हैं। तकनीक के वैश्विक संचार व्यवस्था में अब हर किसी के निर्बाध रूप से अपनी भाषा प्रयोग की संभावना साकार हुई है। इस कार्य को यूनीकोड ने संभव बनाया है। अब दुनिया में किसी भी भाषा का वर्चस्ववादी सत्ता कायम हो ऐसी संभावना कम है, यही कारण है कि अन्तरताना पर ई–लेखन करने वाले भाषा प्रयोक्ताओं के आंकड़े अब सर्वमान्य के लिए प्रत्यक्ष होने लगे हैं। दुनिया की सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली भाषाओं की सूची में हिंदी की मजबूत स्थिति इस वजह से बन सकी है। यह हिंदी भाषियों के लिए गौरव का विषय है।

विश्वभाषा के रूप में हिंदी बनाम अंग्रेजी

जहाँ तक विश्वभाषा के रूप में हिंदी के सापेक्ष अंग्रेजी का प्रश्न है, हिंदी की स्थिति अंग्रेजी की तुलना में गौरवान्वित करने वाली है। आंग्ल, सेक्सन और जूट जातियों की मिश्रित भाषा अंग्रेजी अनेक अपवादों को आत्मसात करके भी दुनिया की संचार भाषा बन सकी, इसका बहुत बड़ा कारण यह था कि उस भाषा के बोलने वाले विगत कुछ शताब्दियों में पूरी दुनिया में फैले। ये मात्र पूरी दुनिया में फैले ही नहीं बल्कि इन्होंने जगह–जगह फैलकर अपना विस्तार किया, उपनिवेश बनाये, अपने लिए उद्योग की संभावना को साकार किया। उस संभावना में रोजगार एवं जीवन के बेहतर विकल्पों की संभावना भी दुनिया के लोगों को दिखे, ऐसा अंग्रेजों ने स्वयं प्रयास किया। उन्होंने स्वयं संदेश दिया कि अपनी बेहतरी चाहते हो तो अंग्रेजी सीखो। छल–छद्म से लोगों को अपना दास बनाया। दासों का एक सामान्य मनोविज्ञान होता है कि भाषा–भाव–भावना में वे अपने मालिकों का अनुसरण करते हैं। इस प्रकार अंग्रेजी की विस्तारवादी नीति का कारण था कि अंग्रेजी की जड़ें बिना योग्यता के सभी जगह जमीं। अंग्रेजी की तरह हिंदी भी एक लोकभाषा है। हिंदी के साथ जितनी संस्कृत की महत्त्वपूर्ण वाग्ङमय उपलब्ध हैं उतना ही लोक का संरक्षण। हिंदी को स्वीकारने में न तो किसी प्रकार के राजस्व की गरिमा का बोध या प्रेरणा है और न ही विवशता। हिंदी इस मामले में पूर्णतया लोकतांत्रिक है। हिंदी वाँ अपनी मातृशक्ति संस्कृत की सांस्कृतिक विरोधी अरबी–फारसी के साथ ऊर्दू की भी पोषक बनी और धर्म एवं अध्यात्म के सूत्र में बंधे संपूर्ण द्वीप के पारस्परिक अभिव्यक्ति की माध्यम बनी। यह इसके लोकतांत्रिक होने का प्रमाण है। हिंदी में समन्वय की विराट संभावना है। यह मात्र शास्त्रीय ही नहीं अपितु लोकभाषाओं को भी पर्याप्त संरक्षण देते हुए उसके गुणों का आत्मसात कर सकती है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार 1652 भाषाओं वाले देश में हिंदी जब किसी भाषा के लिए खतरा नहीं बनी, उसकी अपनी ही उपभाषाओं में कई भाषारूप (भाषा के स्तर पर समृद्ध होने के बावजूद) प्रचलित हैं। यह हिंदी का लोकतांत्रिक चरित्र है।

आज प्रश्न यह उठा कि तकनीक हिंदी में अभिव्यक्त नहीं हो सकता। सिलिकन वैली में हिंदी का वर्चस्व है। यूनीकोड आते ही हिंदी प्रयोगकर्ताओं की संख्या दुनिया के तीसरे स्थान पर आ गयी। जिस दिन

हम हिंदी वासी पूर्णतयः तकनीक से जुड़ जाएंगे, उस समय विश्व की प्रथम भाषा बनने से हिंदी को कोई रोक नहीं सकता। हिंदी में इसकी पूर्व संभावना है। तकनीक के उपयुक्त भाषा होने की सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता होती उस भाषा के शब्द निर्माण की क्षमता और वैज्ञानिक अवधारणाओं की वहन की क्षमता। यह क्षमता संस्कृत के साथ हिंदी को प्राप्त है। चीन की आबादी भले ही हमसे अधिक है किन्तु उसकी चित्रात्मक लिपि उसे विश्वभाषा बनने से रोकती है। चीन का अपने नागरिकों पर दबाव है कि वे अपनी भाषा और लिपि को अपनाएं। इस वजह से मैंडरीन दुनिया की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है।

विश्व में हिंदी और भारतीय संस्कृति के प्रति बढ़ती रुचि

वर्तमान में भारत के प्रति रुचि बढ़ी है। विश्व के अधिकांश देशों में जो प्रायः विकसित हैं, ज्ञान–विज्ञान की एक नयी शाखा 'भारत विद्या' (Indology) प्रचलन में आयी है। विश्व के बहुत–से गैर हिंदी–भाषी लोग भारतीय संस्कृति और भारतीय भाषाओं के अध्ययन की ओर आकर्षित हो रहे हैं। इस क्रम में हिंदी पठन–पाठन का अन्य देशों में तेजी से विस्तार हो रहा है।

भारत के पड़ोसी देश और दुनिया के अन्य देशों में लगभग 46 ऐसे देश हैं, जहाँ के शिक्षा संस्थानों में हिंदी पठन–पाठन की सुविधा है। मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिडाड एण्ड दुबैगो में बड़ी संख्या में अप्रवासी भारतीय हैं, जो सैकड़ों वर्ष पहले जाकर वहाँ बस गये और वे वहाँ की आबादी के चालीस प्रतिशत से ऊपर की संख्या में हैं। वे हिंदी बोलते–समझते और पढ़ते–लिखते हैं। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान एवं म्यांमार आदि भारत के पड़ोसी देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी के पाठ्यक्रम चलते हैं। इन सभी देशों में समाज के बड़े वर्ग के काम–काज की भाषा हिंदी है। पाकिस्तान में लिपि फारसी है, राजभाषा उर्दू है लेकिन ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि बोल–चाल के स्तर पर दोनों भाषाओं में समानता है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका के दो दर्जन से अधिक विश्वविद्यालयों यथा शिकागो, कैलिफोर्निया, विस्कान्सिन, पेन्सिलेवानिया, कोलंबिया, वाशिंगटन, वर्जिनिया और टेक्सास आदि विश्वविद्यालयों के 'दक्षिण एशिया अध्ययन विभाग' के अन्तर्गत हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की सुविधा है। ब्रिटेन के लंदन एवं कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों में उच्च स्तर पर हिंदी का पठन–पाठन सम्पन्न होता है। जर्मनी, कनाडा, रूस, फ्रांस हॉलैण्ड, स्विटजरलैण्ड, डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, इटली, पोलैण्ड, हंगरी, दक्षिण अफ्रीका तथा जापान आदि देशों के अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की सुविधा है। वैश्वीकरण की तीव्र प्रक्रिया ने न केवल भारतीय नागरिकों को दुनिया के अन्य देशों में विचरण को संभव बनाया बल्कि दुनिया के अन्य देशों के एवं भारत के साथ राजनैतिक एवं राजनयिक संधियों एवं सांस्कृतिक आदान–प्रदान को भी संभव बनाया है। विदेशों में बसे भारतीयों ने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को बचाए रखने और अपनी सामुदायिक भावना को प्रश्रय देने के लिए अपने प्रवासी देशों में हिंदी के पठन–पाठन एवं विकास के लिए अनेक संस्थाओं–समितियों का गठन किया है। इस प्रकार सृजनात्मक कार्य से लेकर पठन–पाठन तक हिंदी का दुनिया में पर्याप्त विस्तार हो चुका है।

सूचना क्रांति और हिंदी

वैश्वीकरण और सूचना क्रांति एक सिक्के के दो पहलू हैं। सूचना क्रांति के कारण हिंदी को अत्यधिक विस्तार मिला है। 'फेसबुक' जैसे सामाजिक नेटवर्किंग साइटों के माध्यम से हिंदी भाषा–भाषी वैश्विक स्तर पर अन्तरंगता स्थापित करने में सक्षम हो सके हैं।

हिंदी का साम्राज्य आजकल अनेक सूचना पोर्टलों एवं साइटों के माध्यम से अन्तरताना (इन्टरनेट) पर विस्तार पा रहा है। यूनीकोड की व्यवस्था ने सूचना तंत्र पर हिंदी भाषा की भौगोलिक सीमाओं को ध्वस्त कर दिया है। तकनीकविदों ने ऐसा अनुभव किया है कि व्याकरण की वैज्ञानिकता की दृष्टि से संगणक के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा संस्कृत है एवं उच्चारण और लेखन में समानता के कारण संगणक के लिए सर्वाधिक उपयुक्त लिपि देवनागरी है। इस प्रकार हिंदी वैश्विक स्तर पर तकनीकी चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है।

मीडिया के रथ पर आरूढ़ होकर वैश्वीकरण के विश्वविजय का उद्घोष हो चुका है। हॉलिवुड और बालिवुड के प्रतिस्पर्धी वातावरण में 'हिंदी' को फिल्मों के माध्यम से पूरी दुनिया में विस्तार और सम्मान मिला है। भारतीय हिंदी चैनलों के कार्यक्रम दुनिया के अधिकांश देशों में देखे, सुने जाते हैं। इनकी लोकप्रियता असंदिग्ध है। वास्तविकता तो यह है कि हिंदी विश्व में सभी आयामों में नयी दृष्टि के साथ, आगे बढ़ रही है। न्यूजीलैण्ड में भारतीय मूल के लोगों ने हिंदी कार्यक्रमों के प्रसारण के लिए अपना दूरदर्शन और आकाशवाणी केन्द्र स्थापित किया है।[3] इन जनसंचार माध्यमों ने हिंदी के स्वरूप और विस्तार, दोनों दृष्टियों से हिंदी को वैश्विक बनाया है। शब्द संख्या की दृष्टि से हिंदी का इस समय वर्चस्व और विस्तार उसी प्रकार हो रहा है, जिस प्रकार पूर्व में अंग्रेजी का हुआ था।

दुनिया की अधिकांश भाषाओं के शब्द हिंदी में स्वीकृत हो रहे हैं। भाषा की दृष्टि से यह सकारात्मक पक्ष है। विश्वभाषा हिंदी का सवाल सांस्कृतिक है किन्तु 'हिंदी विश्वभाषा के रूप' में प्रतिष्ठित हो रही है। इसका मूल कारण सांस्कृतिक और राजनैतिक से अधिक आर्थिक है क्योंकि दुनिया के विकसित देश अपने अस्तित्त्व को बचाने के लिए अब बड़े बाजार की खोज में हैं। स्वाभाविक ही उन्हें भारत एक बड़े बाजार के रूप में दिख रहा है और यहाँ पर कब्जा जमाने में उनमें परस्पर होड़ लगी हुयी है। इन परिस्थितियों में उन्हें हिंदी का आश्रय लेना उनकी विवशता बन रही है। बाजार के दबाव में हिंदी, 'हिंग्रेजी' में बदल रही है। अंग्रेजी शब्दों को यथावत स्वीकार कुछ हिंदीविदों के लिए आँख की किरकिरी बन रहा है, जबकि कुछ विद्वान इसे सकारात्मक कह रहे हैं। इस प्रवृत्ति से हिंदी का शब्दकोश समृद्ध होगा यह तो ठीक है, किन्तु इसका चिन्ताजनक पक्ष यह है कि कुछ लोग हिंदी को रोमन लिपि में लिखने की वकालत करने लगे हैं। निश्चित ही इससे जनमाध्यमों और संगणक के साथ हिंदी लेखन की उनकी असुविधा परिलक्षित होती है। हिंदी को यदि विश्वभाषा बनाना है तो उसे तकनीक की अभिव्यक्ति के लिए समर्थ बनाना होगा और हिंदी को तकनीक के अनुकूल विकसित करना होगा। हिंदी का विस्तार संतोषजनक है किन्तु हिंदी प्रयोग वाँ के प्रति हिचक आत्मघाती है। हिंदी विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है। हिंदी के प्रयोगकर्त्ता यदि संकल्प लें तो निश्चित ही हिंदी विश्वभाषा के रूप में यथाशीघ्र प्रतिष्ठित होगी।

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

सन्दर्भः–

1. जापान में हिंदी अध्ययन – अध्यापन की स्थिति, प्रो. कोत्सुरा कोगा, हिंदी शिक्षणः अन्तरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा 1988, पृष्ठ 59, 60, 61
2. सोवियत संघ में हिंदी, इ.पी. चेलिशेव, गगनांचल, वर्ष 7, अंक 1, पृष्ठ 74, 76
3. विश्वभाषा हिंदी, केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा, पृष्ठ 164

प्रोफेसर, हिंदी विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211002

हिंदी कैसे बने विश्व–भाषा

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

अगर विश्व – भाषा का ताज हिंदी के सिर पर न रखा जाए तो किसके सिर रखा जा सकता है? हिंदी की पगड़ी में ऐसे रत्न जड़े हुए हैं, जो दुनिया की किसी अन्य भाषा के पास नहीं हैं। सबसे पहले संख्या की बात ही लें। यों तो माना जाता है कि चीनी और अंग्रेजी के बाद हिंदी दुनिया की तीसरी बड़ी भाषा है लेकिन यह मान्यता अब पुरानी पड़ गई है। इस मान्यता का आधार यह था कि चीनी बोलने वालों की संख्या एक अरब से भी ज्यादा है और अंग्रेजी अमेरिका, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और आधे कनाडा के अलावा लगभग 50 राष्ट्रकुल देशों में भी बोली जाती है। इन्हीं तथ्यों के आधार पर हिंदी को तीसरे स्थान पर बिठा दिया जाता है।

यदि इन तर्कों की ठीक से परीक्षा करें तो हम इस नतीजे पर पहुंचेंगे कि विश्व में हिंदी बोलने और समझने वालों की संख्या सबसे ज्यादा है और उसका स्थान सर्वप्रथम होना चाहिए। पहले चीनी भाषा को लें। चीन की आधिकारिक भाषा 'मेन्डारिन' है। इस मेन्डारिन को पूरा चीन एक–जैसा न समझता है और न ही बोलता है। माओत्से तुंग जब हुनान से पेइचिंग आए तो उनकी सबसे बड़ी समस्या यही थी कि उनकी बोली किसी के पल्ले ही नहीं पड़ती थी। आज भी यही हाल है। कुछ वर्ष पहले अपनी चीन–यात्रा के दौरान मैंने पेइचिंग में जिन चीनी शब्दों को याद किया, उन्हें जब शंघाई में दोहराया तो लोग हँस–हँसकर लोट–पोट हो गए, क्योंकि वहाँ उनका मतलब बिल्कुल दूसरा ही होता था। इसीलिए चीनी भाषा को एक अरब लोगों की भाषा औपचारिक तौर पर ही कहा जा सकता है, जबकि हिंदी न केवल भारत, पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान, बर्मा, फीजी, सूरिनाम, मॉरीशस, गयाना, त्रिनिडाड, जमैका आदि देशों में भी बोली और समझी जाती है। यदि दो करोड़ प्रवासी भारतीयों को भी जोड़ लिया जाए तो हिंदी लगभग सवा अरब लोगों की भाषा बनती है। चीनी केवल चीन और ताइवान में बोली जाती है जबकि हिंदी दुनिया के दर्जन भर देशों में बोली जाती है। फीजी से सूरिनाम तक फैले 35 हजार किलोमीटर के आकाश में हिंदी का सूर्य कभी अस्त नहीं होता। ऐसी हिंदी अगर विश्व–भाषा कहलाने योग्य नहीं है तो फिर कौनसी भाषा विश्व–भाषा कहलाएगी? वाँ इसके अलावा चीनी भाषा की चित्र– लिपि चीनियों के लिए भी अत्यंत दुर्गम होती है जबकि हिंदी की लिपि, देवनागरी, दुनिया की सर्वश्रेष्ठ लिपियों में से एक मानी जाती है। हिंदी का व्याकरण और उच्चारण भी सारी दुनिया में एक–जैसा है। गैर–चीनियों के लिए चीनी को अपनाना जितना कठिन है, गैर–हिंदियों के लिए हिंदी को अपनाना उतना ही सरल है।

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

अब अंग्रेजी को लें। अंग्रेजी दुनिया के सिर्फ साढ़े चार देशों में बोली जाती है, जिनकी आबादी लगभग 50 करोड़ है। इन देशों में भी सभी लोग अंग्रेजी नहीं बोलते। अकेले अमेरिका में चार करोड़ हिस्पानी भाषी हैं। उनके अलावा चीनी, भारतीय, जापानी आदि अन्य भाषाभाषी लगभग एक करोड़ हैं। ये सब लोग अपनी मातृभाषा को आगे बढ़ाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। अंग्रेजी के गढ़ ग्रेट ब्रिटेन में भी लाखों स्कॉट और वेल्श लोग अंग्रेजी नहीं बोलना चाहते। वे अंग्रेजी के दबदबे का विरोध करते हैं। जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने तो अंग्रेजी की कमियाँ उजागर करते हुए उसके अनावश्यक वर्चस्व को खत्म करने की

मुहिम भी चलाई थी। कनाडा के फ्रांसीसी भाषी इलाकों में अंग्रेजी का इतना कठोर विरोध रहा है कि मॉंट्रियाल जैसे शहर में यदि कभी अंग्रेजी में पानी माँगते थे तो हमें पानी तक मिलना मुश्किल हो जाता था। जहाँ तक अंग्रेजी के पुराने गुलाम देशों का सवाल है, उनमें से कई देशों में अब भी अंग्रेजी का वर्चस्व है। गुलामी की इस दौड़ में भारत सबसे आगे है लेकिन भारत में कितने लोग हैं, जो अंग्रेजी लिखते–पढ़ते हैं? मुश्किल से दो–तीन प्रतिशत ! यदि भारत–जैसे देश में ऐसे लोगों का इतना कम प्रतिशत है तो अन्य देशों में कितना होगा? और उन सब देशों की जनसंख्या भी भारत के मुकाबले नगण्य है। इसके अलावा यह भी सत्य है कि पिछले पचास वर्षों में अनेक अन्य देशों में भी अंग्रेजी का प्रसार हुआ है। यह मान भी लें तो भी हिंदी के मुकाबले अंग्रेजी भाषियों की संख्या अधिक कैसे हो सकती है? संख्या–बल में तो हिंदी अंग्रेजी से निश्चय ही आगे है। इसीलिए अब यह कहना बंद किया जाना चाहिए कि हिंदी दुनिया की तीसरी भाषा है। वह दुनिया की पहली भाषा है। इसीलिए वह विश्वभाषा होने की हकदार है।

जहाँ तक भाषाशास्त्र का प्रश्न है, उस दृष्टि से भी हिंदी की गिनती दुनिया की समृद्धतम भाषाओं में की जानी चाहिए। यों तो हिंदी का इतिहास लगभग एक हजार साल पुराना है लेकिन अगर पाली और प्राकृत में उसका मूल खोजने लगें तो वह ढाई हजार साल तक पीछे जा सकती है। जरा विचार करें कि पिछले हजार–दो हजार साल में कितने लोग भारत में पैदा हुए होंगे और हिंदी बोलते रहे होंगे? यह हिसाब अरबों–खरबों तक पहुँच जाएगा। जिस भाषा को खरबों लोग सैकड़ों वर्षों से बोलते–बरतते चले आ रहे हैं, क्या उसे पिछड़ी हुई भाषा माना जा सकता है? उसे पिछड़ी हुई कहना तो शुद्ध दिमागी गुलामी का प्रतीक है। जहाँ तक शब्दों का सवाल है, आज तक हिंदी का कोई विशाल शब्द–कोश ही नहीं बना है। यदि लोक–प्रचलित शब्दों को ही लिपिबद्ध कर लिया जाए तो कम–से–कम पचास लाख शब्द बनेंगे। दुनिया की कौन–सी अन्य भाषा है, जिसके पास हिंदी से अधिक शब्द हैं? जितनी बोलियाँ हिंदी के आँगन में सरस रही हैं, क्या किसी अन्य भाषा के स्वप्न में भी आ सकती हैं? हिंदी की बेल को हजारों–सैकड़ों वर्षों से सींचने वाली संस्कृत, अरबी, फारसी की धरोहर क्या अन्य भाषाओं के पास भी है? संस्कृत तो हिंदी की माता है। संस्कृत के शब्द हिंदी में ज्यों–के–त्यों खप जाते हैं। संस्कृत में लगभग तीन हजार ज्ञात धातुएँ हैं प्रत्येक धातु से हजारों शब्द बनते हैं। उनमें प्रत्यय और विभक्तियाँ आदि लगाकर अन्य नए हजारों शब्दों का निर्माण किया जा सकता है। यानी कोई चाहे तो कई करोड़ शब्दों का कोश बनाकर दुनिया को यह बता सकता है कि जो सामर्थ्य हिंदी भाषा में है, वह दुनिया की किसी भाषा में नहीं है। उसके पास प्रयोगजन्य और व्याकरणजन्य शब्दों का अनंत भंडार है। हिंदी की लिपि देवनागरी है। यह दुनिया की सबसे पुरानी लिपियों में से है। संस्कृत, पाली, प्राकृत, हिंदी, मराठी, गुजराती, नेपाली, उर्दू आदि भाषाओं के लिए इस लिपि का सुगमतापूर्वक प्रयोग होता है। यह लिपि प्राचीन ही नहीं है, वैज्ञानिक और सरल भी है। इसमें जैसा लिखा जाता है, वैसा बोला जाता है और जैसा बोला जाता है, वैसा लिखा जाता है। इस लिपि की तुलना चीनी की चित्र–लिपि और अंग्रेजी आदि की रोमन लिपि से करना बेकार है। वास्तव में देवनागरी ऐसी लिपि है, जो विश्व–लिपि बनने के योग्य है। तात्पर्य यह कि जिस भाषा के पास शब्दों का अतुलनीय विश्व–कोश है और अद्वितीय विश्व–लिपि है, उसे विश्व–भाषा का दर्जा सहज ही क्यों नहीं मिलना चाहिए।

वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

इन सब विशेषताओं के बावजूद हिंदी विश्व–भाषा बिल्कुल नहीं है, यह स्वीकार करने में हमें क्यों हिचकना चाहिए? यह सत्य है। जो भाषा अपने ही घर में अनाथ है, उसे हम विश्वनाथ बनाने चले हैं। यह पागलपन भी हो सकता है। यह सपना है। यह अभी एक विचार है लेकिन विचार की ताकत किसी परमाणु बम से कम नहीं होती। विचार को वास्तविकता का रूप कैसे दिया जाए, यह हमारी मुख्य चिन्ता है। यह चिन्ता उन भाषाओं को भी

रही है, जो आज विश्व–भाषा के नाम से जानी जाती है। अभी तीन–चार सौ साल पहले तक लंदन की अदालतों में अंग्रेजी बोलने पर जुर्माना होता था। अभी डेढ़–सौ साल पहले तक लोग अपनी मूल पुस्तक अंग्रेजी में लिखते थे और उसकी भूमिका लेटिन में ताकि विद्वत जगत का उस पर ध्यान चला जाए। अंग्रेजी को अंग्रेजी का रुतबा हासिल करने के लिए सदियों तक लड़ना पड़ा। हिंदी की लड़ाई को तो अभी पचपन साल ही हुए हैं। यदि इस लड़ाई में हिंदी हार गई तो वह विश्व–भाषा कभी नहीं बन सकती। विश्व–भाषा बनने के पहले हिंदी का भारत–भाषा बनना आवश्यक है।

भारत–भाषा याने क्या? सारा भारत हिंदी समझता है लेकिन फिर भी वह भारत–भाषा नहीं है। क्यों नहीं है? इसलिए नहीं है कि सरकार की भाषा हिंदी नहीं है। हिंदी व्यावहारिक/वास्तविक रूप में राजभाषा नहीं है। वह सम्मान की भाषा नहीं है। भद्रलोक की भाषा नहीं है। वह साहित्य की भाषा है लेकिन मौलिक विचार की भाषा नहीं है। वह उच्च पदों की सीढ़ी नहीं है। वह राजनीतिक सत्ता की सीढ़ी है। यह उसकी लोकतांत्रिक विवशता है लेकिन प्रशासन, न्याय, वित्त, व्यापार, शिक्षा, कूटनीति आदि के सर्वोच्च सोपानों से हिंदी का दूर–दूर तक कोई नाता नहीं है। वह सारे भारत में है लेकिन वैसे ही है, जैसे रोमन साम्राज्य में गुलाम होते थे। हिंदी करोड़ों लोगों का पेट भरती है, उनका मनोरंजन करती है, उनका संवाद–सेतु बनती है लेकिन उसकी हैसियत क्या है? क्या किसी गुलाम से ज्यादा है? जब तक भारत में हिंदी का यह गुलाम–भाषा का दर्जा खत्म नहीं होगा, वह विश्व में सम्मान कैसे अर्जित करेगी?

यदि हिंदी को हमें विश्व–भाषा बनाना है तो पहले उसे भारत की व्यावहारिक राजभाषा बनाना होगा यानी राजकाज में हिंदी भाषा का प्रयोग करना होगा। जिसे हमने घर में नौकरानी बना रखा है, उसे हम दुनिया में महारानी कहलवाना चाहते हैं। क्या कभी ऐसा होता है? जिस दिन हिंदी भारत की व्यावहारिक राजभाषा बनेगी, वह पहला दिन होगा जब वह विश्व–भाषा के पायदान पर अपना पाँव रखेगी। यदि सचमुच वह भारत–भाषा बन जाएगी तो विश्व–भाषा बनने के लिए वह स्वतः ही अनेक कदम उठाएगी। लगभग सभी भारतवंशी राष्ट्रों में भारत सरकार ने भाषा और संस्कृति के संस्थान खोल रखें हैं, उनमें नियुक्त अधिकारी प्राणपण से कार्य भी करते हैं लेकिन उनकी उपलब्धियाँ नगण्य ही हैं। मुझे मॉरीशस में एक बार फ्रांसीसी राजदूत ने बताया कि फ्रांसीसी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए उनका बजट हमारे संपूर्ण दूतावास के बजट से भी बड़ा है। लगभग सभी देशों में अपनी भाषाई पकड़ बनाए रखने के लिए अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस करोड़ों डॉलर खर्च करते हैं। वे जानते हैं कि कूटनीति और व्यापार में लंबे मोर्चे मारने में भाषा की भूमिका क्या है? हमारे दूतावास चाहे जिस देश में हों, अंग्रेजी की गुलामी में डूबे रहते हैं। न तो उन्हें राष्ट्रभाषा का गुमान होता है और न ही वे स्थानीय भाषा का उचित लाभ उठा पाते हैं। भारतवंशी राष्ट्रों में हिंदी है जरूर, लेकिन वह धीरे–धीरे खत्म होती जा रही है। दस साल पहले सूरिनाम में मैंने कुछ लोगों को आपस में हिंदी बोलते हुए सुना था लेकिन इस बार विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजकों को भी मैंने आपस में और घर में डच बोलते हुए देखा। त्रिनिदाद, गयाना और जमैका में तो आम आदमी हिंदी उतनी ही समझता है, जितनी भारत के हिंदीभाषी संस्कृत समझते हैं। फीजी और मॉरीशस में हिंदी अभी बची हुई है लेकिन वहाँ के लोग जब भारत आकर अंग्रेजी का बोलबाला देखते हैं तो वे भी अपने बच्चों की नाक में अंग्रेजी और फ्रांसीसी की नकेल डाल देते हैं। भारतवंशी बच्चों का मुंह लंदन और पेरिस की तरफ होता है और पीठ दिल्ली की तरफ! हमारा बर्ताव गुलाम देशों की तरह होता है। ऐसे में हम यह आशा कैसे करें कि वे हमारा अनुकरण करेंगे? क्या गुलामों की भाषा कभी विश्व–भाषा बनी है।

गुलामों की भाषा कभी विश्व–भाषा नहीं बनी। अभी जिन्हें हम विश्व–भाषा के तौर पर जानते हैं–अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी, जर्मन, हिस्पानी, चीनी वगैरह ये भाषाएँ

या तो मालिक देशों की भाषाएँ हैं या महाशक्तियों की! हिंदी कभी डंडे के जोर से नहीं फैली। वहाँ जहाँ भी गई, प्रेम और परिश्रम की प्रतीक बनी। हिंदी की भूमिका न भारत में कभी शोषक की रही और न ही विश्व में वह कभी वैसी होगी लेकिन अब यदि हिंदी को विश्व–भाषा बनना है तो भारत को महाशक्ति बनना ही होगा। भारत के महाशक्ति बने बिना हिंदी विश्व–भाषा कैसे बनेगी? अभी तो हाल यह है कि भारत के छोटे–मोटे पड़ोसी राष्ट्र ही भारत–भाषा को मान्यता नहीं देते तो बड़े राष्ट्र मान्यता क्यों देंगे? दक्षेस–राष्ट्रों के सम्मेलन में भारत हिंदी का औपचारिक प्रयोग नहीं करता।

संयुक्त राष्ट्र में हिंदी लाने से प्रवासी भारतीय हिंदी के प्रति प्रोत्साहित होंगे, भारतवंशी देशों में हिंदी की प्रतिष्ठा बढ़ेगी, अन्य देशों में हिंदी के प्रति जिज्ञासा बढ़ेगी, लिपि–वंचित भाषाओं को देवनागरी का विकल्प मिलेगा और विश्व–भाषा के तौर पर हिंदी की मान्यता बढ़ेगी।

लेकिन यह ध्यान रहे कि सिर्फ संयुक्त राष्ट्र में आसन जमा लेना काफी नहीं है। विश्व–भाषा बनने के लिए हिंदी को विश्व–बाजार, विश्व–संचार, विश्व–विचार, विश्व–विज्ञान की भाषा भी बनना होगा। पिछले 15–20 वर्षों में ऐसा क्या हुआ कि दुनिया के बाजार में जो भी वस्तुएँ बिकने आती हैं, उनके डिब्बों पर सारे विवरण अरबी भाषा में भी होते हैं? हिंदी में क्यों नहीं होते? अरब बाजार तो फैला ही है, वे लोग अपना काम भी अरबी में ही करते हैं जबकि बाजार तो हमारा भी फैला है लेकिन हमारा सारा महत्वपूर्ण काम अंग्रेजी में होता है। हमारी जो चीजें सारी दुनिया में जाती हैं, उन पर भी सारा विवरण अंग्रेजी में होता है, अपनी भाषा में एक शब्द भी नहीं होता और जिस देश में वह माल बिकता है, उसकी भाषा में भी कुछ नहीं होता। यही हाल विश्व–संचार का है। हमारे टी.वी. चैनल तो अब सारी दुनिया में देखे जाते हैं। लेकिन क्या हमारी आकाशवाणी इतनी ताकतवर है कि वह बी.बी.सी. और वॉइस ऑफ अमेरिका की टक्कर में खड़ी हो सके? क्या विश्व–घटनाओं पर हम विश्व–स्तरीय समाचार अपनी भाषा में दे पाते हैं? क्या हमारी दी हुई खबरें सुनने और देखने के लिए दुनिया कभी लालायित होती है? अगर नहीं तो हमारी भाषा विश्व–भाषा कैसे बनेगी? हमारे देश में आज तक कोई सम्पूर्ण समाचार समिति तक नहीं है। अंग्रेजी में चल रही दो समाचार समितियाँ किसी तरह अपना काम धकाती हैं और उनकी खबरों का अनुवाद करना ही तथाकथित हिंदी समाचार समितियों का स्थायी कार्यक्रम बन गया है। जब तक भारत में हिंदी की मौलिक, सम्पूर्ण और सबल समाचार समिति नहीं बनेगी, भारत के अखबारों, रेडियो और टी.वी. में सुधार नहीं होगा और जब तक वे विश्व–स्तर के नहीं बनेंगे, हिंदी विश्व–भाषा कैसे बनेगी?

विश्व–भाषा बनने के लिए विश्व–स्तरीय साहित्य का सृजन भी आवश्यक है। इस मामले में भारत किसी से पीछे नहीं है लेकिन समस्या वही है कि किसी गुलाम–भाषा के सिर पर प्रभुता का चमचमाता ताज़ कौन रखेगा? परदेसी भाषा में लिखकर विश्व–ख्याति अर्जित करने वाले भारतीय लेखकों के मुकाबले भारतीय भाषाओं के लेखकों की रचनाएँ कहीं अधिक प्रगल्भ हैं लेकिन उनकी पूछ–परख कैसे करवाई जाए? शुद्ध विचार और उच्च–विज्ञान के क्षेत्र में भी भारतीयों के अपने झंडे अंग्रेजी के डंडों पर फहरा रहे हैं। दुनिया की अन्य महत्वपूर्ण भाषाओं में यदि हमारी सभी प्रकार की रचनाओं का अनुवाद हो तो भारत और हिंदी का रूतबा बढ़ेगा। अन्य भाषाएँ हिंदी की महत्ता को अधिक आसानी से अंगीकार करेंगी, क्योंकि वह उनकी गुलाम कभी नहीं रही, जैसी कि अंग्रेजी की वह आज भी है। भारत जिस दिन स्वभाषा में काम शुरू करेगा, विश्व में उसका स्वत्व भी पहचाना जाएगा और वह पहचान उसे महाशक्ति बनवाने में भी सहायक होगी ! भारत का महाशक्ति बनना और हिंदी का विश्व–भाषा बनना एक–दूसरे के पर्याय हैं।

म. नं. 242, सेक्टर–55,
गुड़गांव–122011

एक बार स्वाभिमान जाग गया तो दुनिया हिंदी का इंतजार करेगी

—प्रो. अशोक चक्रधर

विश्व भाषा की ओर हिंदी विषय पर चर्चा करने से पूर्व यह आवश्यक है कि भारतीय परिदृश्य में हिंदी को लेकर क्या–क्या चिंताएं हैं इस पर विचार कर लिया जाए। अभी हाल में ही दिल्ली के 'इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र' और 'हिंदुस्तानी भाषा अकादमी' के संयुक्त तत्वावधान में 'राष्ट्र निर्माण में हिंदी की भूमिका' विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी हुई। देश के कई अनुभवी एवं प्रतिष्ठित वक्ता वहां मौजूद थे। हिंदी भाषा के देशी–विदेशी व्यवहार पर गंभीर चिंतन के साथ वक्तव्य चल रहे थे। 'हिंदी प्रौद्योगिकी' का सत्र अंतिम था, फिर भी सभागार भरा हुआ था। सभागार में प्रवेश करते ही मंच से जो पहला वाक्य मैंने सुना, वह था– 'रोना ठीक नहीं है।' ठीक बात थी। हिंदी को लेकर रोना ठीक नहीं है। मुझे बड़ा अच्छा लगा यह वाक्य। लेकिन, ये कमबख्त रोना है कि खत्म ही नहीं होता। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने एक आवाहन किया था, 'रोअहू सब मिलिकै आवहु भारत भाई। हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।' रुदनशीलता हमारे स्वभाव का अंग बन गई है। जो नहीं है उसकी परेशानी ज़्यादा है और जो है उसकी जानकारी अल्प से भी किंचित न्यून है। ये बता कर मैं भी तो रो ही रहा हूं। मैं रोना नहीं चाहता, पर यह सोचता हूं कि क्या होना चाहिए!

विभिन्न विद्वानों के वक्तव्यों में आए हुए कुछ निराशावादी प्रश्नवाचक रुदन–बिंदु मैंने नोट किए। कुछ आशावादी प्रसन्न–वदन बिंदु भी थे। दोनों प्रकार के बिंदुओं के जो नोट्स मैंने सभागार में बनाए, आप इन पर विचार कर सकें, इसलिए प्रस्तुत हैं।

निराशावादी रुदन–बिंदु

– हम लोग अपने हस्ताक्षर हिंदी में क्यों नहीं करते?

– हम अपनी भाषा के मूल चरित्र को सुरक्षित क्यों नहीं रखते?

– हिंदी कठिन है ऐसा बहुत लोग कहते हैं। अंग्रेज़ी कठिन है, ऐसा किसी को कहते सुना क्या?

– भारतीय भाषाओं का उपयोग देश तोड़ने के लिए क्यों किया जा रहा है।

– हवाई जहाज में किसी के पास हिंदी का समाचारपत्र हो तो अगल–बगल के लोग पढ़ना तो चाहते हैं पर मांगता कोई नहीं है, शर्म क्यों आती है?

– पहले अपने घर में तो अंग्रेज़ी के गढ़ को क्यों नहीं तोड़ते हैं?

– भाषा का धर्म से संबंध होता है, क्यों नहीं मान लेते?

– आज अगर देश में सोलह सौ भाषाएं हैं तो वैदिक काल में सोलह हज़ार भाषाएं रही होंगी। इस पार की अलग, उस पार की अलग। किसी ने की है खोज?

– हिंदी ने संपर्क भाषा और मनोरंजन की भाषा के रूप में खूब प्रगति की, किंतु ज्ञान और रोटी की भाषा हिंदी बन पाई क्या?

– सम्मान की भाषा हिंदी बन पाई क्या?

– हिंदी विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा क्यों नहीं बन पाई?

– हिंदी के विद्वान हिंदी को केवल साहित्य की भाषा मानकर इसके साथ अन्याय क्यों कर रहे हैं?

– हिंदी दुनिया में दूसरे नंबर की भाषा है। सम्मान की दृष्टि से किस नंबर पर है?

– प्रौद्योगिकी किस वर्ग के लिए है?

– उन्नत भाषाओं में हज़ारों की बोर्ड हैं, हिंदी में केवल दो।

– हिंदी रोमन में क्यों लिखी जा रही है?

- मेरे बाद हिंदी में लिखने वाली पीढ़ी शायद समाप्त हो जाएगी।
- हिंदी को सभी सॉफ़्टवेयर सपोर्ट क्यों नहीं करते?
- अभी तक ऐसा कोई कम्प्यूटर क्यों नहीं बना जो केवल हिंदी में काम करता हो।
- प्रौद्योगिकी का भी एक वर्गीय चरित्र होता है। यह पूंजी से संचालित होती है।
- हिंदी का मतलब केवल साहित्य समझ लिया, हिंदी का मतलब ज्ञान क्यों नहीं है?
- हर साल नया मोबाइल आ जाता है, पुराना बेकार हो जाता है। वाह री प्रौद्योगिकी!
- प्रौद्योगिकी हमारा साधन है, साध्य समझने की भूल क्यों हो रही है?
- प्रौद्योगिकी हमें संस्कृति से दूर ले जा रही है। मोबाइल ने हमारे रिश्तों को तोड़ा है।
- प्रौद्योगिकी अभी तो लुभा रही है, लेकिन पचास साल बाद क्या परिणाम होंगे, सोचा है?
- अब तक भारत में पैंतालीस लोगों को भारत–रत्न मिला, किसी भी भाषाविद या साहित्यकार को क्यों नहीं मिला?
- आजादी के बाद हमारी शिक्षा नीति ने तय कर लिया कि हम केवल अंग्रेज़ी में ही शिक्षा दे सकते हैं। ऐसा क्यों हुआ?
- हिंदी और अंग्रेज़ी के सवाल को जानबूझकर उलझाया क्यों जाता है?
- हिंदी भाषा और साहित्य के रूप में बहुत अच्छी है, लेकिन उसे अपने सारे ज्ञान का माध्यम क्यों बनाया जाए?
- हिंदी को ज्ञान से दूर रखने की उलटबांसी को किसने बनाया है?
- बहुभाषिता के मामले में सबसे कमजोर हिंदीभाषी ही क्यों हैं?
- एक दवा सर्पगंधा से बनी, सर्पेंटाइन नाम से बिकती है, हमारी उपलब्धियां रेखांकित क्यों नहीं होतीं?

- संस्कृत और पाली की जगह अरबी और फ़ारसी आ गई?
- कोई भी भाषा बोलने वालों की संख्या के बल पर चली है क्या?
- अनुवाद हमारे देश में सबसे उपेक्षित चीज़ क्यों है?
- प्रौद्योगिकी का विकास हमारे यहां क्यों नहीं हुआ, उन्नत देशों में क्यों हुआ ?
- पिछले 70 वर्षों में हमने अपनी पढ़ाई अपनी भाषा में क्यों नहीं की?
- प्रौद्योगिकी भले ही हमारे पास पड़ी रहे अगर उसका उपयोग हमारी भाषा में ज्ञान के लिए नहीं है, तो फिर वह किस मतलब की?
- भाषा खोखली होती जा रही है। प्रौद्योगिकी के कारण उससे अर्थ और भाव ख़त्म होते जा रहे हैं।
- हिंदी को लेकर हीनताबोध बरकरार क्यों है?
- प्रबुद्ध लोगों के बीच हिंदी बोलने की हिम्मत क्यों नहीं है?
- डिफीकल्टियां, प्रॉब्लम जैसे विजातीय प्रभाव हिंदी में क्यों बढ़ रहे हैं?
- ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में पश्चिम की नकल के अलावा क्या किया है?
- मुगल काल में हमारे अनुसंधान केंद्र और विश्वविद्यालय बंद हो गए, सोचा है क्यों हुए?
- क्या चार सौ साल पहले आज के उन्नत देश ज्ञान विज्ञान में भारत से आगे थे?
- भारत में सर्वशिक्षा का अभाव है, आज जो अशिक्षा है उसका कारण अंग्रेज़ी है।
- अपनी भाषाओं में हमारा मूल चिंतन नष्ट क्यों हो गया?
- हमारी सरकारें हिंदी के लिए कुछ क्यों नहीं करतीं?
- संसद में क़ानून अभी तक हिंदी में क्यों नहीं बनते?
- न्यायालय में अभी तक अपनी भाषाओं में न्याय क्यों नहीं मिलता?

आशावादी प्रसन्न–वदन बिंदु

– कम्प्यूटर की अपनी कोई भाषा नहीं होती, वह भाषाओं की सेवा करता है।

– हिंदी में, जैसा बोलते हैं, वैसा लिखते हैं।

– हिंदीतर राज्यों में हिंदी जानने से अब व्यक्ति का महत्व बढ़ जाता है।

– हम देश को जोड़ने के लिए भारतीय भाषाओं का उपयोग कर रहे हैं।

– भारतीय भाषाएं की बात करें तो भारतीय भाषाओं के साथ जोड़ कर करें।

– भारतीय भाषाएं आगे बढ़ेंगी तो हिंदी आगे बढ़ेगी।

– स्वाभिमान जग गया तो दुनिया हिंदी का इंतज़ार करेगी।

– भाषा का क्षेत्र से संबंध होता है। अगर मुहम्मद साहब का जन्म अवध में हुआ होता तो कुरान शरीफ़ की भाषा अवधी होती और अगर महाकवि तुलसी दास अरब में पैदा हुए होते तो राम चरित मानस की भाषा अरबी होती।

– हिंदी देश की सामूहिक आवाज़ है।

– हिंदी केवल भाषा का नाम नहीं है, यह इस देश की प्राणवायु है।

– विविध संस्कृतियों को जोड़ने वाले पुल का नाम है हिंदी।

– तमाम लोक भाषाएं हिंदी की जड़ें हैं। जड़ें जितनी मज़बूत होंगी, हिंदी भी उतनी ही मज़बूत होगी।

– शब्द का टोटा पड़ेगा तो लोक भाषाएं ही हिंदी को ज़िंदा रखेंगी।

– द्विभाषी होना समय की ज़रूरत है।

– शिक्षा में क्रांति अपनी भाषा के प्रयोग से आएगी।

– पहले भी लोग बहुभाषी होते थे। शंकराचार्य मलयालम भाषी थे।

– भाषा विजातीय तत्वों से नहीं सजातीय तत्वों से समृद्ध होती है।

– आज कितने वर्षों बाद हिंदी के बारे में इतने अच्छे विचार सामने आ रहे हैं।

– भाषा का बड़ा काम ज्ञान और विज्ञान की पहुंच बढ़ाना है।

– हजार साल पहले रोम की सुंदरियां भारतीय कपड़ों के लिए भारतीय व्यापारियों की प्रतीक्षा करती थीं।

– दुनिया की कोई महाशक्ति ऐसी नहीं देखी जो किसी विदेशी भाषा के बल पर महाशक्ति बनी हो।

नकारात्मक या सकारात्मक, नकारात्मकता में सकारात्मक या सकारात्मकता में नकारात्मक, ये सारे बिंदु उसी एक ही संगोष्ठी के ही हैं। ऐसा बताने का आशय यह है कि बिंदु और भी बहुत सारे हैं और आपके पास भी अनेक हो सकते हैं। संगोष्ठियों में प्रायः होता है कि वक्ताओं के विचार आपके मन में नए प्रश्नों को जन्म देते हैं और यह भी होता है कि अनेक सोए पड़े प्रश्नों को उत्तर मिल जाते हैं। वहां ये नोट्स मैंने इस कारण लिए थे कि इनके आधार पर अपनी बात कह सकूं। विरोध या समर्थन से अलग हटकर मैंने सभागार में अपनी बात रखी भी थी। अत्यंत संक्षेप में अपना पक्ष रखूं तो कह सकता हूं कि भाषा–प्रौद्योगिकी का क्षेत्र ऐसा है, जहां हर प्रश्न का उत्तर वाँ लगभग संभव है। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का भविष्य उज्ज्वल करने में भाषा–प्रौद्योगिकी अपनी सकारात्मक सकर्मकता दिखा रही है। चर्चा में शामिल इन सभी बिंदुओं पर चिंतन मनन खूब किया गया और कतई गैर–जरूरी नहीं था क्योंकि विश्वभाषा के रूप में स्थापित होने से पूर्व आवश्यक है कि अपने घर में भाषा पर विचार–विमर्श हो। भाषा, शब्द की दृष्टि से, शैली की दृष्टि से, तकनीकी दृष्टि से मजबूत होगी तभी तो घर से बाहर भाषा की प्रभावी सार्थकता सिद्ध की जा सकती है। इसके लिए स्वयं के स्वाभिमान को आवाज देने का कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि एक बार स्वाभिमान जाग गया तो दुनिया हिंदी का इंतजार करेगी। बहुत से प्रश्न हो सकते हैं जिन पर सोच–विचार करना है। फिलहाल मुझे बलबीर सिंह रंग जी का एक शेर याद आ रहा–

बहुत से प्रश्न ऐसे हैं जो सुलझाए नहीं जाते,
मगर उत्तर भी ऐसे हैं जो बतलाए नहीं जाते।

एफ–161, सरिता विहार,
नई दिल्ली–110076

विश्व भाषा के मार्ग पर तीव्र गति से अग्रसर–हिंदी

डॉ. महेश चंद्र गुप्त

संप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र अपनी स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति विविध प्रतीकों के माध्यम से किया करते हैं। इस रूप में राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान, राष्ट्रीय पशु, राष्ट्रचिह्न, राष्ट्रीय पक्षी आदि का प्रश्न हो या राष्ट्रभाषा का, सब राष्ट्र के नागरिकों की भावनाओं के साथ जुड़कर अपना एक विशिष्ट स्थान बना लेते हैं। भाषा का वेग उपर्युक्त अन्य साधनों की अपेक्षा अधिक तीव्र है क्योंकि यह सीधे एक ही साथ लाखों हजारों नहीं करोड़ों के संपर्क में आती है। आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा का मत है कि हम जिस भावात्मक एकता की चर्चा करते हैं, उसका सबसे सबल साधन भाषा ही है। भाषा किसी भी राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान का महत्त्वपूर्ण मानदण्ड मानी जाती है। सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' के अनुसार भाषा और राष्ट्र की अनन्यता का रिश्ता चोली और दामन के समान है, उन्होंने लिखा है :

''कुछ अपवादों को छोड़कर, कोई भी राष्ट्र विदेशी भाषा से जीवनचर्या नहीं चला सकता और यह बात और भी असंभव हो जाती है जब कोई देश आज़ादी की लड़ाई भी लड़ रहा हो और स्वाभिमान का लक्ष्य उसके सामने हो। यदि कोई राष्ट्र अपनी भाषा से काम नहीं चलाएगा तो अपनी अनन्यता खो बैठेगा और इसके स्थान पर अन्यथा भाव आ जाएगा। अंग्रेजी भाषी पश्चिमी लोग इस विचार को उग्र राष्ट्रीयता का नाम देकर भले ही बदनाम करें, परन्तु उनके विचार संदिग्धता से विमुक्त नहीं हैं।''

इस बात को मामूली नहीं समझना चाहिए कि कौन–सा राष्ट्र कौन–सी भाषा का इस्तेमाल करता है। यह तथ्य इतना कोई महत्त्व नहीं रखता कि किस राष्ट्र के लोग किस भाषा को कितनी विशुद्धता एवं निपुणता के साथ बोलते हैं – इसमें कोई हर्ज की बात नहीं कि किसी वर्ग की भाषा असंस्कृत और वीभत्स है, आंशिक रूप से दूषित है अथवा इसमें रचना संबंधी गलतियाँ हैं, परन्तु यह अक्षम्य है कि किसी राष्ट्र के लोग आलसी, अकर्मण्य हैं और चिरकाल तक ताबेदारी में रहने के लिए तैयार हैं। इसके प्रतिकूल यह कभी सुनने में नहीं आया कि कोई राज्य कम–से–कम स्तर तक इसलिए विकसित नहीं हो सका क्योंकि उसने अपनी भाषा का आश्रय लिया (नेशनल वॉं लैंग्वेज फॉर इंडियाः ए सिंपोजियम, इलाहाबाद, किताबिस्तान, 1941)

भाषा और राष्ट्र का संबंध राष्ट्रीय भावनाओं और व्यापक नागरिक संवेदनाओं के साथ संपृक्त है। इस प्रश्न पर प्राचीनकाल से लेकर आज तक विचार होते आए हैं। विचारकों ने राष्ट्रभाषा के बिना सम्पूर्ण राष्ट्र को गूंगा कहा है। राष्ट्र के गौरव की यह अपेक्षा है कि उसकी अपनी एक विशिष्ट राष्ट्रभाषा हो। प्रत्येक देश अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को अपनी भाषा में ही अच्छी तरह व्यक्त कर सकता है। अंतरराष्ट्रीय मंच पर जब संप्रेषण का प्रश्न उत्पन्न होता है तब उपर्युक्त भावनाओं का महत्त्व अधिक बढ़ जाता है। दिनांक 5 अक्टूबर, 1988 को अंतरराष्ट्रीय मंच संयुक्त राष्ट्र महासभा में भारत के विदेश मंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव ने भारत का प्रतिनिधित्व करते हुए जब भारत की राजभाषा हिंदी में महासभा को संबोधित किया तो भारतीयों की राष्ट्रीय भावनाएँ प्रफुल्लित हुए बिना नहीं रहीं।

(संकल्प पुस्तक के पृष्ठ 116–117)
1990– दिल्ली हिंदी अकादमी

हिंदी भारतीय संघ की संविधान घोषित राजभाषा है, जिसका देश की 42.88 प्रतिशत जनता मातृभाषा के रूप में प्रयोग करती है। हिंदी भारत के 11 प्रदेशों – उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, उत्तराखण्ड, दिल्ली तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह की मुख्य भाषा है। सांख्यिकी की दृष्टि से हिंदी विश्व की प्रथम प्रधान भाषा मानी गई है तथा इसके बोलने वालों की संख्या विश्व में विशेषज्ञों ने 70 करोड़ (पुराने आँकड़े) बताई है।

हिंदी सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बांधने वाली भाषा रही है। भारत की भाषाओं में हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा कामाख्या से कच्छ तक समझी और बोली जाती है। यही कारण है कि भारत के स्वाधीनता आन्दोलन में हिंदी ही समस्त भारत की राष्ट्रभाषा मानी गई। गुजरात के महात्मा गाँधी, महर्षि दयानंद; बंगाल के क्षितिमोहन सेन, शारदा चरण मित्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर; महाराष्ट्र के बालगंगाधर तिलक, गोपालकृष्ण गोखले; पंजाब के लाला लाजपत राय और दक्षिण के चक्रवर्ती राजगोपालाचारी तथा मोट्टूरि सत्यनारायण ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में संबोधित किया, जिसके फलस्वरूप हिंदी ही स्वाधीनता आन्दोलन में शंखनाद की भाषा बनी।

वस्तुतः हिंदी एक भाषा का ही नहीं वरन् एक भाषा समष्टि का नाम भी है। खड़ी बोली, ब्रज, बुन्देली, कन्नौजी, हरियाणवी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मैथिली, मगही, भोजपुरी, मारवाड़ी, मेवाती जयपुरी, मालवी, गढ़वाली तथा कुमाउँनी (अब डोगरी तथा नेपाली भी) हिंदी की प्रधान उपभाषाएँ हैं तथा क्षेत्र विशेष में वहाँ के निवासियों की भावभिव्यक्ति का माध्यम हैं। इनका लोक साहित्य पर्याप्त समृद्ध है। इन उपभाषाओं में खड़ीबोली को भारतीय संघ की राजभाषा होने का सांविधानिक गौरव प्राप्त है और आज हिंदी का अर्थ सामान्यतः खड़ीबोली लिया जाता है, जो साहित्य, शिक्षा तथा शासन के माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है। राष्ट्रभाषा हिंदी इस प्रकार जनभाषा है, संपर्कभाषा है तथा राजभाषा है।

हिंदी एक समृद्ध भाषिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक परम्परा की वाहिनी है। वह संस्कृत जैसी सम्पन्न भाषा की उत्तराधिकारिणी है; उदारशीला है; उसने ध्वनि और शब्द सम्पदा, दोनों ही दृष्टियों से विभिन्न भारतीय तथा विदेशी भाषाओं से असंख्य शब्दों को ग्रहण कर तथा अपनी भाषिक प्रकृति में उन्हें ढालकर अपने को समृद्ध किया है। हिंदी की समृद्धि में सभी धर्मों, जातियों तथा मतानुयायियों ने अपना योगदान दिया है। हिंदी सूफी साहित्य मुसलमान कवियों द्वारा लिखित है। दक्खिनी हिंदी का विकास भी मुसलमान साहित्यकारों द्वारा किया गया। रसखान, रहीम प्रभृति कवियों की हिंदी सेवा देखकर ही तो कहा गया था– ''इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिन हिन्दू वारिये।'' गुरुनानक की वाणी हिंदी में ही है। ईसाई मिशनरियों में ग्रियर्सन, गिलक्राइस्ट, केलाग, गार्सां द तासी और कामिल बुल्के के कार्यों को कौन भुला सकता है। (हिंदी और उसकी उपभाषाएं पुस्तक के पृष्ठ 3–4)

वर्तमान भारत में कुछ महानुभावों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा कहकर अपना सद्भाव प्रकट किया है, यथा –हिंदी हमारे देश की राष्ट्रभाषा एवं भारत संघ की राजभाषा है। हिंदी सदैव भारत के साहित्यिक विकास, सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा साम्प्रदायिक सद्भाव, समन्वय, सामंजस्य राष्ट्रीय एकता का प्रतीक रही है। हमारे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देश को जोड़ने में हिंदी भाषा ने अहम् भूमिका निभाई है। हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करना हम सभी का नैतिक तथा संवैधानिक दायित्व है।

(के. रहमान खान, तत्कालीन डिप्टी चेयरमैन, राज्य सभा)

हिंदी को हमारी राजभाषा होने का गौरव प्राप्त है। यह देश की संपर्क भाषा है। देश की एकता को मजबूत करने में यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

(ई.एस.एल.नरसिम्हन, तत्कालीन गवर्नर, छत्तीसगढ़)

विश्वास है कि देशभर के प्रतिष्ठित साहित्यकारों द्वारा राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रोत्साहन को सशक्त दिशा देने के लिए ठोस निर्णय लिए जाएँगे।

(ए.आर. किदवई, तत्कालीन राज्यपाल, हरियाणा)

हमारी राष्ट्रभाषा हिंदी का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है एवं हिंदी प्रत्येक दृष्टि से भारत की सर्वाधिक व्यापक एवं समृद्ध भाषा है। हिंदी जन–जन की भावनाओं की वाहिका है। हमारे देश के लोगों की निष्ठा ही राष्ट्रभाषा हिंदी को उसका गौरवपूर्ण पद प्रदान कर सकती है।

(सैय्यद सिब्ते रज़ी, तत्कालीन राज्यपाल, झारखण्ड)

भाषा वही सशक्त, प्रवाहमान व जीवन्त होती है, जिसमें अपनी विपुल शब्द सम्पदा हो तथा जो अन्य भाषाओं के शब्द आत्मसात कर उन्हें अपना रूप देने की क्षमता रखती हो। निःसंदेह हिंदी भाषा में प्रवाह है, यह प्रकृति, परिस्थिति, परिवेश के अनुरूप ढल जाने में सक्षम है, इसलिए वैश्वीकरण के फलस्वरूप हिंदी के समक्ष आने वाली चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करने में हिंदी पूर्णतया सशक्त है। हिंदी केवल भाषा नहीं है, हिंदी हमारे इतिहास, समाज और संस्कृति से जुड़ी धरोहर है, हमारी अस्मिता है। हमें विकास के पथ पर हिंदी के साथ आगे बढ़ना है।

(रघुवंश प्रसाद सिंह, तत्कालीन ग्रामीण विकास मंत्री, भारत सरकार)

महात्मा गाँधी ने स्वतंत्रता संघर्ष के दिनों में कहा था कि देश के अहिंदी भाषा–भाषी क्षेत्रों में जहाँ की लिपि देवनागरी लिपि से भिन्न है वहाँ हिंदी का प्रचार–प्रसार किया जाए तो देश की एकता और भारत की सामासिक संस्कृति के साथ हिंदी 'एक हृदय हो भारत जननी' की भावना से सर्वव्याप्त हो पाएगी। इसी कारण गाँधी जी ने अपने पुत्र देवदास गाँधी को दक्षिण में हिंदी के प्रचार के काम में लगाया और मद्रास में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना अपने स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ ही वर्ष 1920 में की। गाँधी जी हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष भी थे और बराबर यत्नशील रहे कि हिंदी के माध्यम से देश के व्यक्तित्व को उभार कर रखा जाए और इसमें समस्त भारतीय भाषाओं का योगदान भी हो। पूरे अहिंदी भाषा–भाषी क्षेत्रों में गाँधी जी ने हिंदी संस्थाएँ स्थापित कीं।

वाँ हिंदी विश्वव्यापी रूप ग्रहण कर रही है। जिन–जिन देशों में मैं गया हूँ वहाँ मुझे प्रायः अंग्रेजी या अन्य कोई भाषा बोलने की जरूरत ही नहीं पड़ी। दुनिया के लोग हिंदी की स्वाभाविकता, सरलता, सद्भावना और हृदयस्पर्शी विश्व मानव की एकता की भावनात्मक संस्कृति से प्रभावित हैं। आज हिंदी विश्व भाषा बन गई है। न्यूयॉर्क में आयोजित 8वें विश्व हिंदी सम्मेलन ने सिद्ध कर दिया है कि हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। दुनिया के सैंकड़ों विश्वविद्यालयों में इसका अध्ययन–अध्यापन हो रहा है। हिंदी बिना दुनिया के सबसे बड़े जनतंत्र, भारत की आत्मा का अवगाहन करना असंभव है।

हिंदी विश्व को विभेद, आतंक, पूंजीवाद, शोषण, अन्याय, अत्याचार से मुक्ति दिला देगी। विश्व की ऐसी सर्वजन स्वीकृत भाषा हिंदी बनेगी, जिससे विश्व का जन–मानस सौहार्द, सद्भाव और संतोष की प्राप्ति कर सकेगा और मानवता सिर्फ शक्तिशाली देशों के अधिकार क्षेत्र में न रहकर व्यापक स्वरूप ग्रहण करेगी और इससे 'सर्वेभवन्तु सुखिनः' का संदेश वास्तविकता बन सकेगा।

निःसंदेह हिंदी जनसंचार क्षेत्र में बहुआयामी भूमिका निभा रही है। विश्व में हॉलीवुड के बाद सिनेजगत का निरंतर विस्तार हो रहा है। हिंदी फिल्मों का अनुवाद दुनिया की सभी प्रमुख भाषाओं में किया जा रहा है। यही स्थिति टीवी के धारावाहिकों की है; विकसित, अविकसित या विकासशील देशों में सभी जगह हिंदी फिल्मों और सीरियलों की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। इंटरनेट और मोबाइल के क्षेत्र में भी भारत पीछे नहीं है। इनके उपयोगकर्ताओं की आबादी तेजी से बढ़ रही है। ग्रामीण व आदिवासी अंचलों में भी इनका संजाल फैल चुका है। अब हिंदी के मनोरंजन और समाचार चैनलों की लोकप्रियता निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुकी है। समुद्रपारीय देशों में भी इनके दर्शकों की संख्या कम नहीं है। विकसित राष्ट्रों में भी भारत के प्रमुख हिंदी चैनलों को देखा जा सकता है। हिंदी के प्रमुख राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दैनिकों के अंतरराष्ट्रीय संस्करण इंटरनेट पर उपलब्ध हो रहे हैं। इस समय भारत के दस चोटी के दैनिकों में ऊपर के चार स्थानों पर हिंदी के अख़बार जमे हुए हैं। आज देश के छोटे–बड़े औद्योगिक घराने और बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी में भी अपने विज्ञापनों को जारी करना आवश्यक समझ रही है क्योंकि हिंदी भाषी राज्यों में शहरी बाज़ार के साथ–साथ ग्रामीण बाज़ार अस्तित्व में आने लगे हैं। कोई भी उद्योग और निगम हिंदी क्षेत्रों में बाज़ारों को नजरअंदाज करने की स्थिति में नहीं है। वास्तव में जब नई वैश्विक, आर्थिक और जनसंचार शक्तियाँ हिंदी जगत से जुड़ती हैं तो इसके साथ ही वे दक्षिण एशिया में भी अपना स्थान बनाना शुरू कर देती है। संक्षेप में, जहाँ हिंदी में स्थानीय संभावनाओं का विस्फोट हुआ वहीं अंतरराष्ट्रीय आर्थिक संभावनाओं के द्वार भी खुल रहे हैं।

हिंदी को विश्व मंच पर निर्णायक रूप से स्थापित करने के लिए कुछ ठोस कदम उठाना अनिवार्य प्रतीत होता है –

1. हिंदी का वैज्ञानिक ढंग से आधुनिकीकरण।
2. राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय भाषायी वैविध्य को स्वीकारते हुए हिंदी को समृद्ध करना और समावेशी बनाना। हिंदी को वर्चस्व की भाषा नहीं बल्कि बहुभाषाओं एवं बहुल संस्कृतियों व नस्लों के बीच समन्वय की भाषा का रूप देना।
3. 19वीं व 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध के प्रवासी भारतीयों के हिंदी साहित्य और 20वीं सदी के उत्तरार्ध के अनिवासी भारतीयों (इन.आर.आइ.) की हिंदी को बृहत्तर हिंदी जगत में सम्मानजनक स्थान देना।

हिंदी प्रेमी विद्वत समूह यथार्थवादी नजरिये और अपने सतत् प्रयास से हिंदी को समाजनीति, राजनीति, प्रशासन, पर्यावरण, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के स्वप्न और आकांक्षा को व्यक्त करने के योग्य बना रहा है। यह निश्चय ही महत्त्वपूर्ण है। भले ही यह विकास नजर नहीं आए, किन्तु यह वास्तविकता है। यह वास्तविकता हिंदी की अंतरवस्तु में जो सहयोग और सहकार की भावना है, उसका परिणाम है। अस्तु हिंदी में गर्व करने लायक केवल उसका सृजनात्मक साहित्य ही नहीं है, वरन् ज्ञान–विज्ञान की भिन्न–भिन्न शाखाओं से संबद्ध वे महत्त्वपूर्ण अनुवाद–कार्य भी हैं, जो परिपूरक, प्रासंगिक और समय–सिद्ध हैं।

(पुस्तक स्मारिका तृतीय हिंदी भाषा कुंभ के पृष्ठ ii, iv, v, 132, 133, 150)

जापान का भारत से आध्यात्मिक जुड़ाव है। अपने धर्म के संस्थापक भगवान बुद्ध की पावन मातृभूमि होने के कारण भारत के प्रति जापानियों में एक श्रद्धा है। साथ ही हिंदी लेखकों का साहित्य पढ़ने की उनमें एक उत्कंठा है। यही कारण है कि हिंदी साहित्यकारों की रचनाओं का अनुवाद न सिर्फ जापानी में किया जा रहा है अपितु हिंदी भाषा पढ़ने, हिंदी में शोध करने जैसे कार्य बखूबी बढ़ रहे हैं। जापान में लगभग साढ़े आठ सौ कॉलेजों में हिंदी पढ़ाई जाती है, हजारों की संख्या में छात्र हिंदी पढ़ रहे हैं। जापान में सरदार पूर्ण सिंह,

प्रेमचन्द, अज्ञेय की रचनाएँ पढ़कर प्रेरणा ले रहे हैं। वहाँ के हिंदी विद्वान् भारत से इतने ज्यादा रमे हुए हैं कि बहुत–सी चीजों के बारे में भारतीयों से ज्यादा जानते हैं। इनमें प्रो. तोजियो तनाका का नाम प्रमुख है। तनाका तोम्मो गोइकोकु दाइगाकु में हिंदी विभागाध्यक्ष हैं। वे हिंदी शिक्षण के लिए जापानी माध्यम से पाठ्य पुस्तकें तैयार करने के अलावा हिंदी साहित्य और संस्कृति उसके अतीत और वर्तमान से निरंतर जुड़े हैं। जापानियों को हिंदी भाषा पढ़ाने, हिंदी में शोध कराने के अलावा हिंदी रचनाकारों पर हिंदी और जापानी में लेखन, उनकी रचनाओं का जापानी में अनुवाद करके वे हिंदी सेवा कर रहे हैं। 'हाकुसुइशा' (हिंदी प्रवेश), इंदो नो शूक्यो तो गेइजित्सु (भारत के धर्म और कथाएँ) जैसी पुस्तकों के अतिरिक्त अज्ञेय, नरेंद्र शर्मा, हरिशंकर परसाई, भीष्म साहनी, मोहन राकेश, इलाचंद्र जोशी, राहुल सांकृत्यायन, राही मासूम रजा, हजारीप्रसाद द्वि वेदी, पाण्डेय बेचन शर्मा, यशपाल, अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा पर अनेक समीक्षा लेख जापानी व हिंदी पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। जापान में हिंदी के अन्य जापानी विद्वानों में प्रो. तोमिया मिजोकामी, प्रो. अकीय ताकाहाशी, प्रो. फुजिई, प्रो. योशिफुमी मिजुन, हिदेआकी इशिदा का नाम भी उल्लेखनीय है।

चीन के भारत से बहुत पुराने सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। चीनी यात्री फाह्यान, ह्वेनसांग जैसे विद्वानों ने चीनी संस्कृति तथा समाज से भारत को परिचित कराने में अहम् भूमिका निभाई। उसी तरह भारतीय जीवन पद्धति, दर्शन तथा बौद्धमत को चीन में जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनाने में अपना जीवन दिया। चीन के पेइचिंग विश्वविद्यालय, नानचिड़ विश्वविद्यालय आदि में हिंदी के पठन–पाठन की व्यवस्था है। प्रो. ची. श्येन द्वारा स्थापित 'भारत विद्या विभाग' चीन का महत्त्वपूर्ण संस्थान है। जहाँ छात्रों को हिंदी एवं संस्कृत भाषा तथा साहित्य का गहराई के साथ अध्ययन कराया जाता है। प्रो. ची. श्येन ने 'वाल्मीकि रामायण' का, प्रो. चिनहान ने 'रामचरितमानस' का चीनी में अनुवाद किया है। इसके अलावा प्रेमचन्द का 'गोदान', श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी', जयशंकर प्रसाद और कृश्न चन्दर की रचनाओं का भी चीनी भाषा में अनुवाद हो चुका है। हाल ही के वर्षों में चीन में हिंदी के प्रति तेजी से रुझान बढ़ा है, इसके पीछे आर्थिक उदारीकरण एवं भूमंडलीकरण का प्रभाव है।

इंग्लैंड के कैंब्रिज, ऑक्सफ़ोर्ड, लंदन, यार्क विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई काफी समय से होती आ रही है। इंग्लैंड वेल्स और स्कॉटलैंड में 2004–05 के स्कूल सर्वे में बच्चों की भारी संख्या ने अपने आपको हिंदी भाषी बताया था। इसके अतिरिक्त साहित्यिक क्षेत्र में हिंदी के लिए कई संस्थाएं सक्रिय हैं, जिनमें भारतीय भाषा संगम, गीतांजलि, बहुभाषिक साहित्यिक समुदाय, यू.के. हिंदी समिति, हिंदी भाषा समिति, कृति यू.के., कृति इंटरनेशनल, कथा यू.के. प्रमुख हैं। इसके साथ ही वहाँ हिंदी के साहित्य के क्षेत्र में कविताओं और कहानियों की पुस्तकों का प्रकाशन बहुत तेजी से बढ़ा है।

वाँ कनाडा में हिंदी का प्रचलन बोलचाल, शैक्षणिक तथा साहित्यिक भाषा के रूप में बढ़ा है। आज ढेरों हिंदी पत्रिकाएँ नगरों, महानगरों में उपलब्ध हैं। हिंदी के विकास के लिए ढेरों संस्थाएं कार्यरत हैं। साहित्यिक पत्रों में हिंदी टाइम्स, हिंदी एब्राड; हिंदी पत्रिकाओं में विश्वभारती, नमस्ते कनाडा, हिंदी चेतना, वसुधा आदि प्रमुख हैं। कनाडा के प्रमुख रूप से जाने माने कवि हैं– सर्वश्री प्रो. हरिशंकर आदेश, श्याम त्रिपाठी, सुरेन्द्र पाल, रत्नाकर नराले, संदीप त्यागी, राकेश तिवारी, भगवत शरण श्रीवास्तव, भारतेंदु श्रीवास्तव, ब्रजराज कश्यप, अरविन्द नराले, शिवनंदन सिंह यादव, विजय विक्रांत, स्नेह सिंघवी, स्नेह ठाकुर, शैलजा सक्सेना, भुवनेश्वरी पाण्डेय, सुशीला गुप्ता, आशा बर्मन, सरोज भटनागर, प्रमिला भार्गव आदि। कनाडा में भारतीय कौंसलावास, पनोरमा, हिंदी प्रचारिणी सभा, कनेडियन कौंसिल ऑफ़ हिन्दूज, हिंदी साहित्य सभा आदि द्वारा समय–समय पर कवि सम्मेलनों, कवि गोष्ठियों का आयोजन किया जाता है।

इटली में बेनिस टूरिन रोम, ओरिएंटल, मिलान विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाई जा रही है जहाँ लगभग डेढ़ सौ विद्यार्थी बने रहते हैं।

नीदरलैंड्स में लगभग सवा दो लाख भारत वंशी हैं। यहाँ हिंदी परिषद्, हिंदी प्रचार संस्था, लायडन विश्वविद्यालय, हिंदी स्कूल संस्थाएँ, हिन्दू ब्रोडकास्टिंग कारपोरेशन, डच हिंदी समिति, एस.एल.एस., गोपिया इंटरनेशनल, सनातन एवं आर्य समाजी संस्थाएँ कार्यरत हैं। नीदरलैंड के चार विश्वविद्यालयों (लायडन, एम्सटरडम, यूटरेक्ट, खोनिंगन) में हिंदी पनपी है। हिंदी प्रचार–प्रसार में रेडियो और टीवी स्टेशनों पर हिंदी कार्यक्रम आते रहते हैं यहाँ हिन्दू ब्रोडकास्टिंग कारपोरेशन 'ओह्म' है जिसके अंतर्गत ओह्म वाणी पत्रिका और ओह्म नेटवर्क है। ओह्म डच सरकार का मीडिया है। हिन्दू शिक्षण संस्थान जिसके चार स्कूल द हेग, रोटरडम, एम्सटरडम और यूटरेक्ट में है जहाँ हिंदी नियमित रूप से पढ़ाई जाती है।

फ़िनलैंड के हेलसिंकी, स्वीडन के स्टॉकहोम विश्वविद्यालय, डेनमार्क के कोपेनहेगन विश्वविद्यालय में हिंदी पठन–पाठन की समुचित व्यवस्था है। नार्वे में हिंदी की स्थिति दिन–प्रतिदिन सुदृढ़ हो रही है। 46 लाख की आबादी वाले इस देश में 7 हजार भारतीय हैं। नार्वे में प्राथमिक पाठशालाओं से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक हिंदी पढ़ाई जाती है। नार्वे के ओस्लो विश्वविद्यालय में प्रो. जोलर फिन थीसन हिंदी विभाग में प्राध्यापक हैं। डॉ. मीणा ग्रोवर, डॉ. उषा जैन माध्यमिक उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों को हिंदी पढ़ाने में सक्रिय हैं। स्व. पूर्णिमा चावला ने, जो स्वयं कविता व कहानियाँ लिखती थीं, 15 वर्षों तक ओस्लो के स्कूलों में हिंदी पढ़ाने का कार्य किया। वहाँ परिचय, पहचान, त्रिवेणी, अल्फ़ा, ओमेगा, आप्रवासी टाइम्स, सनातन मंच आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन भी हुआ। 1990 से नार्वे में हिंदी पत्रिका 'शांतिदूत' प्रकाशित की जा रही है। इसके अतिरिक्त भारतीय हिंदी चैनल ज़ी टीवी, सोनी टीवी, ज़ी सिनेमा, बी फॉर यू, मूवी, एम टीवी, आदि काफी लोकप्रिय हैं। 10 अप्रैल, 2007 से स्केंडेनेवियन भारतीय साहित्य एवं संस्कृति मंच के प्रयासों से 'दूरदर्शन इंडिया' का प्रसारण यूरोपीय देशों के साथ–साथ विश्व के 146 देशों के लिए शुरू हुआ है। नार्वे में हिंदी साहित्य के विकास में अप्रवासी लेखकों का विशेष योगदान रहा जिनमें पूर्णिमा चावला, हरचरण चावला, अमित जोशी, मीना ग्रोवर, शिखा चन्द्रा, रश्मि क्षत्री, सुरेश चन्द्र शुक्ल, इन्द्रजीत पॉल, उषा जैन आदि प्रमुख हैं।

कोरिया (दक्षिणी) के दो विश्वविद्यालयों में हिंदी के विभाग हैं एक राजधानी सियोल के हांकुक विश्वविद्यालय में, दूसरा बुशान के विश्वविद्यालय में।

पोलैंड में हिंदी भाषा और साहित्य वारसा, क्राकूब और पोजनान के विश्वविद्यालय में पढ़ाया जाता है। वहाँ के विश्वविद्यालय में हिंदी अध्यापन के लिए पाठ्य सामग्री उपलब्ध है। प्रो. शायेर, डॉ. रुकोव्स्का, प्रो. एम.के., ब्रिस्की, युत्युष पार्नोव्स्की, आजेय बुगोव्स्की, श्रीमती आलित्स्या कार्लिकोव्स्का, डॉ. आग्न्येष्का को वातस्का सोनी, प्रो. दानूता स्ताशिक, प्रो. तादेउष पोबोजन्याक, श्रीमती अन्ना श्क्लूत्स्का, दायुर्ष गौशेर, डॉ. आग्नेष्का आदि ने हिंदी की विविध रचनाओं का अनुवाद किया है। हिंदी लेखकों में प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, फणीश्वर नाथ रेणु, जैनेन्द्र, अज्ञेय, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, इलाचंद्र जोशी, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अदि रचनाकारों की रचनाएँ अनुवाद के माध्यम से पोलिश भाषा में उपलब्ध हैं। इसके साथ ही कबीरदास, तुलसीदास जैसे कवि भी शामिल हैं।

रूस का भारत से मैत्री संबंध काफी पुराना है। दोनों देशों के मध्य पारस्परिक सांस्कृतिक आदान–प्रदान होता रहा है। रूस में प्रारंभ से ही लोग हिंदी में रूचि लेते रहे हैं। वहाँ प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक हिंदी का पठन–पाठन

होता है। मास्को अंतरराष्ट्रीय संबंध संस्थान, मास्को विश्वविद्यालय, रुचि मानविकी विश्वविद्यालय, सेंट पीटर्सबर्ग विश्वविद्यालय सहित लगभग दो दर्जन संस्थानों में डेढ़ हजार से अधिक रूसी छात्र हिंदी का अध्ययन कर रहे हैं।

बुल्गारिया में भारत विद्या के प्रति काफी अभिरुचि है। वहाँ हिंदी और संस्कृत दोनों भाषाओं में अध्ययन केंद्र खोले गए, सोफिया विश्वविद्यालय में हिंदी भाषा के अध्यापन के लिए पूरी व्यवस्था है। वहाँ प्रो. एमिल बोएव, प्रो. तात्याना इफ्तीमोवा, श्रीमती वान्या गोचेवा, डॉ. माल्या मैरिनोना, डॉ. मिलेना ब्रातोएवा, डॉ. रूसेवा सुकोलोवा हिंदी अध्यापन के प्रति पूरी तरह समर्पित है। इसके साथ ही डॉ. विमलेश कांति वर्मा, डॉ. रामकृष्ण कौशिक, डॉ. महेंद्र, डॉ. कर्ण सिंह चौहान ने शिक्षण क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

नेपाल से भारत का क्या रिश्ता है यह सर्वविदित है। भारत और नेपाल के बीच सांस्कृतिक, सामाजिक संबंध काफी पुराने हैं। नेपाल के दक्षिण की ओर का क्षेत्र प्रमुखतः हिंदी भाषी ही है, कारण यह क्षेत्र भारत के पूर्णतः हिंदी भाषी राज्यों से जुड़ा है। भारत के इस भू–भाग से नेपाल का 'रोटी–बेटी' का संबंध है। नेपाल में हिंदी का विकास भारत में विकास की तरह ही आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिककाल जैसा ही है।

नेपाल में प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं में तरंग, जय नेपाल, संगम, आदर्श वाणी, किसान बुलेटिन कोकिला, नव जागरण अनुराधा आदि हैं। साप्ताहिक पत्रों में लोकमत, इन्कलाब; त्रैमासिक पत्रिकाओं में 'हिमालिनी' प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त नेपाल में कई हिंदी संस्थाएँ कार्यरत हैं, जिनमें 'जनकपुर बौद्धिक समाज' प्रमुख है। नेपाल में हिंदी का पठन–पाठन प्राथमिक पाठशाला से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक हो रहा है। (मैसूर हिंदी प्रचार परिषद् पत्रिका के पृष्ठ 7, 8, 9, 10, 11, 12)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हिंदी के संसार के प्रसार का निम्नलिखित तालिकाओं से पता चलता है –

अख़बारों के पाठक : 12 वर्ष से ऊपर के				
शहर	जनसंख्या (करोड़ में)	गैर–अंग्रेजी (हजार में)	अंग्रेजी (हजार में)	गैर–अंग्रेजी के मुकाबले अंग्रेजी
कुल 8 महानगर	8.5	28, 466	14, 456	2:1
मुंबई	1.8	6, 719	4, 811	1.4:1
दिल्ली	1.6	4, 440	4, 401	1:1
कोलकाता	1.4	5, 200	1, 691	3:1
चेन्नई	0.9	2, 410	955	2.5:1
बेंगलूरू	0.9	2, 118	1, 165	1.8:1
हैदराबाद	0.8	1, 938	790	2.5:1
अहमदाबाद	0.6	2, 437	218	11:1
पुणे	0.5	3, 204	425	7.5:1

शीर्ष 8 महानगरों में (भाषा आधारित पाठक और दर्शक)

वाँ (हिन्दुस्तान, दिल्ली, दिनांक–20 फरवरी, 2014 के पृष्ठ 11 से)

उपर्युक्त विस्तृत विवेचन से यह स्पष्ट है कि हिंदी विश्व भाषा के मार्ग पर तीव्र गति से अग्रसर है। इस यात्रा में विश्वभर के असंख्य हिंदी प्रेमी और हिंदी सेवी निरंतर सहयोग दे रहे हैं। विशाल हिंदी भाषी क्षेत्र की सरकारें यदि पूरे निष्ठाभाव से हिंदी के विकास और प्रसार के अपने दायित्व का पालन करें और अंग्रेजी के मोह को त्याग दें तो हिंदी विश्व की प्रथम भाषा के अपने आसन को शीघ्र प्राप्त कर लेगी। आइए ! मिलकर 10 जनवरी अंतरराष्ट्रीय हिंदी दिवस को सार्थक बनाएँ।

मकान नं.–195, सेक्टर–23,
गुरुग्राम–122017

बदलती दुनिया और विश्व भाषा के रूप में हिंदी

डॉ. विभा सिंह

इक्कीसवीं सदी तीव्र गति से परिवर्तन करती दुनिया की चमत्कारिक उपलब्धियों वाली सदी सिद्ध हो रही है। तकनीक और विज्ञान के बल पर पूरी दुनिया, एक वैश्विक गांव में परिवर्तित हो गयी है, जिससे भौगोलिक दूरियां अर्थहीन हो गयी हैं। वर्तमान विश्व व्यवस्था आर्थिक और व्यापारिक रूप से ध्रुवीकरण और पुनर्संगठन के दौर से गुज़र रही है, अतः दुनिया के महाबलशाली राष्ट्रों के क्रम में भी उतार चढ़ाव दृष्टिगत हो रहा है। अठारहवीं, उन्नीसवीं सदी ऑस्ट्रिया, हंगरी, ब्रिटेन, जर्मनी आदि यूरोपीय ताक़तों के प्रभुत्व की क्रमशः साक्षी रही हैं, तो बीसवीं सदी अमेरिका और सोवियत रूस के वर्चस्व के लिये विश्व में जानी जाती हैं। वहीं इक्कीसवीं सदी में भारत और चीन की, विश्व की सबसे तेज़ गति से उभरने वाली अर्थव्यवस्थाओं में गणना हो रही है। विश्व स्तर पर भी इस तथ्य की स्वीकार्यता बढ़ी है। अपनी कार्य निपुणता एवं प्राकृतिक संपदा और युवा मानव संसाधन की संभावना के कारण, भारत और चीन निकट भविष्य की विश्व शक्तियों के रूप में, अपना अस्तित्व बनाने में सक्षम सिद्ध होने लगे हैं।

किसी भी राष्ट्र की भाषाएं उस समय स्वतः ही महत्वपूर्ण बन जाती है, जब उसे विश्व बिरादरी अपेक्षाकृत अधिक महत्व और स्वीकृति देने लगती है। इन परिस्थितियों में भारत की निरन्तर विकासमान अंतर्राष्ट्रीय हैसियत हिंदी के लिए वरदान है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में, भारत की बढ़ती उपस्थिति, हिंदी को गौरवान्वित करते हुये उसका उन्नयन कर रही है। आज हिंदी भी अनेक बदलावों को स्वीकार करते हुये विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है। विश्वभाषा की संज्ञा से विभूषित होने की अधिकारिणी, कोई भी भाषा तभी हो सकती है जब उसके बोलने वालों की संख्या इतनी अधिक हो कि वह दुनिया के अधिकांश देशों में संवाद का माध्यम बने और उसके अन्य कार्यों में भी प्रयोग में आती हो। इसके अतिरिक्त उस भाषा में वैश्विक भाव संवेदन के अभिव्यक्ति की क्षमता हो और ज्ञान–विज्ञान के विविध आयामों के सटीक विश्लेषण करने की भी सामर्थ्य हो। उस भाषा में साहित्य सृजन की प्रदीर्घ परम्परा हो और उसकी सभी विधाएं विविधता के साथ समृद्ध हो। शब्द सम्पदा विपुल हो, शाब्दी और आर्थी संरचना एवं लिपि, सरल, सुगम और वैज्ञानिक हो। उसमें निरन्तर परिष्कार एवं परिवर्तन की संभावना हो। वह नवीनतम वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपलब्धियों के साथ स्वयं को पुरस्कृत एवं समायोजित करने की क्षमता से युक्त हो। वह जनसंचार माध्यमों में देश–विदेश में प्रयुक्त हो रही हो। साथ ही वह विश्वचेतना की संवाहिका भी हो।

इन वैश्विक प्रतिमानों के संदर्भ में हिंदी के सामर्थ्यवान होने के बारे में, यह कहा जा सकता है कि आज वह विश्व के महत्वपूर्ण राष्ट्रों जिनकी संख्या लगभग एक सौ चालीस है, में किसी–न–किसी रूप में प्रयुक्त होती है। आज वह बोलने वालों की संख्या के आधार पर चीनी भाषा के बाद विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है। इस बात को वर्ष 1999 में मशीन ट्रांसलेशन समिट (यांत्रिक अनुवाद) नामक संगोष्ठी में टोक्यो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर होजुमी तनाका ने भाषाई आंकड़े प्रस्तुत करते समय बताया था। उनके द्वारा पेश किये गये आंकड़ों के अनुसार, चीनी भाषा प्रथम, हिंदी भाषा द्वितीय और अंग्रेज़ी तीसरे क्रमांक पर, विश्व भाषाओं के क्रम में आ गयी है। डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल ने भाषा शोध अध्ययन वर्ष 2005 के संदर्भ में लिखा है कि विश्व में हिंदी बोलने वालों की संख्या, चीनी भाषा बोलने वालों से अधिक है। इन आंकड़ों की सच्चाई बहुत विश्वसनीय न मानने पर भी यह निर्विवाद

है कि विश्व की दो बड़ी भाषाओं में हिंदी अपना स्थान बनाने में कामयाब हुई है। किंतु इस तथ्य को भी हमें स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजी भाषा के प्रयोक्ता आज भी विश्व के सभी देशों में सबसे अधिक हैं। संप्रति अंग्रेजी प्रशासनिक, व्यावसायिक एवं वैचारिक गतिविधियों को संचालित करने वाली प्रभावशाली भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। इन्हीं संदर्भों में हिंदी के उन्नयन एवं प्रसार का प्रयास युद्ध स्तर पर होना चाहिये, तभी उसकी गति विश्व भाषा बनने की दिशा में तीव्र होगी।

निस्संदेह, हिंदी आने वाली पीढ़ी की भाषा होगी क्योंकि भारत में 1980 के बाद जन्म लेने वाले लगभग 65 करोड़ बच्चे विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों में शिक्षित–प्रशिक्षित होकर, विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में अपनी सेवाएं उपलब्ध करा रहे हैं। जापान की साठ प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वृद्ध हो चुकी है। आने वाले समय में अमेरिका और यूरोप की आबादी भी ऐसी ही होगी। ऐसी स्थिति में विश्व का सबसे युवा मानव संसाधन होने के कारण, भारतीय पेशेवरों की मांग अनेक देशों में बढ़ेगी। जब भारतीय पेशेवरों की बड़ी संख्या दूसरे देशों में जाएगी, तब हिंदी भी वहाँ उनके साथ अपनी गहरी पैठ बनाएगी। इस तरह भारत के आर्थिक महाशक्ति बनने की प्रक्रिया में हिंदी स्वतः ही विश्व मंच पर प्रभावी भूमिका निभाएगी। आज हिंदी जिस गति और आंतरिक ऊर्जा के साथ सम्पूर्ण विश्व में अपना स्थान बना रही है, उससे प्रतीत होने लगा है कि आने वाले समय में वह दुनिया मे सबसे ज्यादा बोली और समझी जाने वाली भाषा होगी।

हिंदी में साहित्य सृजन की परम्पराएं लगभग बारह सौ वर्ष प्राचीन है। यह धारा लगभग आठवीं शती से वर्तमान इक्कीसवीं शती तक, अनाहत अविरल प्रवहमान है। इसकी शब्द सम्पदा विपुल है। इसने अनेक भाषाओं के बहुप्रयुक्त शब्दों को उदारता से ग्रहण किया है और जो शब्द जीवन संदर्भों से दूर, अप्रचलित हैं, उनका त्याग भी किया है। आज हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ सृजन, विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से उन देशों तक पहुँच रहा है और विश्व की अनेक भाषाओं का महत्वपूर्ण साहित्य अनुसृजनात्मक लेखन के रूप में हिंदी में भी उपलब्ध हो रहा है।

हिंदी की देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता सर्वमान्य है क्योंकि यह उच्चारण पर आधारित लिपि है। हिंदी की सबसे बड़ी विशेषताए उसकी संस्कृत के उपसर्ग तथा प्रत्ययों के आधार पर, नए शब्दों को बनाने की है। हिंदी और देवनागरी दोनों ही पिछले कुछ दशकों में परिमार्जन और मानकीकरण की प्रक्रिया से गुज़रे हैं, जिससे इसकी संरचनात्मक जटिलता कम हुयी है। विश्व मानव की चिंतन शक्ति और नवीन जीवन स्थितियों की अभिव्यंजना की योग्यता, हिंदी भाषा में है। आवश्यकता है इस दिशा में अपेक्षित बौध्दिक तैयारी व विशेषज्ञता की।

यह सत्य है कि हिंदी में अंग्रेजी के स्तर की, विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित पर्याप्त सामग्री नहीं है, पर विगत कुछ दशकों में इस दिशा में उचित प्रयास हो रहे हैं। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय वर्धा द्वारा हिंदी माध्यम से एमबीए पाठ्यक्रम अभी हाल में ही प्रारंभ किया गया है। विभिन्न प्रौद्योगिक संस्थानों में हिंदी भाषा में तकनीक और प्रौद्योगिकी की पुस्तकों को तैयार करने का कार्य हो रहा है। वाँ जनसंचार के क्षेत्र में 'इकोनॉमिक टाइम्स' तथा 'बिजनेस स्टैण्डर्ड' जैसे बड़े नाम वाले अंग्रेजी पत्र हिंदी में प्रकाशित होकर, संभावनाओं के नए द्वार खोल रहे हैं। विदेशी उपग्रह चैनल, टीवी के लिये, अंग्रेजी में प्रारंभ तो हुये, पर पिछले कुछ वर्षों में वे हिंदी के चैनलों में रूपांतरित हो गए। स्टार टीवी के विभिन्न चैनल, हिंदी की सम्प्रेषणीयता के कारण, हिंदी भाषा में अपने कार्यक्रम देने लगे। ई. एस. पी.एन. और अन्य स्पोर्ट्स चैनल भी आज हिंदी में कमेंट्री देने लगे। हिंदी को वैश्विक संदर्भ देने में, उपग्रह चैनल, विज्ञापन एजेंसी, बहुराष्ट्रीय कंपनी एवं यांत्रिक सुविधाओं वाली तकनीक ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह जनसंचार माध्यमों की प्रिय भाषा बन कर निखरी है।

किसी भी भाषा साहित्य के सफर में, नए दौर आते रहते हैं। आज के हिंदी साहित्य में नए दौर के चलन में एक नई हिंदी गतिमान है। यह समय के साथ आये नए प्रयोगों की अभिव्यक्ति के रूप में है। आज के समय में, नए–नए आविष्कार, ग्लोबल होते बाज़ार ने दुनिया की हर भाषा को एक दूसरे से जोड़ा है। इसी कड़ी में, हिंदी

में भी कुछ अंग्रेजी के शब्द सहजता से प्रयोग में आ रहे हैं। ये प्रयोग हिंदी को नया कलेवर दे रहे हैं, जो हिंदी को शाब्दिक रूप से समृद्ध और उसकी सम्प्रेषण क्षमता को और प्रभावी बना रहे हैं। ये हिंदी युवाओं के लिये कथ्यों का नया विस्तार ले कर आयी है। युवा लेखक अब नए विषयों पर लेखन कर रहे हैं। वे अपने समय को अपनी दृष्टि से देख कर दर्ज कर रहे हैं जो अधिक प्रामाणिक और प्रभावी भी है। विश्व में उनका एक बड़ा पाठक वर्ग बन गया है, जो उन्हें पसंद भी कर रहा है। हिंदी के नवलेखन में युवा साहित्य नया आकार प्राप्त कर रहा है, जो नये पाठक वर्ग को साहित्य से जोड़ रहा है। इन लेखकों में कई नाम ऐसे हैं, जो परंपरागत साहित्यिक खांचे में नहीं समाते, इनकी पृष्ठभूमि अलग है। इनमे कोई इंजीनियर, कोई एमबीए तो कोई बहुराष्ट्रीय कंपनियों में काम करने वाला विशेषज्ञ है। यह साहित्य और इसके युवा लेखक, बड़े दखल और ईमानदारी के साथ अपने समय को दर्ज कर रहे हैं। किसी भी काल के लेखन का सबसे आवश्यक तत्व यह है कि उसे समकालीन लेखक व्यक्त कर रहे हैं या नहीं। इस तथ्य के परिप्रेक्ष्य में आज का समय समृद्ध है क्योंकि पूरे विश्व मे हिंदी भाषा में लेखन प्रचुर मात्रा में हो रहा है।

आज विश्व में सबसे अधिक पढ़े जाने वाले समाचारपत्रों में आधे से अधिक हिंदी भाषा के हैं। दक्षिण पूर्व एशिया, मॉरीशस, चीन, जापान, कोरिया, मध्य एशिया, खाड़ी देशों, अफ्रीका, यूरोप, कनाडा और अमेरिका तक हिंदी कार्यक्रम, उपग्रह चैनलों द्वारा प्रसारित हो रहे हैं, जिनके दर्शकों का एक बड़ा वर्ग है। पिछले कुछ वर्षों से एफएम रेडियो चैनलों के विकास से, हिंदी कार्यक्रमों का अपना श्रोता वर्ग भी बन गया है। हिंदी आज नवीन प्रौद्योगिकी के रथ पर सवार होकर विश्वव्यापी बन रही है। उसे ई मेल, ई कॉमर्स, ई बुक, इंटरनेट एवं वेब की दुनिया मे आसानी से पाया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, याहू, आईबीएम एवं ओरेकल जैसी विश्वस्तरीय कम्पनियां, व्यापक बाज़ार और मुनाफा देखते हुये, हिंदी प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं। जिससे हिंदी के पारंपरिक रूप में परिवर्तन तो हो रहे हैं, पर वह अंग्रेजी के दबाव के बावजूद, तेज गति से विश्वमन के सुख, दुःख, आशा, आकांक्षा को वहन करती हुई विश्व भाषा की ओर बढ़ रही है। हिंदी के रचनाकार अपनी सृजन शक्ति से उदारतापूर्वक विश्वमन का संस्पर्श कर रहे हैं। हिंदी के नवीन विश्व कोष निर्मित करने में भी आज विदेशी विद्वान सहायता कर रहे हैं।

अंतरराष्ट्रीय संस्था यूनेस्को के अनेक कार्य अब हिंदी में संपन्न हो रहे हैं। अब तक 'हिंदी विश्व सम्मेलन' लंदन, न्यूयॉर्क, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम, त्रिनिदाद, मॉरीशस जैसे देशों में सम्पन्न हो चुके हैं। आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन में न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव, बान की मून ने हिंदी के कुछ वाक्य बोल कर हिंदी की लोकप्रियता को नये आयाम दिए। हिंदी को वैश्विक संदर्भ और व्याप्ति प्रदान करने में, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा, अनेक देशों में स्थापित भारतीय विद्यापीठों की प्रमुख भूमिका रही है। वहां के विश्वविद्यालयों में शोध स्तर तक हिंदी के अध्ययन – अध्यापन की व्यवस्था है, जिसका लाभ विदेशी छात्रों को मिल रहा है। इस इक्कीसवीं सदी में, जहां विश्व की तमाम संस्कृतियां एवं भाषाएं, आदान, प्रदान और संवाद की प्रक्रिया से गुज़र रही हैं, वहां हिंदी, विश्व मनुष्यता को निकट लाने के लिये सेतु का कार्य कर सकती हैं क्योंकि उसके पास पहले से ही बहु–सांस्कृतिक परिवेश में सक्रिय रहने का अनुभव है।

वाँ

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम भारतीय एक समवेत प्रयास के साथ विधि, विज्ञान, वाणिज्य एवं नयी प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराएं। यह तभी संभव है जब सभी देशवासी, सुदृढ़ इच्छाशक्ति और दायित्वबोध के साथ, हिंदी की विकास यात्रा में सम्मिलित हों ताकि विभिन्न प्रतिमानों, निष्कर्षों से निकल कर, हिंदी विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो सके।

एसोशिएट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, डीएवी कॉलेज, कानपुर–208002

हिंदी: वैश्वीकरण का परिप्रेक्ष्य

डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा

यूनेस्को ने वर्ष 1966 में स्टीफ़ेन वर्म द्वारा संपादित विश्व की भाषाओं का एक एटलस प्रकाशित किया था, जिसमें उन्होंने विश्व की अनेक भाषाओं के ऊपर मंडराते अस्तित्व के संकट की बात कही थी और यह संभावना व्यक्त की थी कि इनमें से अनेक भाषाएं कालांतर में लुप्त हो जाएँगी। यह बात वर्म ने उन भाषाओं के लिए कही थी, जिनके बोलने वालों की संख्या दिनों–दिन कम होती जा रही है और ज्यों–ज्यों भाषा के बोलने वाले कम होते जाएंगे उनकी भाषा स्वयंमेव धीरे–धीरे लुप्त हो जाएगी क्योंकि भाषा की संजीवनी और ऊर्जा उसकी व्यावहारिक उपयोगिता है। भाषा की नियति उसके बोलने वालों से जुड़ी होती है। हिंदी के साथ आज अस्तित्व का कोई संकट नहीं है क्योंकि भारत में जहाँ वह करोड़ों की मातृभाषा है वहीं विश्व में करोड़ों की अनुराग भाषा भी है। विश्व के अनेक देशों में हिंदी का प्रचलन है तथा वहाँ के प्रवासी भारतीय उसकी सुरक्षा तथा प्रतिष्ठा के लिए सजग व सचेष्ट हैं।

विश्व की भाषाओं के सर्वेक्षण यह बताते हैं कि प्रधान यूरोपीय भाषाओं–अंग्रेजी, जर्मन, फ्रांसीसी, पुर्तगाली तथा स्पेनिश में अंग्रेजी, जर्मन तथा फ्रांसीसी भाषा के बोलने वालों के प्रतिशत में इधर पिछले तीन दशकों में निरंतर गिरावट आई है, जबकि पुर्तगाली तथा स्पेनिश बोलने वालों के प्रतिशत में वृद्धि हुई है। इसी प्रकार विश्व की प्रधान भाषाओं में अंग्रेजी, मेंडरिन तथा रूसी भाषा के बोलने वालों के प्रतिशत में गिरावट देखी गई, जबकि अरबी तथा हिंदी बोलने वालों का प्रतिशत बढ़ा है। यद्यपि ये आंकड़े इन अंतरराष्ट्रीय भाषाओं के महत्व को कम नहीं करते, पर स्पेनिश, पुर्तगाली, अरबी तथा हिंदी के बढ़ते हुए अंतरराष्ट्रीय महत्व के साक्ष्य अवश्य है। अरबी तथा हिंदी के बढ़ते हुए विश्व प्रतिशत का कारण अरबी तथा हिंदी भाषा की व्यावसायिक तथा व्यवहारिक उपयोगिता है। भारत में हर प्रांत की अपनी–अपनी भाषा है, किन्तु पूरे राष्ट्र की संवाद भाषा हिंदी ही है। यह सही है कि आज भी अंग्रेजी भारत में प्रतिष्ठित वर्ग के मध्य देश की संपर्क भाषा है किन्तु जन वर्ग तक या व्यापक उपभोक्ता जगत तक पहुँचने के लिए हिंदी के अतिरिक्त कोई और भाषा विकल्प नहीं है। हिंदी न केवल संख्याबल वरन्–भू–विस्तार की दृष्टि से भी विश्व की प्रधान भाषाओं में से एक है तथा इसके बोलने वालों की संख्या विश्व में 70 करोड़ बताई गई है। इसके बोलने वाले भारत के बाहर नेपाल, पाकिस्तान, श्रीलंका, बर्मा, फीजी, मारिशस, सूरिनाम तथा दक्षिण अफ्रिका में बसे लाखों प्रवासी भारतीय हैं जो इन देशों के स्थायी नागरिक हैं और मातृभाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग करते हैं।

हिंदी विश्व भाषा बन सके, व्यापार तथा अर्थ जगत की भाषा बन सके, सूचना क्रांति में वह अन्य महत्वपूर्ण विश्व भाषाओं के समकक्ष खड़ी हो सके, इसके लिए हिंदी को अधिक सक्षम बनाना होगा। वैश्वीकरण के इस युग में जब देशों की भौगोलिक दूरियां सिमटती जा रही हैं, समय और गति का महत्व बढ़ता जा रहा है, बाजार भाषा मूल्य तय करने का मापक बन गया है, हिंदी के सामने कई चुनौतियां हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक है कि हम वास्तविक स्थिति और अपनी कमियां समझें, हमें लक्ष्य का स्पष्ट ज्ञान हो, लक्ष्य प्राप्ति की सार्थक योजनाएं बनें, ईमानदारी तथा दृढ़ता से योजनाओं को कार्यान्वित किया जाए तथा

समय–समय पर हमारी प्रगति का मूल्यांकन हो।

चढ़ते हुए सूरज और बढ़ते हुए चाँद की पूजा की जाती है। भारत जैसे–जैसे शक्तिशाली बनेगा, भारत की भाषा का भी सम्मान होगा और लोग उसकी ओर झुकेंगे। हिंदी तभी विश्वभाषा का रूप ले सकेगी जब हिंदी का ज्ञान भारत को समझने के लिए आवश्यक हो जाएगा, बिना हिंदी ज्ञान के हम भारतीय साहित्य नहीं पढ़ सकेंगे, बिना हिंदी के भारतीय उपभोक्ता बाजार में हमारी पहुँच नहीं हो सकेगी, बिना हिंदी के हम भारतीय संस्कृति समाज, धर्म और दर्शन नहीं समझ सकेंगे और हिंदी में वह सब उपलब्ध हो सकेगा जो हमारी आवश्यकता है। समग्रतः हिंदी के बिना जब हमारा काम नहीं चलेगा तब हिंदी का महत्व बढ़ेगा। 'कौन बनेगा करोड़पति' ने कितने ही अहिंदी भाषियों को हिंदी सिखाई है। यदि आप सहज करोड़पति बनना चाहते हैं तो 'बच्चन सर' की क्लास में जाना ही होगा। मैंने किसी को यह कहते नहीं सुना कि यह कार्यक्रम हिंदी में है तो मैं उसमें भाग नहीं लूंगा। यदि हमें फिल्मों से मनोरंजन चाहिए तो हमें बंबइया हिंदी फिल्में देखनी ही होंगी।

हिंदी में यह शक्ति कब आएगी कि वह विश्व के लिए एक ऐसी महत्वपूर्ण भाषा बन जाए जिसकी उपेक्षा न हो सके। यह तभी होगा जब हमारी मानसिकता बदलेगी। हमें अपनी भाषा बोलते हुए गौरव का अनुभव होगा। देश–विदेश में अपनी भाषा में बात कहकर विकसित देशों के राजनेताओं की तरह अपनी बात जब हम अपनी भाषा में कहना चाहेंगे। जापान, जर्मनी, इंग्लैंड, रूस, फ्रांस, चीन आदि सभी शक्तिशाली देशों के नेता अपनी भाषा में अपनी बात कहना चाहते हैं। वे अपनी भाषा में वक्तव्य देते हैं और अनुवादक के माध्यम से उनकी बात विदेशी श्रोताओं तक पहुँचती है। आजादी के बाद भारत की राजनीतिक, सामरिक प्रभावों से मुक्त उनकी स्वतंत्र विदेश नीति, एशिया और हिंदी महासागर के देशों में उसकी भौगोलिक स्थिति आदि अनेक कारण है, जिनसे अंतरराष्ट्रीय जगत में भारत का सम्मान ऊँचा हुआ है। लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला भारत विश्व का सबसे बड़ा देश है। भारत की यह विश्व प्रतिष्ठा विश्व में बसे हुए भारतीयों ने अपने श्रम और बुद्धिबल से बनाई है तथा अपनी राष्ट्रभाषा को अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में मत्वपूर्ण स्थान दिलाया है।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में जब हम विदेश में हिंदी की बात करते हैं तो उससे हमारा तात्पर्य विदेश में हिंदी भाषा के अधिक से अधिक प्रसार के साथ ही विविध क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग से संबंधित है। इस प्रकार और प्रयोगों में भी कई कठिनाइयाँ हैं, जिनके समाधान की आवश्यकता है। मुझे इस संबंध में जातक की एक बोध कथा का स्मरण आ रहा है। एक बुढ़िया एक लैंप पोस्ट के नीचे खड़ी जमीन पर पड़ते हुए प्रकाश में कुछ खोज रही थी। राह चलते लोगों ने देखा कि बहुत देर से बुढ़िया कुछ खोज रही है और परेशान है किंतु उसकी कोई मदद नहीं करता। एक नौजवान से नहीं रहा गया, उसने सोचा कि इस बुढ़िया की मदद की जाए। शायद उसकी बूढ़ी आँखें बारीक चीज न देख पा रही हों। उसने बुढ़िया से पूछा, 'माई, क्या खोज रही हो? उसने कहा– 'बेटा, चाभी का गुच्छा खो गया है, उसे ही बड़ी देर से खोज रही हूँ। नौजवान ने बुढिया से पूछा कि गुच्छा कहाँ गिरा था। बुढ़िया ने जवाब दिया कि चाभी का गुच्छा घर में गिरा था। नौजवान ने आश्चर्य से कहा कि फिर तुम इस लैंप पोस्ट के नीचे क्यों खोज रही हो। बुढ़िया ने उत्तर दिया कि यहाँ प्रकाश है इसलिए यहाँ खोज रही हूँ। यही स्थिति हमारी भी है। हिंदी के विश्वव्यापी प्रसार और प्रयोग की कुछ कठिनाइयाँ हैं। हमें उन पर विचार करना होगा तथा उनका समाधान खोजना होगा, जिससे इस दिशा में कुछ ठोस प्रयत्न किए जा सकें।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी की भूमिका सार्थक हो तथा उसकी प्रयोग व्याप्ति बढ़ सके इसके लिए पहली आवश्यकता हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के मानकीकरण की है। देवनागरी लिपि के मानकीकरण के प्रयत्न प्रशासकीय स्तर पर हुए। केन्द्रीय हिंदी निदेशालय ने जो लिपि का मानकीकरण किया उसका प्रयोग निदेशालय के अलावा कहीं नहीं होता यहाँ तक कि सरकारी प्रकाशनों में भी नहीं, निजी प्रकाशनों की बात तो छोड़ ही दीजिए। ऐसा क्यों हुआ इसका उत्तर

मानकीकरण करने वालों के पास भी नहीं है। यही स्थिति हिंदी भाषा की भी है। हिंदी देश की संविधान स्वीकृत राजभाषा है, किन्तु उसके मानकीकरण की बात प्रशासकीय स्तर पर कोई नहीं सोचता। कभी हम हिंदी पत्रकारिता को दोष देते हैं कभी टेलीविजन या रेडियो की हिंदी को, किन्तु जरा अपने मन को टटोल कर देखिए – क्या उनको हमने कोई मानक रूप दिया है, जिसका वे प्रयोग करें। एक छोटा–सा उदाहरण देकर अपनी बात स्पष्ट करूँ। 'आज तक' हिंदी समाचार चैनल है जिसकी लोकप्रियता व साख एक वर्ष से कम समय में ही इतनी बन गई थी कि उसने अन्य सभी समाचार चैनलों को पीछे छोड़ दिया किन्तु वे प्रयोग करते हैं आज की 'ताजा खबर'। मैं हिंदी क्षेत्र का हूँ, हिंदी मेरी मातृभाषा है, मैं खबर का प्रयोग स्त्रीलिंग में करता हूँ और इसके लिंग की व्याख्या मैं 'अच्छी खबर', और 'बुरी खबर' के समानक के रूप में करता हूँ। यदि खबर अच्छी या बुरी है तो ताजी भी होगी। इतना ही नहीं प्रयुक्ति देखिए 'आज की ताजा खबर'। समानक देखिए आज का ताजा अखबार। ऐसे उदाहरण अनेक हैं जो भाषा के व्याकरणिक नियमों का उल्लंघन करते हैं, पर चलते हैं और इनके बारे में न कभी कोई कहता है न कभी कोई लिखता है। विरोध करना तो हमारा स्वभाव ही नहीं है। सच पूछिए तो इसका कारण हमारी अज्ञानता, या फैशन नहीं है, इसका कारण है कि हमने भाषा के मानकीकरण की बात को कभी गंभीरता से लिया ही नहीं। यह मानकीकरण की चिंता आचार्य रामचंद्र वर्मा ने वर्ष 1940 में व्यक्त की थी और कहा था– ''हिंदी को हम राष्ट्रभाषा मानकर अपना अभिमान प्रकट करते हैं, पर दुर्भाग्यवश हम अभी तक उसका ठीक–ठीक स्वरूप ही निश्चित नहीं कर पाए हैं। सब लोग अपने–अपने ढंग से और मनचाहे तौर पर जो कुछ जी में आता है वह सब हिंदी के नाम से लिखते चलते हैं। शुद्ध चलती हुई मुहावरेदार भाषा लिखने की आवश्यकता का अनुभव कुछ इने–गिने मान्य लेखकों को ही होती है और नहीं तो हिंदी के क्षेत्र में भाषा के विचार से केवल धांधली ही मची हुई है।'' यह स्थिति जो 1940 ई. में थी, वही आज भी बनी हुई है। अच्छी हिंदी, शुद्ध हिंदी, मानक हिंदी जैसी चर्चा हिंदी गोष्ठियों में कभी नहीं देखी सुनी जाती है। हिंदी को हमने देश की राजभाषा बनाया है। शिक्षा के माध्यम के रूप में, प्रशासन में, न्याय और न्यायालय में हिंदी का प्रयोग बढ़े, वैश्वीकरण के प्ररिप्रेक्ष्य में हिंदी जन संचार तथा सूचना क्रांति के क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग बढ़े, हिंदी विश्वभाषा बने, विदेश में हिंदी का अध्ययन–अध्यापन सार्थक दिशा में आगे बढ़े, यह क्या मानकीकरण के बिना संभव हो सकता है।

हमने हिंदी को बचाए बनाए तो रखा, किन्तु हिंदी को जीवंत बनाने की चेष्टा नहीं की। बोलचाल की सहज प्रवाहमयी हिंदी को हमने संस्कृत शब्दों से लादकर इतना बोझिल बना दिया कि वह जनता से दूर चली गई। हिंदी के शुद्धिकरण के प्रयास में हमने उर्दू का तिरस्कार किया, जो जनता की भाषा थी। यह वह उर्दू नहीं थी, जो पाकिस्तान की उर्दू है। जिसमें हिंदी के समान अरबी फारसी के शब्दों को ठूँस कर भरा गया था और जो सामान्य जनता को आज भी समझ में नहीं आती। कबीर के शब्दों में कहा जाए तो 'अरे इन दोऊन राह न पाई'। हिंदी प्रदेश की बोलचाल की भाषा वस्तुतः देवनागरी लिपि में हिंदी और फारसी लिपि में उर्दू है। अनुवादी हिंदी ने इसे और भी अस्पष्ट, अबोध और असहज बना दिया।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में विदेश में हिंदी की दूसरी बड़ी चुनौती हिंदी भाषा का विदेशी भाषा के रूप में विधिवत शिक्षण–प्रशिक्षण है। यह खेद का विषय है कि स्वतंत्रता के 71 वर्ष बाद भी देश में हिंदी के ऐसे बहुत कम भाषा शिक्षण संस्थान हैं, जिनमें विदेशियों के लिए हिंदी भाषा के विविध वैकल्पिक पाठ्यक्रम हों, जिनको पूरा कर कोई भी विदेशी छात्र हिंदी माध्यम से चलने वाले चिकित्सा, इंजीनियरी तथा अन्य विज्ञान के विषयों को पढ़ने समझने की अपेक्षित योग्यता प्राप्त कर सके। ऐसे छोटे कैप्सूल कोर्स भी नहीं हैं, जिन्हें पूरा करके एक विदेशी अल्प समय में भाषा पर इतना अधिकार प्राप्त कर सके कि वह भारत में यात्रा कर सके, अपने उपयोग की सामग्री खोज सके, हिंदी समाचारपत्र पढ़कर भारत के समाचार जान सके। विदेश में हिंदी

विभिन्न विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती है, वहाँ हिंदी की पाठ्य सामग्री भी भाषा विशेषज्ञ तैयार कर रहे हैं, किन्तु यहां आकर उन्हें निराशा ही हाथ लगती है। न ही भाषा शिक्षण की आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति में प्रशिक्षित प्राध्यापक, न उपयुक्त पाठय सामग्री, न ही उपयुक्त संदर्भ ग्रंथ और न ही उपयुक्त शिक्षण व्यवस्था। सच्चाई तो यह है कि विदेशी भाषा के रूप में हिंदी का शिक्षण राष्ट्रीय महत्व का है और विश्वभाषा हिंदी की यह मूल भित्ति है। इस पर राष्ट्रीय स्तर पर विचार होना चाहिए, देश–विदेश में हिंदी शिक्षण पर क्या कार्य हो रहा है, इसका सतत् पुनरीक्षण एवं मूल्यांकन होता रहे, विदेशी हिंदी प्रशिक्षकों के पुनश्चर्या पाठ्यक्रम हों, जिनमें उनकी समस्याओं पर विचार हो और योजनाबद्ध तरीके से अपेक्षित लक्ष्य के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकें तैयार की जाएं। जर्मनी, फ्राँस, इंग्लैंड, चीन, जापान, रूस आदि देश किस प्रकार अपने भाषा पाठ्यक्रम को देश–विदेश में नियंत्रित और संचालित करते हैं, यदि हम देखें तो वह हमारे लिए मार्ग दर्शक बन सकता है।

विश्व में हिंदी का प्रसार हो, हिंदी अध्ययन–अनुसंधान की दिशा में प्रगति हो– इसके लिए आवश्यक है कि हिंदी के संदर्भ ग्रंथ तैयार किए जाएँ। शोध के क्षेत्र में प्रगति हो, इसके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की होती है कि हमें पता हो कि अब तक विषय पर कितना कार्य हो चुका है, सामग्री कहाँ–कहाँ बिखरी पड़ी है और वह कहां उपलब्ध हो सकती है। आज की स्थिति यह है कि यदि कोई भाषा अनुसंधाता यह जानना चाहे कि विश्व के विभिन्न देशों में विविध भाषाओं में हिंदी भाषा पर क्या कार्य हुआ है तो हमारे पास कोई ऐसी सूची (बिबलियोग्राफी) उपलब्ध नहीं है। जो है वह भी केवल अंग्रेजी भाषा में हुए कार्यों का ही विवरण देती है। क्या आप ऐसी बड़ी और पूर्ण सूची की आवश्यकता महसूस नहीं करते, जिसमें हिंदी भाषा पर विश्वभर में हुए कार्यों का पूर्ण विवरण हो। अनुसंधान के लिए यह कार्य उपयोगी ही नहीं बल्कि अनिवार्य है। यह सूची तो इंटरनेट तक पर उपलब्ध होनी चाहिए, जिससे विश्व में कहीं भी बैठा व्यक्ति हिंदी पर शोध कार्य करते हुए सहज ही इसका उपयोग कर सके। विदेशी भाषाओं के कौन से कोश आज तक बने हैं, यह जानने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं है। हिंदी के विश्वव्यापी प्रसार के लिए आवश्यक है कि योजनाबद्ध ढंग से हिंदी के द्विभाषी कोश ग्रंथ तैयार हों, जिसमें भाषा विशेषज्ञों, भाषा वैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों तथा साहित्यकारों का सहयोग हो। आपको यह जानकार आश्चर्य होगा कि आज भी कोई अच्छा व बड़ा हिंदी–अंग्रेजी द्विभाषी कोश हिंदी में उपलब्ध नहीं है। एक जो डॉ0 आर. एस. मैकग्रेगर ने कई वर्ष पहले ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से प्रकाशित कराया था, एक मात्र उल्लेखनीय प्रयास है। क्या हम यह अनुभव नहीं करते कि जिस प्रकार ऑक्सफोर्ड, चैंबर्स, वेबस्टर्स के कोश विभाग प्रकाशन संस्थान के स्थाई विभाग के रूप में निरंतर कोश निर्माण में लगे रहकर अपने कोशों को पूर्ण और उपयोगी बनाने में प्रयत्नशील रहते हैं, उसी प्रकार हिंदी के कोश निर्माण का कार्य भी हो तो भी वह विश्व परिप्रेक्ष्य में सार्थक उपलब्धि हो सकता है?

भारत सरकार ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के व्यापक प्रचार–प्रसार के निमित्त अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना की गई, यथासंभव अनुदान भी दिया गया, किन्तु जिस लक्ष्य को लेकर उसकी स्थापना की गई थी क्या वह अपनी लक्ष्य सिद्धि तक पहुँच सका? विदेशी भाषा के रूप में हिंदी भाषा शिक्षण, हिंदी की विदेशी भाषिक शैलियों का अध्ययन विवेचन, हिंदी के विदेशी भाषा के साथ द्विभाषी कोशों का निर्माण, सर्जनात्मक हिंदी साहित्य का विदेशी भाषाओं में अनुवाद, विदेशी हिंदी पत्रकारिता को मार्गदर्शन व प्रोत्साहन अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के दायित्व क्षेत्र में है।

भाषा के वैश्वीकरण का एक मुख्य घटक अनुवाद है। आज तक भारत में कोई ऐसा राष्ट्रीय संस्थान नहीं, जिसका प्रमुख दायित्व साहित्यिक अनुवाद से जुड़ा हो। क्या भारत की भाषाओं की प्रमुख कृतियों का योजनाबद्ध तरीके से विदेशी भाषाओं में अनुवाद होता है? आज किस समकालीन हिंदी लेखक/कवि की कृति विदेशी भाषा में

अनूदित होती है इसका संबंध कृतिकार की कृति से नहीं उसके व्यक्तित्व से है, उसके संपर्क और समझौतों से है। मैं पिछले तीस वर्षों से विदेशी कृतियों का हिंदी में और हिंदी का विदेशी भाषाओं में अनुवाद करता हूँ। अंग्रेजी भाषा में अनूदित हिंदी कृतियों की सूची यदि आपकी निगाह में पड़ जाए तो बिना मेरे कहे ही आपको स्थिति स्पष्ट हो जाएगी, शायद इससे आप अपरिचित भी नहीं है। यह बात केवल ललित साहित्य के अनुवाद की ही नहीं बल्कि ज्ञान–विज्ञान तथा शास्त्रों के अनुवाद की भी है। जो अनुवाद आपके सामने आते हैं, कुछ अपवादों को छोड़कर वे ऐसे अनुवाद हैं जो कि अनूदित कृति को बिना मूल के समझा ही नहीं जा सकता। जहाँ लिखित साहित्य के अनुवाद का वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में महत्व है वहीं तत्काल भाषांतरण का भी। इसकी स्थिति तो और भी दयनीय है। अवधेय है कि भाषा ज्ञान प्राप्त करना अलग बात है और तत्काल भाषांतरण में निपुणता प्राप्त करना अलग बात।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी के विश्वव्यापी प्रसार की बात तो हम करते हैं किन्तु इस दिशा में ठोस प्रयास नहीं करते। हम कागजी योजनाएं बनाते हैं किन्तु उन्हें कार्यान्वित नहीं करते, कार्यान्वयन होता है तो उन्हें पूर्ण नहीं करते या कर नहीं पाते। हिंदी दिवस पर भाषण होते हैं, सभाएं होती हैं जो उत्सव का रूप तो लेती हैं, किन्तु कार्यगोष्ठी का रूप नहीं ले पातीं। यह संभव तभी होगा जब हमारी मानसिकता बदलेगी, हम अपनी हीनभावना से मुक्त होंगे। आवश्यकता है हिंदी के वैश्विक विकास के लिए एक ऐसी ठोस भूमिका तैयार करना कि हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचानी जाए। इस दिशा में विश्व स्तर पर कार्य हो रहा है, प्रगति दिख रही है किन्तु संकल्प सिद्धि के लिए ध्यान और धारणा दोनों की आवश्यकता है।

अभी तक जिस हिंदी की बात मैं कर रहा हूँ, जिसके लुप्त होने की मुझे निकट भविष्य में कोई संभावना नहीं दिखती वह हिंदी भारत की राजभाषा है और संपर्क भाषा है, किन्तु भारत के बाहर भी हिंदी कई देशों में भारतीयों द्वारा मातृभाषा के रूप में बोली जाती है जिसे कहीं पारया, कहीं फीजीबात, कहीं नैताली तो कहीं सरनामी के नाम से जानी जाती है। ये हिंदी की शैलियां, प्रवासी भारतीयों द्वारा विकसित की गई हैं, जो डेढ़ सौ वर्ष पूर्व गिरमिट प्रथा के अंतर्गत विदेश ले जाए गए थे। आज हिंदी के ये रूप भारतीयों की अभिव्यक्ति के माध्यम हैं। पारया जो तजाकिस्तान और उजबेकिस्तान में बोली जाती है और हिंदी की एक विदेशी भाषिक शैली है, उसके ऊपर अस्तित्व का संकट मंडरा रहा है। इसके बोलने वालों की संख्या अब मात्र तीन हजार रह गई है। फीजी बात की स्थिति पारया की तरह दयनीय नहीं है, पर उसके भी लुप्त होने की संभावना मुझे अभी से दिख रही है। फीजी में हिंदी और 'फीजीबात' को लेकर एक भाषाद्वैत की स्थिति पैदा हो गई है। शुद्ध तावादी भारत की परिनिष्ठित हिंदी की वकालत करते हुए वहाँ की हिंदी 'फीजीबात' का विरोध करते हैं और उनको यह बताना चाहते हैं कि उनकी हिंदी अपभ्रष्ट, टूटी–फूटी है और उसे छोड़कर उन्हें भारत की हिंदी सीखने, बोलने, पढ़ने का प्रयत्न करना चाहिए। यह स्थिति अच्छी नहीं है क्योंकि यदि ऐसा हम करते रहे तो एक शताब्दी में ही उनकी यह भाषा लुप्त हो जाएगी और भाषा के लुप्त होने का अर्थ है उस समुदाय की कला, संस्कृति और विचारों का लुप्त हो जानां। नैताली के साथ भी यही हो रहा है। अब वह दक्षिण अफ्रीका के नेताल प्रदेश में वहाँ के भारतीयों के लोकगीत 'चटनी' में ही सुरक्षित रह गई है। सूरीनाम की सरनामी हिंदी भी खतरे में है। उसके संरक्षण और संवर्धन का प्रयत्न आज की बड़ी आवश्यकता है। मुझे लगता है कि इन विदेशी भाषिक शैलियों को हमें तिरस्कार की दृष्टि से न देखकर प्रोत्साहित करना चाहिए क्योंकि अभी ये जीवंत भाषाएं हैं और हिंदी के वैश्विक रूप में इनकी विशिष्ट भागीदारी है।

कुल मिलाकर हिंदी को वैश्विक स्तर पर सम्मान के साथ स्थापित करने के लिये आवश्यक है कि उसके शिक्षण, प्रशिक्षण से लेकर ज्ञान संपदा को मजबूत किया जाये और पूरे आत्म सम्मान के साथ हिंदी भाषा का प्रयोग करने की पहल जरूरी है।

सन्दर्भ सामग्री

अंग्रेज़ी ग्रन्थ

Census of India 1971 Census Centenary Monograph No. 10 Language handbook on Mother Tongues in Census pp 1-260

Emaneu, M.B. India-A LinguisticArea- Language in Culture and Society, Harper International Edition 1966

Fergusan, C.A.National Social Linguistic Profile Formulas Ed.Bright, W. Socio Linguistics 1966

http://www.ethnologue.com/Languge Index.asp

verma, sunanda Interview with Dr. V. K. Verma, Published in India Samvad 07.01.2017

http://www.indiasamvad.co.in/special-stories/far-from-govt-cry-a-linguist-built-bridges-with-nri-19305

Verma, Vimlesh Kanti: Studies on Hindi-A Comprehensive Bibliography, Pilgrims Publishing, Varanasi 2007

Wurm, S.A.A tlas of the worlds languages in Danger of Disappearing, Unesco Publishing, 1996

Wurm, S.A. Endangered Languages, Multilingualism and Linguistics 1999

हिंदी ग्रन्थ

चौधुरी, अनंत, नागरी लिपि और हिंदी वर्तनी, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 1992

बाहरी, हरदेव, शुद्ध हिंदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

वर्मा, रामचंद्र, अच्छी हिंदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2008

वर्मा, विमलेश कान्ति, हिंदी और उसकी उपभाषाएँ, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली 1995

वर्मा, विमलेश कान्ति, राष्ट्रभाषा से राजभाषा तक, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली 1957

वर्मा, विमलेश कान्ति, हिंदी और उसकी उपभाषाएँ, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली **1996**

वर्मा, विमलेश कान्ति : फ़ीजी में हिंदी स्वरूप और विकास, पीताम्बरा प्रकाशन, दिल्ली **2000**

वर्मा, विमलेश कान्ति प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2016

वर्मा, विमलेश कान्ति, फीजी बात– हिंदी की एक विदेशी भाषिक शैली, बहुवचन महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा अंक अंक 46 जुलाई– सितम्बर **2015** पृष्ठ 07–25

वर्मा, विमलेश कान्तिः गिरमिटिया हिंदी : भाषा और साहित्य, प्रवासी जगत केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, वर्ष 1, अंक 1, सितम्बर– नवम्बर **2017** पृष्ठ 81–100

वर्मा, विमलेश कान्ति, सरनामी हिंदी – साहित्यिक परिधि, चक्रवाक् (त्रैमासिक), सुलभ इंटरनेशनल, नई दिल्ली, अंक 40–41, पृष्ठ 22–39 अप्रैल – 2017 (संयुक्तांक) पृष्ठ 7–9

वर्मा, विमलेश कान्तिः गिरमिटिया हिंदीःसरक्षण और संवर्धन, गगनांचल, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, नई दिल्ली वर्ष 40, अंक 1–2 जनवरी–अप्रैल **2017** (संयुक्तांक) पृष्ठ 7–9

वाँ वर्मा, विमलेश कान्तिः हिंदी की विदेशी भाषिक शैलियाँ, राजभाषा भारती स्वर्ण जयन्ती विशेषांक जनवरी 2000 वर्ष 22, अंक 87 जनवरी **2000** पृष्ठ 32–41

73–वैशाली, पीतमपुरा, दिल्ली –110034,

पं. सं. 3246/77
आईएसएसएन नं. : 0970–9398

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8)
प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम
समाचार पत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम
''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, दिल्ली
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशक का नाम व पता	डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001 दूरभाष : 011–23438159
6.	संपादक (पदेन) का नाम व पता	डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, डॉ. धनेश द्विवेदी घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–
प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, 1ई/18, झण्डेवालान विस्तार, चौथी मंजिल, नई दिल्ली–110055

हिंदी का प्रवासी साहित्य : सामान्य अवलोकन

– डॉ. राजेश कुमार 'माँझी'

हम सभी जानते हैं कि अनेक भारतीयों ने बीसवीं सदी के आरंभ में रोजगार और धनोपार्जन के लिए बेगानी धरती की ओर रुख किया अर्थात् उन्होंने प्रवास को धारण किया। उज्ज्वल भविष्य की कामना और धनोपार्जन की इच्छा उन्हें यूरोपीय और अमेरिकी महाद्वीपों में लेकर गई। बीसवीं सदी में अनेक भारतीय अमेरिका, लंदन, थाईलैंड, न्यूजीलैंड और अन्य देशों में पहुँचे। पहले पहल प्रवास धारण करने वाले लोग कम पढ़े–लिखे होते थे और कई बार उन्हें बलपूर्वक भी प्रवासी बनाया गया, जिसका उदाहरण कैरेबियन देशों अर्थात् फिज़ी, मॉरीशस, सूरिनाम, गयाना, त्रिनिडाड आदि देशों में शर्तबंदी प्रथा के अंतर्गत भारत से ले गए गिरमिटिया मज़दूर हैं। इसके उपरांत जिन भारतीयों ने प्रवास धारण किया उन्हें बलपूर्वक नहीं अपितु विदेशी धरती की चकाचौंध और आर्थिक स्थिति ने आकर्षित किया जिस कारण वे वहाँ पहुँचे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अनेक भारतीय रोज़ी–रोटी और नवीन अवसरों की तलाश में, आर्थिक साधनों को प्राप्त करने के लिए तथा बेहतरीन जिंदगी व्यतीत करने के लिए, अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिए अपनी भारतीय धरती को छोड़कर लंदन, अमेरिका आदि देशों में पहुँचे परंतु उनका दिल सदैव भारत के लिए धड़कता रहा। वे सशरीर भले ही विदेशों में रहे परंतु मन भारत की सभ्यता, संस्कृति, रीति–रिवाज आदि के इर्द–गिर्द ही घूमता रहा। इसी कारण कुछ प्रवासी भारतीयों में साहित्य सृजन की तीव्र इच्छा जागृत हुई होगी। इसी कारण आज हम देखते हैं कि ज्यादातर हिंदी के प्रवासी साहित्यकार चाहे वह अभिमन्यु अनत हों, अर्चना पैन्यूली, राज हीरामन , स्नेह ठाकुर, सुषमा बेदी, तेजेन्द्र शर्मा, पूर्णिमा बर्मन, पुष्पिता अवस्थी, कादंबरी मेहरा हों या कोई और प्रवासी साहित्यकार, उन सभी लोगों का ज्यादातर साहित्य भारत की सभ्यता, संस्कृति, परंपरा, रीति–रिवाज और प्रकृति के चारों ओर घूमता है।

यह भी सर्वविदित है कि व्यक्ति या लेखक अपने संस्कार अपने घर–परिवार और परिवेश से ही ग्रहण करता है। और विभिन्न कारणों से जब वह अपने जन्म स्थान, मातृभूमि से अलग होकर एक नए देश काल और परिवेश में चला जाता है, वहां जीवनयापन करने लगता है तब परिवेश बदल जाने से प्रवासी के जीवन में विषमताएं और जटिलताएं आ जाती हैं । इस कारण उसके नए संस्कार, नए दृष्टिकोण, नए विचार और नई सोच व नई मान्यताएँ उसके मन में बनने लगती हैं। वह पुराने मूल्यों को नए दृष्टिकोण से देखने लगता है। हिंदी के प्रवासी लेखकों के काव्य साहित्य और गद्य साहित्य में ये सारी बातें देखने को मिलती हैं। विदेशों में बसे हिंदी या अन्य किसी भी भाषा के साहित्यकार विभिन्न सामाजिक परिवेशों से प्रभावित होते हैं और इन परिवेशों और परिस्थितियों को अपनी रचना का विषय बनाते हैं जिस कारण उनके द्वारा रचित साहित्य प्रवासी साहित्य अर्थात् डायस्पोरा लिटरेचर कहा जाता है।

तमाम विषम परिस्थितियों में रहते हुए प्रवासी लेखक द्वारा हिंदी में लिखना बहुत ही कठिन कार्य है। परंतु सच्चाई यह है कि अच्छा साहित्य उसी भाषा में लिखा जाता है जिसके संस्कार हमें बचपन से मिले हों। यदि मातृभाषा में न लिखकर किसी और भाषा में साहित्य की रचना की जाए तब वह साहित्य इतना संवेदनशील नहीं होता है । हिंदी का प्रवासी साहित्य इस कसौटी पर खरा उतरता है क्योंकि उसे पढ़कर तनिक भी यह नहीं लगता है कि वह भारतीय हिंदी लेखकों की रचनाओं से किसी भी रूप में कमतर है।

इन उपरोक्त बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रवास की क्रिया एक ही समय व्यक्ति, देश और विदेश से संबंधित होने के कारण विश्वव्यापी व्यवहार बन चुकी है। सामान्यतः किसी भी देश के लोग देश की आर्थिक अस्थिरता की स्थिति में प्रवास धारण करते हैं। प्रवास धारण करने के संकल्प के पीछे पश्चिमी देशों के पूंजीवादी व्यवहार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रवास के अन्य बहुत से कारण और आयाम भी रहे हैं। वर्तमान समय में अनेक शिक्षित लोग विदेश में जाकर काम करने और बसने की इच्छा रखते हैं। अपने देश में जन्मे, पले–पढ़े इन सभी लोगों के लिए पराए देश में जाकर उस देश की सभ्यता और संस्कृति के साथ सामंजस्य बिठाना अत्यंत कठिन होता है। प्रवासी लोगों को बहुत सारी सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और सांस्कृतिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अपने लम्बे प्रवासकाल के दौरान संवेदनशील प्रवासी रचनाकार विदेशों में रह रहे भारतीयों के जीवन को बड़ी नज़दीकी से देखते और परखते हैं। वर्तमान समय में प्रवासी भारतीयों को धन की कोई कमी नहीं है और वे बहुतायत सुविधाओं को भोग रहे हैं। इन सुविधाओं के बावजूद भी वे प्रवासी भारतीय लोग बेगानी धरती पर बेगाना जीवन जीने को विवश हैं। अतः उनके सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक और नैतिक स्थिति के बारे में प्रवासी रचनाकारों ने जो कुछ भी लिखा है वह उनके द्वारा भोगा हुआ यथार्थ ही है। उनके साहित्य को पढ़कर यह प्रतीत होता है कि विदेशी सुखमय जीवन जीने के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। परन्तु यह कीमत चुकाए जाने के बाद भी किसी भी प्रवासी को चैन की नींद नहीं आती है क्योंकि उसका मन अपने वतन से जुड़ा रहता है। अपने जीवन की परंपराओं, नैतिक जीवन मूल्यों और आदर्शों को त्यागकर किसी पराये देश की संस्कृति, नैतिकता और जीवन मूल्यों को अपने दिल में उतार पाना किसी भी व्यक्ति के लिए अत्यंत कठिन होता है। बेगानी धरती की चकाचौंध व्यक्ति को ऐश–ओ–आराम की ज़िंदगी, सुख–सुविधा, धन–दौलत तो प्रदान कर सकती है परंतु उनके मन–मस्तिष्क की अशांति, असुरक्षा की भावना तथा भटकन को दूर नहीं कर सकती।

इस बात की चर्चा की जा चुकी है कि बेगानी धरती पर रोजगार की तलाश या अधिक आर्थिक साधनों की प्राप्ति की लालसा में आए व्यक्तियों को प्रवासी कहा जाता है। अपना देश छोड़कर बेगाने देश में स्थायी अथवा अस्थायी तौर पर बस जाने वाला व्यक्ति ही प्रवासी कहा जाता है। यह भी सर्वविदित है कि वर्तमान समय में प्रवासी भारतीयों ने विदेश में अपना एक अलग समाज निर्मित कर लिया है। विदेश में बसने वाले भारतीयों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। उनके समक्ष सबसे बड़ी समस्या सांस्कृतिक और भाषाई भेदभाव की है। प्रवासी भारतीयों के सामने सांस्कृतिक संकट के तीन पहलू हैं : पहला पहलू बेगानी धरती पर भारतीय संस्कृति से निरंतर जुड़ा रहा जाए और दूसरा पहलू यह है कि बेगानी धरती की संस्कृति को पूर्ण रूप से छोड़ दिया जाए। तीसरा पहलू है कि सांस्कृतिक परिवर्तन जिसके अंतर्गत बेगानी धरती की संस्कृति को अपने मानसिक और परिवेश की आवश्यकतानुसार ढालकर स्वीकार कर लिया जाए।

हिंदी के साहित्य में हम यह देखते हैं कि विदेशी परिवेश के अनुभवों से उत्पन्न द्वंद और उनसे उत्पन्न प्रतिक्रियाएं साहित्य सृजन के लिए प्रेरणास्रोत साबित हुई हैं। प्रवासी साहित्य के अंतर्गत रचित कविताओं, कहानियों, उपन्यासों, नाटकों आदि में नए अनुभव की झलक दिखाई देती है, जिससे अनेक विचार उत्पन्न होते हैं जो हमारे लिए आकर्षण का केंद्र बनते हैं। प्रवासी भारतीय, विदेश में रोजमर्रा की जिंदगी में अनेक समस्याओं का सामना करता है जैसे कि भाषा की समस्या, भोजन की समस्या, महंगी शिक्षा, निम्न आर्थिक स्तर, असुरक्षा की भावना और आवास की समस्या। इन सभी समस्याओं का वर्णन प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में किया है । इन उपरोक्त बातों के साथ–साथ यह भी ध्यातव्य है कि बेगानी धरती में प्रवासी भारतीय अलगाव की स्थिति में जी रहे हैं। अलगाव वह स्थिति है जब व्यक्ति सामाजिक अस्तित्व से विरक्त हो जाता है। बेगानी धरती पर प्रत्येक प्रवासी भारतीय किसी न किसी

रूप से अलगाव की स्थिति से जूझ रहा है। प्रवासी लेखकों के साहित्य में अलगाव के विभिन्न रूप देखने को मिलते हैं जैसे कि अकेले आदमी का अलगाव, सांस्कृतिक अलगाव और सामाजिक संबंधगत अलगाव आदि।

इसके साथ–साथ यह भी सर्वविदित है कि आगत दुःख अर्थात् आने वाले दुःख से अनिष्ठ की आशंका होने पर बचने की मनोवृत्ति को भय की संज्ञा दी जाती है। भय आने वाले भीषण कष्ट की आशंका से उत्पन्न होता है अथवा ऐसी परिस्थिति जिसका सामना व्यक्ति के लिए असंभव नहीं तो मुश्किल अवश्य हो जाता है। यह भय अनेक प्रवासी लेखकों की रचनाओं में देखा जा सकता है।

हम यह भी जानते हैं अपने परिवेश से असुरक्षा का भाव मृत्युबोध होता है। प्रवासी भारतीय बेगानी धरती पर रहते हुए कुंठा, अकेलेपन और तनाव को भोगते हुए इस प्रकार के मनोविकार का शिकार हो जाते हैं। आज के तकनीकी परिवेश में भी व्यक्ति कुंठाग्रस्त है। पश्चिमी समाज का बाह्य और आंतरिक पर्यावरण का स्वरूप कई बार प्रवासी भारतीय व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं होता। इसलिए वह विगत अनुभवों के आधार पर इन आवश्यकताओं की तृप्ति के लिए स्वयं प्रयास करते हैं और विफल होने की स्थिति में कुंठाग्रस्त हो जाते है। इस कुंठाग्रस्त स्थिति का भी जिक्र अनेक प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में किया है।

हम यह भी जानते हैं कि वर्तमान समय में प्रवासी भारतीय अपने विदेशी जीवन मूल्यों की ओर चिंतित होता जा रहा है। एक तो वह अपने मूल से पूर्ण रूप से टूटने में असमर्थ होता है और साथ ही प्रवासी होने की हालत में बेगानी संस्कृति को पूर्ण रूप से अपनाना उसकी मानसिक समर्थता से दूर की बात होती है। पश्चिमी देशों की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति प्रवासियों को अंदर से हिलाकर रख देती है। प्रवासियों को कदम–कदम पर पूर्व के मानसिक मूल्य टूटते नज़र आते हैं अर्थात् प्रवासी विदेशी धरती पर अपने सांस्कृतिक मूल्यों को टूटता हुआ महसूस करते हैं। यह टूटन भी प्रवासी साहित्य में उभरकर आया है और अभिमन्यु अनत की रचनाएं इसका ज्वलंत उदाहरण हैं।

विदेशी जीवन की सुख–समृद्धि और विदेशियों के उच्च स्तरीय जीवन को देखकर प्रवासी भारतीयों के मन में हीनता की भावना उत्पन्न हो रही है, जिसका वर्णन प्रवासी लेखकों ने बहुत ही रोचक ढंग से किया है। प्रवासी भारतीय अपने जीवन स्तर को विदेशियों के जीवन स्तर से मिलाना चाहते हैं परंतु विभिन्न कारणों से वे ऐसा नहीं कर पाते हैं। कठिन परिश्रम के बावजूद भी वे जीवन के सुख–साधनों को नहीं जुटा पाते हैं तब विदेशियों के जीवन स्तर से तुलना करने पर हीनता का अनुभव करने लगते हैं। यह हीन भावना उनके साथ हरदम बढ़ती रहती है। यही कारण है कि हीनभावना से संबंधित अनेक रचनाएं प्रवासी साहित्य में देखने को मिलती हैं ।

यह भी ध्यातव्य है कि प्रवासी भारतीय बेगानेपन का शिकार हो रहे हैं। बेगानगी मनुष्य की मानसिकता का अटूट हिस्सा है जो परिस्थितियों की अनुकूलता और प्रतिकूलता के आधार पर उत्पन्न होती है। यह भी सत्य है कि बेगानगी शारीरिक न होकर मानसिक होती है। पुराने विश्वासों के टूटने और नवीन विश्वासों के स्थापित होने के बीच की मानसिक अवस्था का नाम बेगानगी है। बेगानगी युक्त मनुष्य शारीरिक तौर पर अपने स्थान पर भटकन, निराशा और उदासीनता से ग्रस्त होता है। प्रवासियों में पनप रही बेगानगी का कारण नस्ली भेदभाव ही है, जिसका उल्लेख अनेक प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं में किया है। नस्ली भेदभाव की स्थिति में व्यक्ति अंदर से टूट जाता है। अनेक बार यह भी देखने में आता है कि जब मनुष्य अपनी पहचान गंवा देता है तब ही वह किसी अन्य स्थिति को ग्रहण करता है। उसके लिए उसकी भारतीय पहचान महत्वपूर्ण है परंतु परिस्थितियों के अनुकूल उसे अपनी पहचान गंवानी पड़ती है, जिसके कारण उसका अंदर से टूटना स्वाभाविक होता है। पारंपरिक मूल्यों को कायम रखने की इच्छा में नई संस्कृति में जन्मी और युवा हुई प्रवासियों की नवीन पीढ़ी जब उनकी परंपरा

को तथा संस्कृति और सभ्यता को अपनाने से इंकार कर देती है तब इस स्थिति में मनुष्य के भीतर बेगानापन उत्पन्न होने लगता है। इन सभी बातों की चर्चा प्रवासी लेखकों की रचनाओं में हुई है।

प्रवासी लेखकों की रचनाओं के बारे में एक और बात यह महत्वपूर्ण है कि उनकी अधिकतर रचनाएं अतीत के प्रति प्रेम से ओत–प्रोत है। सोच में अथवा वास्तविक रूप में अपने पुराने घर, बीते हुए समय या अपने दोस्तों और रिश्तेदारों के पास लौट जाने की इच्छा प्रवासी भारतीयों में सदैव बनी रहती है। अपने घर से दूर जाने की पीड़ा भारतीय प्रवासी लेखकों की रचनाओं में देखी जा सकती है।

प्रवासियों के समक्ष पुरानी स्मृतियों में डूबने का प्रमुख कारण भौगोलिक अंतर होता है। नवीन वातावरण में परिवेश से एकदम रिश्ता स्थापित करना किसी के लिए कठिन होता है और बीते समय से उसका रिश्ता बहुत ही प्रगाढ़ होता है। अतीत के प्रति मोह उसके नवीन परिवेश से सामंजस्य स्थापित करने के रास्ते में बाधा उत्पन्न करती है तब उसके लिए स्वदेश के प्रति मोह का तत्व और भी ज़्यादा कष्टदायक हो जाता है। ऐसी स्थिति में प्रवासी भारतीय के मन में घर लौट आने की इच्छा जागृत होती है। प्रवासी लेखकों की रचनाओं को पढ़कर उनकी इच्छा को भी आसानी से जाना जा सकता है। भारत में जन्मे और बाद में विदेश पहुँचे भारतीय कभी भी पूरी तरह से पश्चिमी समाज को अर्थात् पश्चिमी देशों की सभ्यता, संस्कृति को नहीं अपनाते हैं क्योंकि उनके मन में उनका अतीत समाया हुआ होता है। यह ऐसी मनोस्थिति होती है जो व्यक्ति को नवीनता से सामंजस्य स्थापित करने के रास्ते में एक प्रतिबिंब के तौर पर खड़ी मिलती है। जैसे ही व्यक्ति का नवीनता से सामंजस्य स्थापित होता है अथवा होने की संभावना होती है तब इस तत्व का अस्तित्व अस्त–व्यस्त हो जाता है।

उपरोक्त बातों के साथ–साथ यह बात भी महत्वपूर्ण है कि असुरक्षा शब्द सदियों से मनुष्य के साथ जुड़ा रहा है और आज भी जुड़ा हुआ है चाहे वह शिक्षित व्यक्ति हो या अशिक्षित, परंतु उसके साथ असुरक्षा की भावना सदैव जुड़ी रहती है। आश्चर्य की बात यह है कि आज अनेक विकसित देश के व्यक्ति भी असुरक्षा की भावना से ग्रस्त हैं। ऐसी स्थिति में किसी भी प्रवासी भारतीय के लिए असुरक्षा की भावना का उसके मन में होना कोई नवीन बात नहीं है। प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रवासियों की असुरक्षा की भावना को उजागर किया है।

प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं में नैतिक मूल्यों की टकराहट को भी रेखांकित किया है। मनुष्य जीवन में नैतिकता एक सामाजिक देन है। आज विकास के नाम पर नैतिक मूल्य टूटते जा रहे हैं और व्यक्ति बड़ो का आदर–सत्कार भूलने लगा है। इन सभी बातों की ओर प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारा ध्यान आकर्षित किया है। प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं से यह सिद्ध किया है कि किसी भी व्यक्ति का सर्वांगीण विकास अपने घर–परिवार और समाज से जुड़कर ही हो सकता है। कोई भी व्यक्ति एकाकी जीवन जीकर या अलग रहकर उत्कर्ष तक नहीं पहुँच सकता है। शिखर तक पहुँचने के लिए व्यक्ति को आधार की आवश्यकता होती है और नैतिक मूल्य व्यक्ति को आधार प्रदान करते हैं। नैतिकता द्वारा ही मूल्यों की पहचान होती है। नैतिकता एवं मूल्यों में संबंध होना स्वाभाविक है। अपनी संस्कृति, सभ्यता, परंपरा और जीवन मूल्यों को त्यागकर कोई भी व्यक्ति ऊँचाई को प्राप्त नहीं कर सकता है। इसका प्रमाण प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं के द्वारा दिया है। यह भी सत्य है कि नैतिक मूल्य मनुष्य के जीवन पर निर्भर होते हैं तथा जब–जब जीवन व उसकी परिस्थितियों में परिवर्तन होता है तब–तब मनुष्य के नैतिक मूल्य बदलते हैं।

वर्तमान समय में प्रवासी भारतीयों के जीवन और उनकी भौतिक और सामाजिक परिस्थितियों में बहुत बड़ा परिवर्तन आया है। इसका कारण पश्चिमी समाज में विज्ञान के क्षेत्र में तीव्र प्रगति, तकनीकी विकास, यातायात के साधन, व्यवसाय, आर्थिक व्यवस्था का पुनर्गठन, औद्योगिकीकरण और समाज के नवीन वर्गों के प्रादुर्भाव के साथ–साथ समाचारपत्रों और राष्ट्रवाद का उग्र रूप आदि है। इन सबसे प्रवासी भारतीय

अपने आपको अलग नहीं रख सका है, जिसके कारण नैतिक मूल्यों में टकराहट शुरू हो गई है। प्रत्येक व्यक्ति सुखमय जीवन जीने के लिए अनेकानेक नैतिक–अनैतिक कार्यों में संलिप्त होता चला जा रहा है। इस कारण रिश्तों में भी बेगानापन बढ़ गया है और रिश्तों में कड़वाहट घुल गई है। आज नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। पश्चिमी समाज के व्यस्त जीवन में स्वार्थ और व्यक्तिवाद का आधिपत्य हो चुका है जिसका वर्णन प्रवासी लेखकों ने कुशलतापूर्वक किया है। इन सभी प्रवृत्तियों ने मानव को अंदर से नीरस और खोखला बना दिया है। पश्चिमी समाज में नैतिक मूल्य पूर्ण रूप से टूट चुके हैं। आजकल समानता, भाईचारा और विश्व शांति के जो नारे बुलंद किए जाते हैं वे पिछले युग में सुनने को नहीं मिलते थे जिसका वर्णन प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में किया है। इन रचनाकारों ने अपनी प्रथाओं, रीति–रिवाज़ों और संस्कृति तथा सांस्कृतिक संस्थाओं को बचाकर रखने की कोशिश अपनी रचनाओं के माध्यम से की है ताकि पारंपरिक नैतिक मूल्य नई पीढ़ी तक सही सलामत रूप से पहुँच सकें। प्रवासियों की पहली पीढ़ी किसी भी प्रकार से अपने समाज को पराई धरती पर जीवित रखना चाहती है पर उनके समक्ष नैतिक मूल्यों की समस्या बनी हुई है कि क्या उनकी नई पीढ़ी परंपरागत जीवन मूल्यों को अपने में आत्मसात कर सकते हैं या नहीं। ये सारी मनोदशाएं प्रवासी लेखकों की रचनाओं में प्रतिबिंबित हुई हैं ।

इन सभी बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिंदी में प्रवासी साहित्य यद्यपि नवयुग का साहित्यिक विमर्श है, परंतु विद्वानों की मानें तो इसका आरंभ प्रेचमंद की 'यही मेरी मातृभूमि है' (1908) तथा 'शूद्रा' (1926) कहानियों से होता है। इन कहानियों में अमेरिका से लौटे भारतीय प्रवासी तथा मॉरीशस ले जाए गए भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की कहानियाँ हैं। फिज़ी के संबंध में प्रवासी तोताराम और पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी की पुस्तकें प्रकाशित हुईं और 'चाँद' जनवरी, 1926 में प्रकाशित ' प्रवासी अंक' से भारतीय प्रवासी समाज की साहित्य में अवतारणा हुई। हिंदी साहित्य के संदर्भ में भारतेतर देशों मे मॉरीशस का हिंदी–साहित्य ही अपना स्थान बना सका और अभिमन्यु अनत के उपन्यासों, कहानियों, कविताओं आदि ने इसमें प्रमुख भूमिका अदा की। अभिमन्यु अनत की लगभग आधी शताब्दी की हिंदी–साधना से एक नई संवेदना तथा चिंतनधारा एवं परिवेश का साहित्य हिंदी–पाठकों तक पहुँचा, परंतु तब वह प्रवासी साहित्य के रूप में नहीं, बल्कि मॉरीशस के हिंदी–साहित्य के रूप में जाना जाता था, किंतु अमेरिका, इंग्लैंड आदि देशों के प्रवासी भारतीयों की हिंदी–रचनाओं और कृतियों के प्रकाशन का दौर जब शुरू हुआ तो इसके साथ ही प्रवासी साहित्य की चर्चा आरंभ हुई। इंग्लैंड में इस साहित्य के विकास में वहाँ रह चुके भारतीय उच्चायुक्त डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी का महत्वूपर्ण योगदान रहा। यही नहीं उन्होंने भारत रत्न अटल बिहारी वाजपेयी का एकल कवि–सम्मेलन भी कराया। ठीक इसी प्रकार के प्रयास अमेरिका में वेदप्रकाश 'बटुक', कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, रामेश्वर अशांत, गुलाब खंडेलवाल, विजय मेहता, उषा प्रियंवदा, सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, अंजना संधीर, देवेंद्र सिंह आदि ने किए और हिंदी भाषा एवं साहित्य की धारा प्रवाहित हुई। त्रिनिडाड आदि देशों में हरिशंकर आदेश ने हिंदी भाषा, साहित्य और संस्कृति के प्रचार–प्रसार के लिए महत्वपूर्ण कार्य किए।

अतः अंत में यह कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में हिंदी में प्रवासी साहित्य एक स्वीकृत तथा लोकप्रिय अवधारणा है और भारतेतर हिंदी–साहित्य की पहचान अब दो रूपों में होती है। पहला है प्रवासी भारतीयों का साहित्य और दूसरा है भारतवंशियों का साहित्य। भारतवंशियों के हिंदी साहित्य में मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनाडाड आदि देशों का साहित्य आता है, जिनका जन्म इन देशों में हुआ है और ये लेखक भारतभूमि और उसकी संस्कृति, धर्म, परंपराओं आदि से स्वयं को जोड़े हुए हैं और प्रवासी साहित्य में अमेरिका, इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, नीदरलैंड, नार्वे, डेनमार्क आदि देशों में भारतीय प्रवासियों की पहली पीढ़ी का साहित्य आता है, जो बेहतर जीवन एवं शिक्षा के लिए इन देशों में गए और अपने हिंदी–प्रेम के कारण उसे अपनी अभिव्यक्ति की

भाषा के रूप में अपनाया और साहित्य सृजन किया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ये दो भिन्न धाराएँ होने पर भी प्रवासी भारतीयों तथा उनके वंशजों का हिंदी–साहित्य, प्रवासी भारतीय संवेदना एवं चेतना का व्यापक परिदृश्य प्रस्तुत करता है, जिसे भारत और भारतीयता के विस्तार के रूप में देखा जाना चाहिए। हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि 'प्रवासी' शब्द में कोई दुर्भावना, अपमान अथवा कमज़ोर रचनाकार होने अथवा आरक्षण का भाव नहीं है। साथ ही 'प्रवासी' को विवादास्पद न बनाया जाए, यह प्रवासी साहित्य की विशिष्टता तथा हिंदी–साहित्य की एक धारा तथा एक नए विमर्श का प्रतीक है, जैसे कि आज हिंदी में दलित–विमर्श, स्त्री–विमर्श, आदिवासी–विमर्श आदि सर्वमान्य रूप से स्वीकृत हैं। वास्तविकता यह है कि 'प्रवासी' शब्द में एक आकर्षण तथा एक उत्सुकता का भाव निहित है, जो हिंदी–पाठक के मन में प्रवासी कृति को देखकर एकदम उत्पन्न हो जाता है कि देखें कि प्रवासी–देशों में भारतीय कैसे जीवन जी रहे हैं, उनका जीवन–संघर्ष क्या है तथा परदेश में स्वदेश की कोई सत्ता या अनुभूति है या नहीं? सच्चाई यह भी है कि वर्तमान समय में हिंदी–पाठक यह समझकर प्रवासी साहित्य को पढ़ता है कि वह एक अनजान देश में रहने वाले अपने भारतीयों के जीवन के साथ उस देश के जीवन और समाज को भी जानना चाहता है, क्योंकि जिस भी देश में प्रवासी भारतीय रहेगा, उस देश का परिवेश, जीवन–प्रणाली, संघर्ष, सरोकार आदि सभी उसके जीवन तथा सोच सबको प्रभावित करेंगे। प्रकृति हो या मानवीय समाज, संस्कृति हो या भाषा–साहित्य, जब इनके भिन्न–भिन्न रूपों का संगम होता है तो एक नई सृष्टि का जन्म होना स्वाभाविक सी बात है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रवासी साहित्य नए युग के विमर्श के साथ उसकी वाणी भी है, यह साहित्य की एक नव–भावधारा और नव–अवधारणा है, वह अपनी विशिष्टता और नवीनता में नया साहित्य–बोध है। उसकी संवेदना, जीवन–दृष्टि, परिवेश और सरोकार सभी नए हैं, उसमें स्वदेश–परदेश का द्वंद्व है, जो हिंदी–पाठक के लिए नया है, विदेशी धरती पर भारतीय जीवन मूल्यों से सीधी टकराहट है और कहीं–कहीं इन मूल्यों को रोपने की चेष्टा भी है और वह हिंदी–विश्व में जन्म लेने के कारण वैश्विक है। यही नहीं हिंदी का प्रवासी साहित्य वास्तविक अर्थ में हिंदी–साहित्य को अंतरराष्ट्रीय स्वरूप प्रदान करता है। हिंदी में प्रवासी साहित्य की एक स्वतंत्र सत्ता है तथा भारतेतर हिंदी–साहित्य की पहचान है। अगर हम प्रवासी साहित्य को हिंदी साहित्य से दूर कर देंगे तो हिंदी के प्रवासी लेखकों के साथ नाइंसाफी होगी। आज समय इस बात का है कि हमारे सभी प्रवासी साहित्यकारों को अपनी इस विशिष्ट पहचान तथा विशिष्ट साहित्यिक अस्मिता पर गर्व की अनुभूति होनी चाहिए कि उन्होंने हिंदी–साहित्य की मुख्य धारा में अपनी पहचान को सशक्त एवं स्थायी बना लिया है और अब इनका साहित्य भारत के विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में स्थान पा रहा है तथा उनके द्वारा लिखा गया साहित्य शोधार्थियों को आकर्षित कर रहा है।

वाँ **संदर्भ–**

1. साहित्य अमृत, सितंबर 2015, नई दिल्ली.
2. डॉ. कमल किशोर गोयनका, संपादक, प्रवासी साहित्य जोहान्सबर्ग से आगे, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, 2015.
3. आधुनिक साहित्य, अंक 16, अक्टूबर–दिसंबर 2015, नई दिल्ली
4. सुषम बेदी के कथा–साहित्य में प्रवासी भारतीय समाज के विविध पक्ष, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, 2010.
5. डॉ. कमल किशोर गोयनका, संपादक, हिंदी भाषा स्वरूप शिक्षण वैश्विकता, भारतीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2015.

हिंदी अधिकारी और संपादक–जामिया दर्पण
जामिया मिल्लिया इस्लामिया(केन्द्रीय विश्वविद्यालय),
नई दिल्ली –110025

विश्व में सांस्कृतिक सुगंध बिखेरता प्रवासी हिंदी–लेखन

–प्रो. पूरनचंद टंडन

हिंदी भाषा एवं साहित्य का इतिहास लगभग ग्यारह सौ वर्ष पुराना है। इन ग्यारह सौ वर्षों में हिंदी परिष्कृत हुई, विकसित हुई। उसके अनेक आयाम उजागर हुए। उसकी अनेक विधाएं उद्घाटित हुईं। भारत में हिंदी प्रयोक्ता निरंतर बढ़ते रहे और अहिंदी भाषी भारतीय क्षेत्र भी धीरे–धीरे हिंदी भाषी बनते चले गए। समेकित संस्कृति ने, राष्ट्रीय एकता ने, व्यवसाय तथा बाजार ने हिंदी भाषी क्षेत्रों, राज्यों का विस्तार किया। रोज़ी–रोटी ने, आजीविका–अर्जन ने भाषा के अवरोध कहीं समाप्त किए तो कहीं कम किए। आज लगभग सभी 29 भारतीय राज्यों में हिंदी बोधगम्यता की, विचार विनिमय की, लेन–देन की, व्यवसाय–व्यापार की भाषा बन गई है। इस स्थिति में आजादी के बाद से तो लगातार और निरंतर विकास हुआ है। किन्तु हर्ष और आनंद का विषय तो यह है कि प्रवासी भारतीयों ने हिंदी प्रयोग–अनुप्रयोग से विश्व में जो भाषाई–सांस्कृतिक परचम लहराया है, वह गौरव–गरिमा का विषय तो है ही, स्तुत्य एवं प्रणम्य भी है। पूरे विश्व में फैले भारतीय मूल के निवासियों, देशप्रेमियों, भाषा–भक्तों ने जो श्रद्धा, कर्मण्यता तथा रचनाधर्मिता प्रदर्शित की है उससे देश का, हिंदी–समाज का, सृजनशीलता का और हिंदी की प्रजनन शक्ति का मान–सम्मान बढ़ा है।

बरसों पहले रोजी–रोटी तथा आजीविका की तलाश अपने देश, समाज, परिवार तथा मित्र आदि को छोड़कर मॉरीशस, फीज़ी, सूरीनाम, गुयाना, ट्रिनिडाड एवं टुबेगों आदि देशों में गिरमिटिया मजदूर बनकर प्रवास पर गए प्रवासी भारतीयों ने अपने त्याग, संघर्ष एवं तप–साधना से जो मुकाम हासिल किए, अपने तथा परिवार आदि के लिए जो स्थान एवं सम्मान जुटाया वह निश्चित ही अप्रतिम है, दुर्लभ है। विदेशों में जाकर अपनी श्रम–साधना से भारतीय संस्कृति की जो सुगंध बिखेरी, जो श्रम–कण रूपी पराग विकीर्ण किया, उसी का परिणाम है कि आज दुनिया के अनेक देशों में भारतीयता का, भारतीय मूल्यों का, भारतीय संस्कृति का, भारतीय संगीत, नृत्य, गायन तथा भारतीय कलाओं का डंका तो बज ही रहा है, भारतीय भाषाओं का, हमारी सृजनशीलता का, हमारी रचनात्मक प्रतिभाओं का भी डंका बज रहा है। हजारों हिंदी लेखक आज विश्व के सैंकड़ों देशों में अपनी लेखनी का, अपनी सृजनात्मक कल्पना शक्ति का लोहा मनवा रहे हैं।

यदि प्रवासी हिंदी–लेखन के विस्तार को, प्रचार–प्रसार को, उसकी गंभीरता और गहराई को, उसके आयामों और दिशाओं को देखें तो निःसंदेह कहा जा सकता है कि यह हमारे भारतीय प्रवासियों की साहित्य एवं भाषा साधना का ही सुपरिणाम है कि हिंदी साहित्य का एक नया, नितांत मौलिक इतिहास निर्मित हो रहा है। किसी भी तरह से, गुणवत्ता हो या लेखन की मात्रा, वैविध्य हो या गंभीर्य और गहनता, किसी भी तरह से यह साहित्य भारतीय हिंदी लेखन से कम नहीं है।

यदि भारत देश के निकटस्थ देशों पर, पड़ौसी देशों पर दृष्टि डालें तो हिंदी लेखन की समृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले इन देशों में नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, श्रीलंका और म्यांमार (बर्मा) आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रवासी हिंदी लेखन के इतिहास को बल प्रदान करने वाले इन देशों में जो भारतीय मूल के रचनाधर्मी रह रहे हैं, वे गद्य–पद्य की हिंदी विधाओं में नियमित लेखन कर रहे हैं। उनका अवदान वंदनीय है।

यदि विश्व के अन्य महाद्वीपों पर नज़र दौड़ाएं तो प्रवासी हिंदी लेखन की समृद्धि के स्रोत हमें वहां भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। सर्वप्रथम यदि अमेरिकी महाद्वीप को देखें तो वहां 'संयुक्त राष्ट्र अमेरिका' में, 'कनाडा' में, 'मैक्सिकों' में और 'क्यूबा' में भी हिंदी–लेखन जोर–शोर से चल रहा है। यदि यूरोप–महाद्वीप की बात करें तो गर्व से कह सकते हैं कि हिंदी, हिंदी–लेखन और हिंदी संस्कृति का विस्तार वहां भी निरंतर हो रहा है। यूरोप में रूस, जर्मन, फ्रांस, बेल्जियम, हालैंड, नीदरलैंड, ऑस्ट्रिया, स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, फिनलैंड, इटली, पौलैंड, चेक, हंगरी, रोमानिया, बुल्गारिया उक्रेन तथा क्रोशिया आदि देशों में हिंदी अपने पांव प्रसार चुकी है। औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में, सांस्कृतिक सम्बंधों की दिशा में, लेखन–सृजन के संदर्भ में हिंदी भाषा और साहित्य अपनी रचनात्मक उपस्थिति दर्ज कर रहे हैं। कभी, किसी जमाने में हिंदी भारतीय सीमाओं में ही कम विस्तार पा रहीं थी, किन्तु अब अंतरराष्ट्रीय परिव्यापित ने हिंदी को पंख लगा दिए हैं। प्रवासी भारतीयों की भूमिका इस क्षेत्र में वंदनीय है, श्लाघनीय है।

हमें याद है कि हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्रवासी भारतीयों के लिए जो लड़ाई लड़ी थी, जो संघर्ष किया था, उससे इन भारतीयों को भी, उनकी भाषाओं को भी तथा भारतीय संस्कृति को भी वैश्विक लोक–स्वीकृति प्राप्त हुई। वर्ष 1909 में गांधी जी ने अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज्य' में भी भारतीय प्रवासियों की इस समस्या को उठाया और उजागर किया था। दक्षिण अफ्रिका में तो गांधी जी ने प्रत्यक्षतः इस समस्या के विरुद्ध अपनी–आवाज बुलंद की थी।

भारतीय चिंतकों ने, समालोचकों और रचनाकारों ने, समाज सुधारकों और देशभक्तों ने प्रवासी–भारतीयों के मुद्दों को, अपनी चुनौतियों और समस्याओं का अपने चिंतन का, लेखन का विषय बनाया। समय–समय पर पत्रकार भी इस दिशा में अपने योगदान करते रहें। पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने भी वर्ष 1914 से लेकर 1936 तक प्रवासी भारतीयों की समस्याओं की तरफ देशवासियों का, विश्व का ध्यानाकृष्ट किया तथा जागृति लाने का कार्य किया। भारतीय राजदूत डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी ने पूरे विश्व में फैले भारतीय प्रवासियों को ''भारतवंशी'' कहकर सम्बोधित किया। इससे सभी प्रवासी भारतीयों का मान–सम्मान बढ़ा और उन्हें भारतीय संस्कृति के अग्रदूत के रूप में देखा जाने लगा। जून 2003 में तो पहली बार 9 से 11 जनवरी तक तीन दिवस का आयोजन करते हुए ''प्रवासी भारतीय दिवस'' के आयोजन का शुभारंभ भी किया गया। यह एक नवीन सांस्कृतिक अध्याय लिखने का प्रयास था। आगे चलकर नियमित रूप से यह दिवस प्रतिवर्ष मनाया जाने लगा। अब तो 'प्रवासी भारतीय दिवस' पूरे विश्व में ही मनाया जाने लगा है।

यदि आकलन करें तो देख सकते हैं कि देश के बाहर रह रहे भारतीय प्रवासियों ने जो हिंदी लेखन, संपादन आदि के कार्य किए हैं वो सभी अद्भूत, अप्रतिम और अविश्वसनीय भी है।

इन प्रवासी भारतीयों ने हिंदी भाषा में कविता, कहानी, नाटक, एकांकी, निबंध, डायरी, आत्मकथा, भेंट वार्ता साक्षात्कार, यात्रा–वृतांत, लघुकथा लेखन, संस्मरण–लेखन, रेखाचित्र लेखन, अनुवाद कार्य, संपादन, संपादकीय लेखन, पुस्तक समीक्षा लेखन, शोध अनुसंधान कार्य, पाठ्य पुस्तक–लेखन, आलोचना कार्य, कोश–लेखन, बाल साहित्य लेखन, समाचार–पत्र प्रकाशन, फीचर लेखन, रेडियो लेखन, संवाद–लेखन, लोक साहित्य लेखन आदि–तमाम क्षेत्रों–विधाओं में अपनी–सृजनात्मक शक्ति का परिचय ही नहीं दिया, बल्कि लोहा भी मनवाया हैं।

आज अभिमन्यु अनंत, हरिशंकर आदेश, प्रो. पुष्पिता पूर्णिमा बर्मन, सुरेशचन्द्र शुक्ल 'आलोक', सुषभ बेदी, तेजेंद्र शर्मा, ब्रजेंद्र कुमार, भगत, शरद आलोक और मुनीश्वालाल चिंतामणि जैसे सैंकड़ों नाम हैं जो हिंदी भाषा और साहित्य–समृति में अपना अतुल्य योगदान कर रहे हैं। हिंदी में अनुसंधान सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में हो रहा है। स्नातक, स्नातकोत्तर स्तर का शिक्षण–प्रशिक्षण भी चल रहा है। भारतीय कलाओं को सिखाने हेतु, उनके प्रचार–प्रसार हेतु

अनेक संस्थान, कलाकेंद्र खोले जा रहे हैं। हिंदी तथा हिंदीतर भारतीय भाषाओं की शिक्षा, इसके साहित्य की शिक्षा, इनकों माध्यम रूप में पढ़ने–पढ़ाने की सुविधा दी जा रही है। गीराज में तो हिंदी सचिवालय, महात्मा गांधी संस्थान, टेगौर संस्थान आदि हैं हीं, आर्य समाज की स्थापना आदि भी उल्लेखीय है। हिंदी सिनेमा भी अतुल्य भूमिका निभा रहा है।

किंतु अब आवश्यकता है इस बात कि हम भारतीय हिंदी सेवी, समालोचक, इतिहासकार– इस प्रवासी भारतीय हिंदी लेखन को हिंदी साहित्य के इतिहास में ससम्मान एवं कृतज्ञतापूर्ण स्थान दें। इस दृष्टि से यह साहित्य और ये साहित्यकार अभी तक उपेक्षित रहे हैं। हिंदी–लेखन और लेखकों की राजनीति ने, खेमेबाजी ने प्रवासी हिंदी लेखन को वह स्थान नहीं दिया उसका वह हकदार रहा है। अभिमन्यु अनत को तो कहीं–कहीं हमने अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया। किन्तु विश्व भर में लिख रहे प्रबंध एवं मुक्ति लेखन को, उनकी गद्य–पद्य विधाओं को हमें अपने संस्थानों में, शिक्षा केंद्रों में, आलोच्य ग्रंथों में, इतिहास लेखन में शामिल करना होगा। उनके अवदान को पहचान देनी होगी।

आज आवश्यकता है कि भारत में एक 'प्रवासी हिंदी लेखन अकादमी' बनाई जाए। पूरे विश्व में हो रहे हिंदी लेखन का एक संग्रहालय बने, पुस्तकालयों में उनकी पुस्तकें खरीदी जाएं। उन्हें अलग खंड के रूप में स्थान भी दिया जाए। प्रवासी हिंदी लेखकों को प्रकाशन की सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। उनके लिए प्रकाशन–अनुदान की भी व्यवस्था कराई जानी चाहिए। क्यों न हम प्रवासी हिंदी लेखकों के नाटकों, एकांकियों का मंचन यहां विधिवत कराएं। उन्हें प्रोत्साहन एवं बल मिलेगा और हमें अपनी संस्कृति की सुंगध के वैश्विक बोध का लाभ मिलेगा।

हमें प्रवासी हिंदी लेखन को, लेखकों को, उनकी संरचनाओं को पुरस्कृत–सम्मानित करने के अवसर भी बढ़ाने चाहिए। केंद्रीय हिंदी संस्थान इस दिशा में बरसों से कार्य कर रहा है किन्तु सभी राज्यों की अकादमियों को इस दिशा में पहल करनी चाहिए। केंद्र सरकार को भी कुछ विशिष्ट कदम उठाने चाहिए। आज हिंदी के प्रवासी लेखन को भारत में तथा पूरे विश्व में शिक्षा का हिस्सा बनाने की भी आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों में यदि एक–विभाग ही इस प्रकार का खोला जाए तो उससे हिंदी के प्रवासी लेखन को बल मिलेगा।

विदेशों में रहकर हिंदी में लेखन कर रहे भारतीय मूल के इन रचनाकारों की प्रकाशित पुस्तकों को देश भी के पुस्तकालयों में पहुंचाने, खरीदने की व्यवस्था और सुविधा भी दी जानी चाहिए।

भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय को तथा राज्य स्तरों की सरकारों को यह भी करना चाहिए कि प्रवासी–हिंदी लेखकों को भारत आगमन पर रेडियो टीवी में अवसर दिए जाएं, मीडिया में उन्हें पर्याप्त आवाज दी जाए, उनके साक्षात्कार हों, संगोष्ठियां हों, चर्चा–परिचर्चा आदि का आयोजन हो ताकि देशवासी–उनके अवदान को जान सकें, उन्हें भी पहचान सकें। प्रवासियों द्वारा लिखित साहित्य पर देश के विश्वविद्यालय शोध करवाएं, ऐसे शोधार्थियों को छात्र एवं शोध वृत्तियां उपलब्ध कराई जाएं। इससे साहित्यक सेतु बनेंगे, सांस्कृतिक सम्बंध प्रगाढ़ होंगे। विश्वभर में हिंदी में शिक्षण–प्रशिक्षण कर रहे विश्वविद्यालयों को प्रोत्साहित करने की योजनाएं ''विश्वविद्यालय अनुदान आयोग'' को बनानी चाहिए। प्रवासी हिंदी साहित्य–विभाग बनाने को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

प्रवासी–हिंदी साहित्य का कोश बनाने की, साहित्याकार कोश बनाने की योजनाएं भी प्रवासी हिंदी लेखन को बल प्रदान करेगी। प्रवासी हिंदी लेखन में प्रयुक्त लोकोक्तियों–मुहावरों का संग्रह बनें, उनके प्रयोग कोश बनें, जिससे सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित बनाया जा सके।

यदि प्रवासी हिंदी साहित्य और हिंदी साहित्यकारों के स्थायी स्तंभ हमारे समाचारपत्रों में, पत्रिकाओं में प्रारंभ किए जाएं तो हम इस लेखन को और सशक्त कर सकते हैं। रेडियो में और दूरदर्शन पर भी हम प्रवासी हिंदी लेखन को प्रोत्साहित कर सकते हैं। आज प्रवासी हिंदी लेखकों के चित्र एलबंब बनाने की, शैक्षिक चैनलों पर उनका परिचय कराने की, हिंदी

भाषा और साहित्य को उनके अवदान से अवगत कराने की आवश्यकता है। अनेक महत्वपूर्ण हिंदी पत्रिकाएं भी प्रवासी रचनाकारों द्वारा, पत्रकारों प्रकाशित की जा रही है। वहां बच्चे, युवा, प्रौढ़ तथा बुजुर्ग रचनाकार अपनी रचनाधार्मिता से इन्हें सशक्त बना रहे हैं।

यदि प्रवासी हिंदी साहित्य का अंग्रेजी एवं भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराया जाए तो भी इस आंदोलन को बल मिलेगा। यदि सरकारी, गैर–सरकारी स्तर पर प्रभावी प्रतिष्ठित हिंदी लेखकों के नाम से कुछ हिंदी पुरस्कार सम्मान प्रारंभ किया जाए तो भी उन्हें मान–सम्मान मिलेगा। प्रवासी–हिंदी लेखन की वृहत इतिहास लेखन योजना, जो कि अनेक खंडों में, विधानुसार भी हो सकती है, प्रारंभ की जानी चाहिए। प्रवासी हिंदी प्रेमियों का, हिंदी सेवी संस्थाओं का, समाचार पत्र–पत्रिकाओं का, साहित्यक पत्र–पत्रिकाओं का भी, इतिहास अलग–अलग प्रकाशित किया जाना चाहिए। इससे हम प्रवासी हिंदी लेखकों के योगदान एवं समग्रतः अवदान का तटस्था से मूल्यांकन भी कर सकेंगे तथा भविष्य की अपेक्षित–आवश्यक योजनाओं को स्वरूप भी दे सकेंगे।

आज आवश्यकता यह भी है कि प्रवासी हिंदी–साहित्य के आधार पर काका के, कहानियों के, नाटकों के तथा इसी प्रकार यात्रा वृत्तांत, संस्मरण, रेखाचित्र आदि विधाओं के संग्रह–संकलन तैयार किए जाएं। इन्हें अलग–अलग देशों के आधार पर भी तैयार किया जा सकता है और समग्रतः प्रवासी–हिंदी लेखन के आधार पर भी किया जा सकता है। यदि विश्वभर में प्रवासी हिंदी लेखकों के नाम पर कुछ 'चेयर' स्थापित की जाएं तो यह भी एक नई किन्तु सशक्त शुरूआत होगी। हाल ही में हिंदी के महान योगीराज लेखक, योगीराज के प्रेमचंद श्रद्धेय अभिमन्यु अनत का निधन हुआ है। इसका शुभारंभ उन्हीं के नाम से किया जा सकता है। योगीराज सरकार और भारत सरकार मिलकर भी इस दिशा में कार्य करें तो हिंदी के प्रचार–प्रसार को बल मिलेगा।

इसी प्रकार हम देख सकते हैं कि 'केंद्रीय हिंदी संस्थान' आगरा ने, जो कि भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय की महत्वपूर्ण संस्था है, 'प्रवासी जगत'' नाम के एक नई, मौलिक तथा महत्वपूर्ण पत्रिका प्रारंभ की है। सितंबर–नवम्बर 2017 में इसका पहला अंक प्रारंभ हुआ है। विदेशों में भी हिंदी पत्र–पत्रिका प्रकाशन का अपना एक संसार मौजूद हैं जिसे 'वसंत' तथा 'इंद्रधनुष' योगीराज से, 'पुरवाई' ब्रिटेन से, 'विश्वा', 'विभोर स्वर' तथा 'हिंदी जगत' अमेरिका से, 'हिंदी चेतना' एवं 'प्रयास' कनाडा से, 'प्रवासी–संसार' और 'प्रवासी जगत' भारत से निकलने वाली उल्लेखनीय पत्रिकाएं हैं।

भारत देश छोड़ते समय और विदेश गमन करते समय इन प्रवासियों ने, भारत मूल के निवासियों ने अपने साथ 'रामचरितमानस', 'हनुमान चालीसा', 'गीता', 'सत्यनारायण–कथा–पुस्तिका', 'सुंदरकांड पुस्तिका' तथा 'गंगाजल' को अपना सहयात्री बनाया। जहां–जहां वे गये इन्हीं के माध्यम से भारतीय संस्कृति को, आस्था को उन देशों में प्रतिष्ठित किया। 'एग्रीमेंट' के अंतर्गत विदेशों को जाने वाले ये 'गिरमिटिया' मजदूर आज अनेक वाँ देशों में शासक हैं। भारतीय मूल्यों के प्रहरी बनकर, भारतीय संस्कृति की सुगंध को वहां बिखेर रहे हैं। यों तो हिंदी सेवा में सैंकड़ों विद्वान गिनवाएं जा सकते हैं, जिन्होंने हिंदी कोश कार्य में, साहित्य इतिहास लेखन में अविस्मरणीय योगदान किया है। जॉर्ज ग्रियार्जन, वारामिकों व तैसतीतोदी, जॉन कैटलाए, थामस कालब्रुक, गार्जी–द–तानी, स्टुअर्ट मैकग्रेगॉर, विलियम प्राइज, प्रोफेसर च्यांग चिंगख्वेह, जॉन फरगुणन मोनियर विलियम्स इतैर बंधा जॉन केटलर, डॉ. गिलक्राइस्ट, फादर कामिक बुल्के तथा विलियम कैलवर्ट आदि को भला कौन भुला सकता है। इसी प्रकार लौठार लुत्फे, डॉ. मरीयम शिक्षतोष वृस्की, डॉ. ओदोलेन स्मेकल, डॉ. रूपर्ट स्नेल, प्रो. जिन पिंग हान, डॉ. तोमियो मिजोकामी आदि सैंकड़ों विदेशी हिंदी सेवी मौलिक सृजनात्मक प्रतिभा से, अनुवाद कला से, संपादन–कौशल से, कोश निर्माण विवेक से, इतिहास लेखन तकनीक से हिंदी भाषा, साहित्य और भारतीय संस्कृति को सशक्त आधार प्रदान कर रहे हैं ।

–हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली–110007

भाषा एवं संस्कृति की वैश्विक उड़ान और हिंदी पत्रकारिता

–डॉ. जवाहर कर्नावट

विश्व भर में फैले हुए भारतवंशियों ने शिक्षा व्यवसाय, उद्योग, राजनीति आदि क्षेत्रों में अपनी एक विशिष्ट पहचान स्थापित कर ली है। पिछले 175 वर्षों में मॉरीशस, फिजी, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका, गयाना, सूरीनाम आदि देशों में गिरिमिटिया के रूप में पहुंचे इन अप्रवासी भारतीयों ने प्रारंभिक वर्षों में अनेक अत्याचार सहन किए। किंतु इन्होंने अपने परिश्रम, लगन तथा ईमानदारी से इन देशों में सुशिक्षित, प्रतिष्ठित तथा सम्मानित नागरिक का स्थान प्राप्त कर लिया। उन्हें अपने गरिमामय स्थान प्राप्त करने के लिए अत्यंत संघर्ष भी करना पड़ा। इन देशों में भारतवंशियों के लिए अपनी भाषा संस्कृति, धर्म और जीवन शैली अत्यंत महत्वपूर्ण थी। इनकी दूसरी या तीसरी पीढ़ी तक इनके घरों में 'निज भाषा' को छोड़कर कोई दूसरी भाषा नहीं बोली जाती थी। हिंदी इनके लिए तुलसी, मीरा, सूर, कबीर और अन्य संतों की पावन वाणी की वाहिका थी। शनैः शनैः इन देशों में हिंदी, दैनिक जन–जीवन के साथ शिक्षण संस्थानों में भी स्थापित हो गई। यही कारण था कि इन देशों में हिंदी के संचार–माध्यम विकसित हो गए। भारतवंशियों को अपने संघर्ष हेतु एकजुट करने एवं प्रतिष्ठित स्थान दिलाने में भी हिंदी पत्र–पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसके अलावा 20वीं शताब्दी में अमेरिका और यूरोप के देशों में जाकर निवास करने वाले भारतवंशी हिंदी प्रेमियों ने भी अपने–अपने देशों में हिंदी भाषा और साहित्य को जीवित रखने तथा भारतीय समाज को एक सूत्र में जोड़े रखने के लिए हिंदी पत्र–पत्रिकाओं की शुरुआत की।

फीजी एवं मॉरीशस

विश्व के जिन प्रमुख देशों में प्रवासी भारतीयों में हिंदी पत्रकारिता में अपना विशिष्ट स्थान बनाया, उनमें मॉरीशस और फीजी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। फिजी में हिंदी पत्रकारिता की यात्रा को 100 से अधिक वर्ष हो चुके है। मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत गांधी जी की प्रेरणा से मणिलाल डॉक्टर ने की थी। उन्होंने 15 मार्च 1909 को 'हिंदुस्तानी' पत्रिका का प्रकाशन कर प्रवासी भारतीयों को जागृत किया। इसकी शुरुआत अंग्रेजी और गुजराती से की गई किंतु बाद में इसे अंग्रेजी और हिंदी दो भाषाओं में छापा जाने लगा। वर्ष 2009 में मुझे मॉरीशस के पोर्ट लुई स्थित राष्ट्रीय अभिलेखागार में मॉरीशस की हिंदी पत्रकारिता के इतिहास के साक्षात वाँ दर्शन हुए।

'हिंदुस्तानी' के पश्चात मॉरीशस में चालीस से अधिक पत्र–पत्रिकाएं दैनिक साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि के रुप में प्रकाशित हुई। साधनाभाव के बावजूद मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता को प्रवासी भारतीयों ने समृद्ध किया। 1935 से 1938 के बीच हस्तलिखित 'दुर्गा' पत्रिका का प्रकाशन विशेष उल्लेखनीय है।

डॉ. मणिलाल के अलावा पं. काशीनाथ किष्टी, नृसिंह दास, सूर्यदास मंगर भगत, पं. राजेंद्र अरुण, जयनारायण राय, रामसेवक तिवारी, पं. दौलत शर्मा, मुनीश्वरलाल चिंतामणि, धर्मवीर घूरा, विष्णुदत्त मधु, रामदेव धुरंधर, अजमिल माता बदल, अभिमन्यु अनत, सत्यदेव, डॉ. वीरसेन, जागासिंह, पूजानंद नेम, प्रहलाद रामशरण आदि ने मॉरीशस की हिंदी साहित्य पत्रकारिता में उल्लेखनीय योगदान दिया है। श्री अभिमन्यु अनत के संपादन प्रकाशित 'वसंत' पत्रिका का हिंदी पत्रकारिता के विकास में विशेष योगदान रहा है। आज भी मॉरीशस में 'वंसत', 'सुमन' 'रिमझिम', 'आक्रोश', 'इंद्रधनुष',

'पंकज' और 'आर्यावर्त' हिंदी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही है। इन पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से प्रवासी भारतीयों ने अपनी संस्कृति परम्पराओं और रचनात्मकता को जीवित रखा। प्रवासी भारतीयों के नैतिक उत्थान एवं साहित्य तथा रचनाकर्म के प्रति रुचि जागृत करने में भी इन पत्र–पत्रिकाओं की सार्थक भूमिका रही। भारत के गौरवशाली अतीत, परम्परा, तीज–त्यौहार, हिंदी शिक्षण–प्रशिक्षण से संबंधित भरपूर सामग्री इन पत्र–पत्रिकाओं में लगातार प्रकाशित होती रही। साथ ही भारतीय उत्सवों, त्यौहारों पर लेख भी नियमित रूप से आज भी प्रकाशित हो रहे हैं।

मॉरीशस के समान फीजी में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत कर इसे नई उचांईयों तक पहुंचाया। यहां वर्ष 1913 में डॉ. माणिलाल के संपादन में 'सेटलर' का हिंदी अनुवाद साइक्लोस्टाइल रूप में प्रकाशित हुआ। इसके बाद फीजी समाचार (1923–37) साप्ताहिक निकला जो काफी लोकप्रिय हुआ। 1937 से 1950 के मध्य अनेक पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हुईं। किंतु कुछ अंकों के बाद ही अदृश्य हो गई। फीजी की हिंदी पत्रकारिता में पं कमला प्रसाद मिश्र और पं. विवेकानंद शर्मा का भी विशेष योगदान है। पं. मिश्र द्वारा प्रकाशित पत्र ''फीजी संस्कृति'' अत्यंत लोकप्रिय हुआ। फीजी संस्कृति ने हिंदी महापरिषद की मासिक पत्रिका के रुप में प्रवासी भारतीयों को अपनी संस्कृति एवं भाषा से जोड़े रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इस पत्रिका के एक संपादकीय में वे लिखते हैं:–

''हमारे लोग निहत्थे आए, खाली हाथ आए लेकिन अपने साथ लाए अपनी भाषा, सभ्यता और संस्कृति तथा धर्म और इसी के आधार पर बचा लाए अपनी अस्मिता अपनी पहचान। हमें जमीनें मिली छीन ली गई, नौकरी मिली चली गई, लेकिन हमारी पहचान, कोशिशों के बावजूद कोई भी छीन न सका। हम भारतीय होकर आए थे, भारतीय होकर रहे और भारतीय होकर रहेंगे और इस स्थिरता के पीछे, इसकी शक्ति का राज है. – हमारी भाषा।

डॉ. विवेकानंद शर्मा द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'संस्कृति' ने फीजी में भारतीयता को जागृत रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इस पत्रिका के शुरूआती पृष्ठ पर यह सूत्र वाक्य अत्यंत प्रेरणादायक होता था।

''हिंदी के रथ पर आरूढ़ होकर ही हम अपनी संस्कृति की रक्षा कर सकते हैं, जो हमारी पहचान का आधार है।''

इस प्रकार अपनी भाषा में अभिव्यक्ति तथा उसके व्यापक प्रचार–प्रसार की इच्छा ने विदेशी हिंदी प्रेमियों को हिंदी पत्रकारिता की ओर उन्मुख किया। फिजी से प्रकाशित शांतिदूत एक ऐसा पत्र है, जो 80 से अधिक वर्षों से निरंतर प्रकाशित हो रहा है। आज भी यह पत्र प्रवासी भारतीयों और विदेशी हिंदी पत्रकारिता का ज्वलंत उदाहरण बना हुआ है।

सूरीनाम– गुयाना एवं त्रिनिडाड

विश्व के कुछ अन्य देशों में भी, जहां भारतीय मजदूर बनकर गए हिंदी पत्रकारिता का दीप प्रज्ज्वलित हुआ। इन देशों में सूरीनाम, गुयाना तथा त्रिनिडाड एवं टोबैगो प्रमुख है। सूरीनाम में प्रारंभिक दौर में कुछ हिंदी प्रेमियों, आर्य समाज, सनातन धर्म, महासभा आदि संस्थानों ने अपनी कर्मठता और लगन से हिंदी पत्र–पत्रिकाओं को शुरु किया। वर्ष 1964 में आर्य समाज ने आर्य दिवाकर नाम से पत्रिका प्रकाशित की. इसके पश्चात पं. शिवरत्न शास्त्री, महातम सिंह आदि के प्रयासों से अनेक पत्रिकाएं प्रकाशित हुईं। सूरीनाम हिंदी परिषद ने वर्ष 1984 में 'सूरीनाम दर्पण' प्रकाशन आरंभ किया, जो प्रवासी भारतीयों की अस्मिता, स्वाभिमान एवं गौरवमयी प्रतिष्ठा की रक्षा और इनके विकास का प्रतीक था। गुयाना और त्रिनिडाड एवं टोबेगो में भी हिंदी पत्रकारिता के माध्यम से प्रवासी भारतीयों में अपनी भाषा और साहित्य के प्रति जागृत करने के अनेक प्रयास हुए। इस क्षेत्र में प्रो. हरिशंकर आदेश का नाम विशेष उल्लेखनीय है जिन्होंने त्रिनिडाड में सांस्कृतिक केन्द्र स्थापित कर 'जागृति' पत्रिका का प्रकाशन भी किया।

दक्षिण अफ्रिका में भी हिंदी समाचारपत्रों ने प्रवासी भारतीयों को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका

का निर्वाह किया। वर्ष 1904 में श्री वी मदनजीत ने डर्बन शहर में इण्डियन ओपिनियन नामक साप्ताहिक अखबार हिंदी, अंग्रेजी, गुजराती और तमिल में निकाला। मदनजीत जी को इसमें भारी घाटा हुआ और उन्होंने अखबार गांधीजी के हवाले कर दिया। गांधीजी इस अखबार को डर्बन से फिनिक्स स्थान पर ले गए और वहीं उनके आश्रम से अखबार भी निकालने लगा। बाद में हिंदी और तमिल ग्राहकों का अभाव बताकर दोनों भाषाएं इण्डियन ओपिनियन से निकाल दी गई। वर्ष 1913 में सत्याग्रह संग्राम के समय स्वामी भवानीदयाल संन्यासी को इसके संपादन का भार सौंपा गया तथा हिंदी अंश भी जोड़ा गया। किंतु यह अधिक समय तक नहीं चल पाया। स्वामीजी ने उस समय हिंदी और अंग्रेजी में साप्ताहिक धर्मवीर निकाला। वर्ष 1922 के प्रारंभ में स्वामी भवानीदयाल ने 'हिंदी' नाम से साप्ताहिक अखबार हिंदी–अंग्रेजी में निकाला। जेकब्स से प्रति शुक्रवार को प्रकाशित यह अखबार अत्यंत लोकप्रिय हुआ। यह अखबार मॉरीशस, फिजी ट्रिनीडाड, डेमरारा, सूरीनाम, रोडेसिया, केन्या, युगांडा, जंजिवार, टेगेनिक्य आदि उपनिवेश और भारत में भी भेजा जाता था। 1925 के अंतिम मास में प्रवासी भारतीयों पर आयी विपत्ति के कारण स्वामीजी को भारत लौटना पड़ा और हिंदी अखबार भी बंद हो गया। इसके पश्चात प्रवासी भारतीयों ने हिंदी अखबार प्रकाशन के छुट–पुट प्रयास किए किंतु वे सफल नहीं रहे तथापि हिंदी के इन अखबारों ने प्रवासी भारतीयों के आत्मसम्मान को जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। वर्ष 2003 में अपनी दक्षिण अफ्रीका यात्रा के दौरान मुझे डर्बन विश्वविद्यालय के डाक्यूमेंटेशन सेंटर में इन समाचार पत्रों की पुरानी फाइलों को देखना अत्यंत सुखद लगा। 'हिंदी' साप्ताहिक के पुराने अंकों को पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि श्री भवानीदयाल संन्यासी ने दक्षिण अफ्रीका में हिंदी एवं भारतीय संस्कृति को जीवित रखने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया।

संयुक्त राज्य अमेरिका एवं कनाडा

अमेरिका और यूरोप के देशों में भी 20वीं शताब्दी के आंरभ में ही प्रवासी भारतियों ने हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत कर दी थी। अमेरिका में भारतीय स्वतंत्रता हेतु संघर्षरत 'गदर' पार्टी ने 1917 में लाला हरदयाल के नेतृत्व में 'गदर' नामक पत्र हिंदी में भी प्रकाशित किया था। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बार्कले में हिंदी के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो. वेद प्रकाश वटुक के अनुसार – ''गदर एक क्रांतिकारी पत्र था, जिसका उद्देश्य भारतीयों में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध मोर्चा तैयार करना था। राष्ट्रीय भावनाओं से ओत–प्रोत यह पत्र लगभग पांच वर्षों तक प्रकाशित होता रहा। गदर आंदोलन को बढ़ाने में इनका बड़ा हाथ रहा। चार–पांच साल में ही गदर ने प्रवासी हिंदी पत्रकारिता पर एक जबर्दस्त छाप छोड़ी।'' भारत के स्वतंत्र होने के बाद अमेरिका में भारतीयों का जाना बढ़ता ही गया। अमेरिका में विधिवत हिंदी पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन की शुरुआत नौंवे दशक के आरंभ में हुई, जब स्व. डॉ. कुंवर चन्द्रप्रकाश की प्रेरणा से अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति की स्थापना हुई। इस समिति की ओर से 'विश्वा' नाम की पत्रिका निकलनी शुरु हुई। प्रारंभ में यह पत्रिका हस्तलिखित थी किंतु बाद में इसका प्रकाशन भी शुरु हुआ। कुंवर चंद्रप्रकाश के अलावा रामेश्वर अशांत, गुलाब कोठारी, सुरेन्द्रनाथ तिवारी, कथाकार सुषमबेदी और राम चौधरी लंबे अर्से तक इसके संपादक मंडल में रहे। 1984 में ही वेद प्रकाश वटुक के संपादन में ''सीमांतिका'' नामक 'साहित्यिक पत्रिका' प्रकाशित हुई किंतु यह अधिक समय तक नहीं निकल सकी। अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति ने नार्थ कोईराला चेप्टर से जुड़ी सुधा धींगरा ने बच्चों के लिए 'उमंग' नाम की एक पत्रिका प्रारंभ की, जो आज भी प्रकाशित हो रही है। 1991 में 'सौरभ' नाम की एक और पत्रिका शुरु हुई। यह पत्रिका नवगठित विश्व हिंदी समिति की ओर से बुक्रालिन, न्यूयार्क से निकलना प्रारंभ हुई। इस समिति के अध्यक्ष डॉ. विजय मेहता पेशे से ह्रदय रोग चिकित्सक है। लेकिन उनकी अनेक हिंदी पुस्तकें छप चुकी है।

अमेरिका में हिंदी पत्रकारिता के प्रसार में विश्व हिंदी न्यास का भी विशेष योगदान है। इस न्यास की ओर से तीन पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। – हिंदी जगत, विज्ञान प्रकाश और बाल हिंदी जगत। यह न्यास हिंदी में 'न्यास समाचार' बुलेटिन भी प्रकाशित करता है। डॉ. राम चौधरी जो पहले अंतरराष्ट्रीय हिंदी

समिति के अध्यक्ष एवं विश्वा के प्रबंध संपादक थे, न्यास के कार्यपालक निदेशक रहे और हिंदी जगत का संपादन भी करते रहे। विज्ञान प्रकाश में कई ऐसे लेख भी छपे हैं जो शीर्षस्थ वैज्ञानिकों ने लिखे हैं। विज्ञान के क्रमिक विकास पर स्वयं राम चौधरी की लेखमाला इस पत्रिका की विशेषता रही। वर्ष 1992 से प्रो. भूदेव शर्मा के संपादन में विश्व विवेक पत्रिका की भी शुरुआत हुई। यह पत्रिका हिंदी एज्यूकेशनल एंड रिलीजियस सोसायटी ऑफ़ अमेरिका की तरफ से प्रकाशित की जा रही है। इसमें साहित्य संस्कृति के अलावा भारत व भारतवंशियों के मसलों पर सामग्री छपती रहती है। इस पत्रिका ने अमेरिका में हिन्दू धर्म–संस्कृति, मूल्यवान परंपराओं को जीवित रखने तथा भारतीयों को संगठित रखकर भारतीयता एवं हिंदी से जोड़े रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। यूएसए हिंदी संस्था भी अपनी तिमाही पत्रिका के माध्यम से हिंदी शिक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। अमेरिका के पड़ोसी देश कनाडा में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी भाषा साहित्य और संस्कृति को संजोए रखा है। हिंदी प्रचारिणी सभा कनाडा त्रैमासिक अंतरराष्ट्रीय साहित्य पत्रिका हिंदी चेतना का प्रकाशन पिछले 15 वर्षों से निरंतर कर रही है। श्री श्याम त्रिपाठी के संपादन में इस पत्रिका के अनेक विशेषांक भी प्रकाशित हो चुके हैं। अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, भारत, नार्वे, फ्रांस मॉरीशस आदि अनेक देशों के लेखक इस पत्रिका से जुड़े हुए हैं। इसी प्रकार कनाडा के टोरटों में 10 वर्षों से लगातार हो रहा है। स्नेह ठाकुर के संपादन में निजी प्रयासों से इस पत्रिका का प्रकाशन उनके हिंदी के प्रति प्रेम और समर्पण का परिचायक है।

इंग्लैंड

यूरोप के देशों में भी भारत की स्वतंत्रता के पश्चात गए प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्रकारिता का अलख जगाया। यूरोप के देशों में इंग्लैंड का भारत के संदर्भ में विशेष महत्व है। इंग्लैंड में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत वर्ष 1883 में हो गई थी। उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद की एक देशी रियासत कालाका के राजा रामपाल सिंह ने हिन्दोस्थान का त्रैमासिक प्रकाशन अंग्रेजी–हिंदी में लंदन से वर्ष 1883 में किया था। इंग्लैंड में इस त्रैमासिक का प्रकाशन दो वर्ष यानी वर्ष 1883 से 1885 तक हुआ। इस पत्र के द्वारा राजा रामपाल सिंह ने ब्रिटिश संसद में भारतीयों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने की पुरजोर वकालत की, परिणामस्वरुप वर्ष 1886 में ब्रिटिश संसद में सर सैयद अहमद को सदस्यता प्राप्त हुई। वर्ष 2006 में अपनी लंदन यात्रा के दौरान मुझे ब्रिटिश लाइब्रेरी के एशियन सेक्शन में यू. के. एवं अन्य कई देशों के पुराने हिंदी समाचारपत्रों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई।

वर्ष 1917 में लंदन से प्रकाशित तस्वीरी अखबार अपने विवरण हिंदी में प्रकाशित करता था। इसके पश्चात यू. के. के आर्य समाज ने वैदिक पब्लिकेशन का प्रकाशन आरंभ किया। फिर अमरदीप साप्ताहिक का प्रकाशन श्री जे. एस. कौशल के संपादकत्व में शुरु हुआ। वर्ष 1964 में धर्मेंद्र गौतम के संपादन में हिंदी प्रचार परिषद ने 'प्रवासिनी' त्रैमासिक पत्रिका की शुरुआत की। प्रारंभ में यह पत्रिका हस्तलिखित रूप में प्रसारित हुई और बाद में वाँ यह मुद्रित स्वरूप में सामने आई। इसके अलावा यू. के. से चेतक, मिलाप, नवीन वीकली, जगतवाणी पत्र–पत्रिकाएं भी प्रकाशित हुईं। किंतु ये पत्रिकाएं समय के अंतराल के साथ काल कवलित हो गईं। इंग्लैंड में हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में उस समय क्रांतिकारी बदलाव आया जब डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी इंग्लैंड में भारतीय उच्चायुक्त बने। उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति समर्पित प्रवासी भारतीयों को संगठित किया है और यू. के. हिंदी समिति की स्थापना करवाई। इसी समिति के तत्वाधान में श्री पद्मेश गुप्त के संपादन में वर्ष 1997 में पुरवाई त्रैमासिक हिंदी पत्रिका शुरुआत हुई। इस पत्रिका में इग्लैंड भारत एवं अन्य प्रमुख देशों के हिंदी लेखकों के लेख, कविताएं, कहानियां संस्करण आदि प्रकाशित होते हैं इंग्लैंड के प्रमुख हिंदी रचनाकारों में गौतम सचदेव, दिव्या माथुर, उषाराजे सक्सेना, मोहन राणा, सत्येंन्द्र श्रीवास्तव, उषा वर्मा, सिहन राही, कृष्णा अनुराध, राकेश माथुर, के. जी. खंडेलवाल, प्राण शर्मा, देवी नागरानी की रचनाएं प्रकाशित होती रहती हैं।

पुरवाई पत्रिका ने पिछले 15 वर्षों में विदेश की

हिंदी पत्रकारिता ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। दिनांक 7 नवंबर 2010 को नेहरु केंद्र लंदन में यू. के. हिंदी समिति की बीसंवी वर्षगांठ के अवसर पर यू. के. में हिंदी पत्रकारिता पर सेमिनार आयोजित हुआ था। इस अवसर पर पुरवाई के संपादक श्री पद्मेश गुप्त ने पुरवाई के पिछले 13 सालों की उपलब्धियों और कार्यों का उल्लेख करते हुए ठीक ही कहा कि ''पुरवाई पत्रिका एक अंतरराष्ट्रीय अभियान है। यह अभियान है नए रचनाकारों के मंच का प्रवासी भावनाओं की अभिव्यक्ति का और अभियान विश्व के हिंदी लेखकों को जोड़ने का। इस प्रकार आज पुरवाई पत्रिका विश्व जगत में महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है।

नार्वे

नार्वे में हिंदी पत्रकारिता की शुरुआत 1979–80 के दौरान 'परिचय' हिंदी मासिक से हुई , जिसमें पंजाबी और अंग्रेजी भाषा के भी कुछ पृष्ठ होते थे। वर्ष 1981 में इस पत्रिका का संपादन का दायित्व भारत से नार्वे आए श्री सुरेश चंद्र शुक्ल को सौंप दिया। उन्होंने पांच वर्षों तक इस पत्रिका का संपादन किया। इसके अलावा नार्वे से पहचान, सनातन मंच एवं त्रिवेणी पत्रिकाओं का भी प्रकाशन हुआ। 1998 में स्पाइल दर्पण का संपादन श्री सुरेश चन्द्र शुक्ल ही कर रहे हैं। यह पत्रिका हिंदी और नार्वेजीयन भाषा में प्रकाशित होती है। श्री अमित जोशी के संपादन में प्रकाशित हुई शांतिदूत पत्रिका ने भी यहां हिंदी पत्रकारिता को आगे बढ़ाया। नार्वे से एक द्विभाषिक पत्र 'आप्रवासी टाइम्स' की शुरुआत भी श्री सिद्धार्थ जोशी के संपादन में हुई है। मुझे इसके वर्ष 2004 के कुछ अंकों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ।

जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैंड

पिछले एक दशक में जर्मनी, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड में भी प्रवासी भारतीयों ने हिंदी पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी भारतीयता को जीवित रखने का प्रयास किया है। विश्व हिंदी समाचार के जून 2012 अंक में जर्मनी से प्रकाशित बसेरा पत्रिका का जिक्र मिलता है। यह पत्रिका म्यूनिख में रहने वाले हिंदी प्रेमी युवा श्री रजनीश मंगला पिछले कई सालों से हिंदी और जर्मनी भाषा में निकाल रहे हैं। न्यूजीलैंड से हिंदी गतिविधियों की रिपोर्ट करते हुए रोहित कुमार हैप्पी ने बताया कि न्यूजीलैंड में 1996 में हिंदी पत्रिका भारत दर्शन के प्रयास से एक वेब आधारित 'हिंदी टीचर' का आरंभ किया गया। भारत दर्शन इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी साहित्यिक पत्रिका थी। न्यूजीलैण्ड के प्रमुख शहर ऑकलैण्ड में दीपावली महोत्सव प्रारंभ करने का श्रेय इसी पत्रिका की टीम को जाता है। आस्ट्रेलिया में हिंदी पत्रकारिता शनैः शनैः अपने पैर जमा रही है। 2 अक्टूबर 2010 को 'हिंदी गौरव' ऑनलाइन समाचार पत्र का मुद्रित संस्करण प्रांरभ किया गया। इससे पूर्व विक्टोरिया से प्रकाशित साउथ एशिया टाइम्स में 'हिंदी पुष्प' शीर्षक से दो पृष्ठ नियमित रूप से प्रकाशित होते है। आस्ट्रेलिया से ही प्रकाशित 'द इंडियन डाउन अंडर' में भी हिंदी का एक पृष्ठ प्रकाशित होता है। वर्ष 1990 से फिजी के परसराय महाराज 'समाचार पत्रिका' का प्रकाशन हिंदी में कर रहे हैं। आस्ट्रेलिया में प्रवासी भारतीय रेखा राजवंशीजी ने यह जानकारी देते हुए समाचार–पत्र भी उपलब्ध करवाएं।

यू.ए.ई.

इधर खाड़ी के देशों में भी हिंदी के प्रचार–प्रसार के साथ हिंदी पत्रकारिता आकार ले रही है। अबूधाबी से श्री कृष्ण बिहारी 'निकट' नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन कर रहे हैं। शारजाह से पूर्णिमा वर्मन की अगुआई में वेब पत्रिकाओं–अभिव्यक्ति व अनुभूति का साप्ताहिक प्रकाशन प्रति सोमवार किया जाता है। इन अंकों को पुरालेखों में इस प्रकार व्यवस्थित किया गया है कि वे आज वेब पर हिंदी का सबसे बड़ा साहित्य कोश है।

इस प्रकार प्रवासी भारतीयों ने विश्व के कोने–कोने में हिंदी पत्रकारिता और संचार माध्यमों की शुरुआत कर अपनी भाषा और संस्कृति से जुड़े रहने का सराहनीय प्रयास किया है।

प्रमुख (राजभाषा) बैंक ऑफ़ बड़ौदा
कार्पोरेट कार्यालय, मुंबई
महाराष्ट्र–400014

हिंदी को समृद्ध करती सरनामी हिंदी

भावना सक्सैना

आदिकाल से आधुनिक काल तक हिंदी भाषा के इतिहास पर नज़र डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि समय के साथ उसके रूप और विन्यास दोनों में ही परिवर्तन हुए हैं। आज हिंदी जिस रूप में हमारे समक्ष है अपने प्रारंभिक दौर में उसका वही रूप नहीं था। इस स्तर तक पहुँचने के लिए उसने निरन्तर संघर्ष किया। आज हिंदी विश्व के विशाल फलक पर अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा चुकी है, स्नेह और सौहार्द की भाषा बन विदेशी मूल के लोगों का दिल जीत चुकी है। भाषा के संदर्भ में यह उक्ति सर्व विदित है कि"कोस कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी", अर्थात एक ही भाषा जरा से स्थानांतरण पर अलग–अलग तरीके से बोली जाती है। भारत में ही हिंदी की अनेक बोलियाँ हैं, जब यह विदेश में पहुँची तो इनका रूप–रंग और बदल गया, कहीं क्रियोली का प्रभाव पड़ा, तो कहीं अंग्रेजी और काई बीती का। सूरीनाम में जाकर यह सरनामी हो गई, फीजी में फीजी बात, तो दक्षिण अफ्रीका में नैताली। इन देशों में हिंदी पहुँची भारतीय प्रवासी या अप्रवासियों के साथ, जिनमें से अधिकांश शर्तबंदी प्रथा के अंतर्गत ब्रिटिश एजेंटों द्वारा बहला–फुसलाकर ले जाए गए थे। भारतीय मूल के इन लोगों ने अपनी नई कर्मभूमि में हिंदी को अपनी भारतीय अस्मिता की पहचान बनाया और आज हिंदी की सभी बोलियां और विदेशी शैलियाँ न सिर्फ हिंदी को समृद्ध कर रही हैं अपितु यह उसकी शक्ति हैं। विश्व में हिंदी की स्थिति का आकलन करते समय इन सभी बोलियों और विदेशी शैलियों का आकलन किया जाता है, इन्हीं की वजह से हिंदी का अस्तित्व व्यापक है।

सूरीनाम, वह देश है जहाँ औपचारिक हिंदी के साथ–साथ सरनामी हिंदी हर हिंदुस्तानी के घर में बोली जाती है। दक्षिण अमरीका के इस देश में145 बरस पहले भारत से रवाना पहला जहाज लालारुख पहुँचा था, जिसमें सवार हिंदुस्तानियों में से कुछ इच्छा से, कुछ धोखे से, कुछ अज्ञानवश, कुछ पराधीन भारत में विद्यमान समस्याओं, देश में उत्तरोत्तर बढ़ती बदहाली, 1873 में बिहार में पड़े अकाल से पीड़ित, भुखमरी गरीबी, लाचारी से भाग एक वाँ बेहतर जीवन की तलाश में, सुख की लालसा में और सोने की खोज में एक बेहतर जीवन का सपना लेकर पहुँचे थे। सूरीनाम में हिंदी का उदय इन्हीं गिरमिटिया मजदूरों के माध्यम से हुआ। यह समुदाय बहुत पढ़ा–लिखा तो नहीं था किंतु अपनी संस्कृति को जीने वाला वर्ग था, यहाँ आने वाले भारतीय श्रमिक मूलतः उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों से थे जहां भोजपुरी, अवधी, मगही, मैथिली, ब्रज भाषाएँ बोली जाती हैं। सूरीनाम लाकर उन्हें अलग प्लान्टेशनों में रखा जाता था, जिसके कारण उनके परस्पर व्यवहार में हिंदी की बोलियों का ही प्रयोग होता था। ये लोग रामायण, गीता, पुराण, सत्यनारायण कथा आदि साथ ले कर आए थे। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद ये अपने साथ लाए रामचरितमानस की चौपाइयां पढ़ते, आपस में मिल बैठ कर भजन गाते, किस्से–कहानियाँ कहते–सुनते और इन्हीं बैठकों के माध्यम से भाषा, धर्म व संस्कृति का प्रचार होता रहा। भाषा, धर्म और संस्कृति को बचाए रखने के लिए स्वाध्याय मंडलों, हिंदी

कक्षाओं मंदिरों व गुप्त पंचायतों ने जन्म लिया। जिनको देवनागरी लिपि का ज्ञान था उन्होंने अपनी सन्तानों व गाँव वालों को रात्रि के समय और छुट्टी के दिन पढ़ाना आरम्भ किया। यह किसी के घर या झोंपड़ी में होता था। इस तरह परोक्ष रूप से सूरीनाम में हिंदी का वृक्षारोपण हुआ। धीरे–धीरे यह वृक्ष पल्लवित होने लगा।

आज सूरीनाम में हिंदी के दो स्वरूप देखने को मिलते हैं एक शुद्ध मानक हिंदी और दूसरी सरनामी जो सूरीनाम के हिंदुस्तानियों की भाषा है। अवधी, भोजपुरी व अन्य बोलियों की इस मिश्रित भाषा, जिसमें कालांतर में स्थानीय भाषाओं के शब्द भी जुड़ गए, को सरनामी नाम देने का मुख्य ध्येय उसे इस देश की भाषा के रूप में स्थापित करना था क्योंकि जब तक उसे उस देश के साथ नहीं जोड़ा जाता वहां उसकी लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती थी। सरनामी हिंदी को प्रायः एक नई भाषा माना गया है किंतु मैं उसे हिंदी का ही एक रूप कहूँगी। जिस तरह अवधी, भोजपुरी, बुंदेली, छत्तीसगढ़ी, मगही, मारवाड़ी, हरियाणवी, कन्नौजी सब हिंदी की ही बोलियां हैं उसी प्रकार सरनामी भी हिंदी की एक शैली है। डॉ. बद्री नारायण के अनुसार कई बोलियों का मिश्रण होते हुए भी सरनामी में भोजपुरी की प्रधानता है।

सूरीनाम में आने वाले भारतीय श्रमिक मूलतः उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों से थे, जहां अलग–अलग भाषाएं बोली जाती हैं (जैसे भोजपुरी, अवधी, मगही, मैथली, ब्रज तथा अन्य भाषाएं)। ये सभी भाषाएं संबद्ध हैं किंतु इसका अर्थ यह नहीं की सभी लोग इन भाषाओं को आपस में बोलते थे। संभव हैं कि इन लोगों ने अपनी भाषाओं के वह रूप छोड़ दिए जो बाकी भाषा–भाषी नहीं समझ पाते थे और क्योंकि किसी एक भाषा विशेष के समूह की अधिकता नहीं थी तो सभी भाषाओं का एक मिश्रण तैयार होकर सामने आया। अतः कहा जा सकता है कि 'सरनामी' भोजपुरी, अवधी, मगही, मैथली, ब्रज तथा अन्य बोलियों की मिश्रित भाषा है, जिसमें कालांतर में डच, स्रनांग तोंगो, जावानीज व अंग्रेजी भाषा के शब्दों का समावेश हुआ है। कुछ लोगों का मानना है कि यह भोजपुरी के सबसे करीब है तो कुछ अवधी का अधिक समावेश मानते हैं। इस क्षेत्र में अधिक भाषा वैज्ञानिक शोध अपेक्षित हैं। सूरीनाम में सरनामी हिंदी के प्रोद्रभव में सहायक कारण हैं–

1. आरम्भ में हिंदुस्तानियों को शिक्षा प्राप्त न होना।
2. नियमित अन्तराल पर भारत से श्रमिकों का आगमन।
3. हिंदुस्तानी शर्तबंधी श्रमिकों को अन्य श्रमिकों से अलग रखा जाना।
4. हिंदुस्तानी श्रमिकों की अधिक संख्या और इन श्रमिकों का आसपास के क्षेत्रों में होना।
5. सूरीनाम में अंग्रेजी से इतर भाषा को सम्मान प्राप्त होना।

वाँ मौजूदा सरनामी हिंदी की मुख्य विशेषताएं निम्नानुसार हैं–

1. इसमें कई भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रवृत्तियां हैं।
2. इसमें किसी भी एक भारतीय भाषा की व्याकरणिक विशेषताएं नहीं हैं।
3. आंतरिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप कई व्याकरणिक रूप सामने आए हैं, जिन पर अन्य सूरीनामी भाषाओं का भी प्रभाव है।
4. स्रनांग तोंगो का प्रभाव है।

सरनामी हिंदी के दो मुख्य रूप हैं– मानक सरनामी हिंदी और निकेरी की सरनामी हिंदी (निकेरी सूरीनाम का दूसरा सबसे बड़ा शहर है)।

वर्ष 1961 में श्री ज्ञान अधीन ने सरनामी को सरकारी मान्यता दिलवाने की दिशा में ठोस प्रयास किए और हिंदी के सरनामी रूप को मान्यता दिलवाने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर बहस चलाई और इसे राष्ट्र

की महत्वपूर्ण भाषा घोषित करवाया। सरनामी नाम देना भी इसी रणनीति का एक हिस्सा रहा। श्री अधीन ने सरनामी को रोमन लिपी में लिखने का प्रस्ताव भी रखा और यह प्रस्ताव माना गया, जिसके परिणामस्वरूप आज भी सरनामी को रोमन लिपि में लिखा जाता है।

सरनामी का पहला मुद्रित पाठ *पैरेबल आफ द प्रॉडिगल वर्ष* 1956 में क्रूस की रोशनी नामक पत्रिका में छपा। इसे सरनामी में छापने का मुख्य कारण हिंदुस्तानी वर्ग में सरनामी का अधिक प्रभाव होना था। इसके बाद सरनामी में बाइबल के कई पाठ छपे।

सरनामी का पहला साहित्यिक पाठ वर्ष 1968 में पारामारिबो में छपा। यह थी श्रीनिवासी (मार्तिन हरिदत्त लक्षमन) की कविता बुलाहट। यह कविता किसी राजनीतिक प्रतिक्रिया स्वरूप नहीं बल्कि सूरीनाम में साहित्यिक वास्तविकता के एक अक्स के रूप में उभरी जो इस प्रकार है–

कौन रात्रि में हमके बुलाइस है
आवाज बाहर से धीरे से आइल है
मालूम ना है कौन पुकारिस
कहे के हमारे द्वारे पर आइल है

नेवता लेकर..... साइद नाउ है
गुसायके के जाने फिर लौट गइल
सरम से– आलस हम–राह गइली
कौन रात्रि में हमके बोलाइस है

अँधियार में चिराग लेकर
मेढ़ी पार से आ पुकारिस
जवाब देली गदगद दिल से
उसको जो हमार भगवान है

वर्ष 1973 में श्री मोतीलाल मारहे ने सरनामी हिंदी की पहचान के लिए भाषाविद् के रूप में संग्राम शुरू किया। वस्तुतः सरनामी हिंदी संबंधी सभी गतिविधियां नीदरलैंड्स में आरम्भ हुई। 1980 में नीदरलैंड में प्रवास कर चुके सूरीनामी हिंदुस्तानियों के एक समूह ने सरनामी हिंदी में लेख, कविताएं, कहानियां छापकर सरनामी को ऊँचा स्तर दिलाने का प्रयास किया। इसके अतिरिक्त सरनामी के मानकीकरण की प्रक्रिया आरम्भ की गई, श्री ज्ञान अधीन की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई, जिसमें सरनामी रोमन में लिखने के संबध में प्रस्ताव रखा गया। श्री मोतीलाल मारहे ने सरनामी हिंदी के व्याकरण का विवरण दिया। 1970 व 80 के दशकों में सरनामी में कविताओं की कई पुस्तकें और पत्रिकाएं छपीं। वर्ष 1982 से डॉ.जीत नाराइन ने अकेले ही सरनामी पत्रिका का संपादन किया। यह पत्रिका अपनी भाषा पर गौरव का प्रतीक थी। वह पाँच वर्ष तक इसका संपादन करते रहे। सरनामी में छपे डॉ. जीत नाराइन के एक लेख ''हिंदुस्तानियों के लानत है'' का एक अंश नमूने के तौर पर प्रस्तुत है –

हिंदुस्तानी अपन कमाय खाय खात हौलांस सीखे है। ई भाषा खाय के देवे है, और हां उ उतने दूर तक ओको सीखे जितना में उसका पेट भर जाई। अपन उन्नति खाते इके ना पढ़े है। लिखे के, के बोले, इके अच्छे से बोले के अभ्यास ना करे है। साहित्य के का कही, ईतो उ लोग के ना लगे है। इके जैसे ना मालूम है, कि जतना भी लेख दुनिया में लिखे है आदमी के लिखे है। और इही लेख से भाषा के बढ़न्त होवे है और संस्कीरति के अपन जोर बढ़े है।

वर्ष 1990 के दशक में सरनामी हिंदी को पूर्ण रूप से विकसित सूरीनामी भाषा मान लिया गया। सरनामी में पहला लंबा गद्य 1984 में प्रकाशित रबिन एस. बलदेव सिंह का उपन्यास तीफा (Farewell) था। इसके बाद इन्हीं का दूसरा उपन्यास 'सुनवाई कहाँ' वर्ष 1987 में छपा। अप्रैल 1984 में द हेग में सरनामी नीदरलैंड संस्था की स्थापना की गई और इस संस्था ने सरनामी कलेक्टिफ झुम्पा राजगुरू के कार्यों को अपने हाथ में ले लिया।

दामस्तीग के अनुसार सरनामी नीदरलैंड

संस्था का एक कार्य सरनामी हिंदी पाठों का प्रकाशन था। दामस्तीग का मानना है कि यदि पाठ सामान्य प्रकाशनों द्वारा प्रकाशित किये जाते तो बेहतर था, किंतु ऐसा करने में किसी की कोई रुचि नहीं थी क्योंकि ऐसे प्रकाशनों की बिक्री सीमित थी और इसका कारण सरनामी हिंदुस्तानियों की कमी नहीं अपितु सरनामी पाठ न पढ़ने की परम्परा था। इसके अतिरिक्त उस समय डच भाषा में सरनामी हिंदी पर बहुत से लेख छपे। इन लेखों की विषयवस्तु भाषा की स्थिति, सरनामी हिंदी शिक्षण, लिपि का प्रस्ताव और सरनामी हिंदी मुहावरे व लोक कथाएं थीं।

वर्ष 1978 में श्री मोतीलाल मारहे का एक महत्वपूर्ण लेख छपा –'वारम' (¡aromtoch die emancipatie van het Sarnami) अर्थात सरनामी हिंदी का emancipation उद्धार – क्यों? इस लेख में पहली बार सरनामी हिंदी के पुनर्मूल्यांकन के संबंध में एक सुव्यवस्थित गुहार थी और उसके पक्ष में सुदृढ़ तर्क थे। मारहे जी द्वारा रखे गये मुख्य तर्क निम्नानुसार हैं।

1. संरचनात्मक आधार पर सरनामी को मानक हिंदी अथवा उर्दू की भाषिक शैली नहीं माना जाना चाहिए (इन भाषाओं का अपभ्रंश तो बिलकुल नहीं)।
2. सरनामी हिंदी को अनौपचारिक भाषा मानने का कोई कारण नहीं हैं।
3. कुछ जाने माने हिंदुस्तानियों द्वारा मानक हिंदी और उर्दू पर जोर देने से ऐसा प्रतीत होता है मानो भारतीय संस्कृति हिंदुस्तानियों की सरनामी हिंदी संस्कृति से कही ऊपर है और जागरूकता विकास व सर्जनात्मकता पर इसका कुप्रभाव दिखाई देता है।
4. सूरीनाम में हिंदी व उर्दू को बनाए रखना है तो सबसे पहले सरनामी हिंदी को बचाना होगा।
5. सरनामी हिंदी कहे जाने पर सूरीनाम का संदर्भ आता है जो सरनामी संस्कृति की झलक देता है।

श्री मारहे के लेख के अतिरिक्त कुछ अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन रहे। इनमें उल्लेखनीय हैं– शीला सहतू बैजनाथशाह मास्टर का सरनामी हिंदी व्याकरण पर शोधपत्र (वर्ष 1975 में) सरनामी कलेक्टिव झुम्पा राजगुरू के ऐसा समाचार में लेख। *ऐसा समाचार* सरनामी पत्रिकाओं का आधार बनी। के. बैजनाथ का सरनामी हिंदी साहित्य पर शोधपत्र (वर्ष 1978 में), श्री डी. रामलाल व श्री आर. रामलाल की सरनामी हिंदी की मूल निर्देशिका वर्ष 1977) सीता किशन द्वारा वैज्ञानिक लेख, जिनमें मुख्य था उनका उनका स्नातकोत्तर शोधपत्र (Lexical interference in Sarnami & a sociolinguistic approach) और जीत नाराइन व टी. दामस्तीग की सरनामी हिंदी पुस्तक–का हाल जिसे वाँ विशेष रूप से उन लोगों के लिए तैयार किया गया है, जो अपने आप हिंदी (देवनागरी) पढ़ना–लिखना और जानना चाहते हैं। इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें डच, अँग्रेजी, सरनामी, स्रनाँग व जावा को माध्यम बनाया गया है। जिन्हें भी इनमें से कोई भी भाषा आती है वह सरलता से हिंदी व देवनागरी लिपि सीख सकता है।

सरनामी संबधी यह आंदोलन वर्ष 1970 व 80 के दशक में चरम पर था किन्तु वर्ष 1990 तक आते–आते इसकी तीव्रता कम होने लगी। इस दौरान सूरीनाम में 1986 में सूरीनामी मंत्री परिषद ने निर्णय लिया कि सरनामी हिंदी रोमन लिपी में छपेगी। (यह सूरीनाम के सरकारी राजपत्र में संकल्प संख्या 4562 में पारित हुआ। 1983 से 1992 के बीच भाषा नामक पत्रिका छपी, जिसमें सरनामी हिंदी पर लेख छपे। जून 1983 में पारामारिबो में सरनामी पर पहला सेमिनार आयोजित किया गया। वर्ष 1985 व 1986 में पारामारिबो की वैज्ञानिक सूचना

संस्था ने सरनामी हिंदी में लोककथाओं की दो पुस्तकें निकाली।

समर इंस्टीटयूट आफ लिंग्विस्टिक ने सरनामी पर कई पुस्तकें प्रकाशित कीं जैसे डुइसकाम्प की पाठ्य पुस्तक (वर्ष 1980 में) और कई छोटी–छोटी कहानियों की पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं।

वर्तमान स्थिति

आज सूरीनामी हिंदुस्तानी सरनामी हिंदी को अपनी मातृभाषा तो मानते हैं किन्तु उसका प्रयोग मुख्यतः घर के भीतर तक ही सीमित है। कार्यालयों, सार्वजनिक स्थानों आदि पर डच व्यवहार में लाई जाती हैं तथा औपचारिक स्थानों, पूजा स्थलों आदि में मानक हिंदी का प्रयोग किया जाता है। यहाँ हिंदी को बहुत सम्मान और आदर दिया जाता है।

वर्ष 2010 में सूरीनाम में भाषा के मानकीकरण पर विशेष बहस आरंभ हुई जिसके लिए एक भाषा आयोग गठित किया गया। हिंदुस्तानी वर्ग के दो प्रतिनिधि सूरीनाम हिंदी परिषद के मौजूदा अध्यक्ष श्री भोलानाथ नारायण जी व भाषाविद् श्रीमती लीला गोबरधन इस भाषा आयोग में शामिल हैं और सरनामी को मान्यता दिलाने के लिए हिंदुस्तानी वर्ग के साथ मिलकर काफी सक्रियता से कार्य कर रहे हैं।

सरनामी की यह यात्रा जारी है और निरंतर हिंदी को समृद्ध कर रही है। इसका जीता जागता प्रमाण है हाल ही में प्रकाशित डॉ. जीत नाराइन का कविता संग्रह 'रहन'। रहन की कविताओं का चक्र सूरीनाम में जिए गए जीवन पर एक शोध है। कवि अपने पुरखों के अनुभवों को गहनता से अपने भीतर उतार कर महसूस करता है और आगे बढ़ने की कोशिश करता है: स्थिति क्या है, क्या हुआ, परिणाम क्या हैं, लोग क्या महसूस करते हैं, वे किस तरह का रवैया अपना कर नई स्थिति का सामना कर सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे सरनामी नई स्थितियों का सामना करती रही है।

संदर्भ –

1. Theo Damsteegt, Sarnami a living language in Language Transplanted, the Development of Overseas Hindi, edt by, Richard K- Barz and Jeff Siegel (published by Otto handrassowitz Wiesbadden, pp. 120
2. Caught between Christianization, assimilationand religious independency & The Hindustanicommunity in Suriname, Erik Roosken
3. Theo Damsteegt, Sarnami as an Immigrant Koine inA tlas of the Languages, edtd by Eithne B- CarlinA वाँ rendz, published by KITLV Press, Royal Institute of Linguistics andA ntropology, 2002, pp. 345-
4. हरिदेव सहतू; सूरीनाम की भाषाओं के संदर्भ में हिंदी की स्थिति; शोधाध्ययन, 1986, pp- 76
5. Tim Van DerAvoird, Determining Language Vitality; Tilburg University; 2001
6. रहन – डॉ. जीत नाराइन, 2017
7. Culture and Emotional Economy of Migration, Badri Narayan 2017, Routledge Taylor and Francis group, pp. 188

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो

अत्योदय भवन, सीजीओ काम्प्लैक्स,

नई दिल्ली–110003

हिंदी का विश्वभाषाई वर्चस्व और अंतःबाह्य विश्लेषण

डॉ. शुभ्रता मिश्रा

हिंदी वह भाषा है, जिसे सदैव अपने अस्तित्व और वर्चस्व के लिए संघर्ष करना पड़ा है, बावजूद इसके कि वह एक सशक्त वैज्ञानिक भाषा है। अपने ही देश से लेकर विश्व स्तर तक हिंदी स्वयं के विश्वभाषाई स्वरूप और वर्चस्व को साबित करती आई है, फिर भी एक भाषा के रूप में उसका विश्लेषण कभी समाप्त ही नहीं होता। यह एक शाश्वत सत्य है कि भाषा कोई भी हो, वह एक ऐसी वैश्विक शक्ति होती है, जो स्पष्ट भावात्मक श्रृव्यता के दृष्टिकोण से इस पृथ्वी पर सिर्फ मनुष्य को प्राप्त है।

भाषा एक आनुवांशिक प्रवृत्ति है, जिसे व्यक्ति अपने पूवर्जों से सीखता है और सुविधानुसार उसका विकास करता रहता है। हिंदी भाषा में भी समय समय पर हुए भाषाई विकास स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। विश्व में प्रचलित अनेक भाषाओं की तरह ही हिंदी के भी अपने आंतरिक गुण–अवगुण हैं, जिनके आधार पर हिंदी विश्व के कुछ कोनों की सीमितता से लेकर समस्त विश्व के लगभग हर कोने तक एक व्यापक विस्तार स्वरूप में उपयोग की जाती है। हिंदी की यही वृहत् उपादेयता उसे वैश्विक स्वरूप प्रदान कर विश्वभाषा बनाती है। भाषाविज्ञान के सिद्धांत के अनुसार कोई भाषा तब विश्वभाषा कहलाती है, जब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अधिक–से–अधिक बोली जाती है और पूरी दुनिया में बड़ी संख्या में लोगों द्वारा दूसरी भाषा के रूप में सीखी और बोली भी जाती है।

विश्व भर में लगभग 3,500 भाषाएं और बोलियां उपलब्ध हैं। यह अलग बात है कि ये सभी भाषाएं पूरी तरह से प्रचलन में नहीं रह गई हैं। इनमें से कितनी ही भाषाएं अपने अस्तित्व के संकट से जूझ रही हैं। आंकड़ों के अनुसार इस समय पूरे संसार में केवल सोलह भाषाएँ ही ऐसी हैं, जिनका प्रयोग लगभग पांच करोड़ से अधिक लोग मौखिक और लिखित दोनों स्वरूपों में कर रहे हैं। अरबी, अंग्रेजी, इतालवी, उर्दू, चीनी, जर्मन, जापानी, तमिल, तेलुगू, पुर्तग़ाली, फ्रांसीसी, बंगला, मलय–बहास, रूसी, स्पेनी और हिंदी ये वे प्रमुख भाषाएँ हैं, जो लोगों द्वारा व्यवहार में लाई जा रही हैं। भाषाविदों के अनुसार विश्व की जीवंत भाषाएं अपने अनेक गुणों के कारण विश्व भाषाओं का स्थान प्राप्त करती हैं। विश्व भाषा का निर्धारण केवल उसके मातृभाषियों और विदेशियों की एक बड़ी संख्या के वक्ताओं और प्रयोक्ताओं की कुल संख्या के आधार पर ही नहीं किया जाता, बल्कि इसके लिए कुछ अन्य मानदण्ड भी बहुत मायने रखते हैं।

भाषा का भौगोलिक वितरण, अंतरराष्ट्रीय संगठनों और राजनयिक संबंधों के रूप में उस भाषा विशेष की विश्व के अनेक देशों में आधिकारिक स्थिति तथा क्षेत्र व विषयवार प्रायोगिकता, व्यापक रूप से एक विदेशी भाषा के रूप में पाठ्यक्रम के माध्यम से सिखाया जाना, उसकी भाषाई प्रतिष्ठा, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, संगठनों व शैक्षणिक समुदायों में उपयोग के साथ संबंध और विश्व साहित्य का एक महत्वपूर्ण भाग होना जैसे मानदण्ड किसी भाषा को वैश्विक बनाते हैं। उदाहरण के लिए पिछली कई शताब्दियों से अंग्रेजी, फ्रेंच और स्पेनिश भाषाएं विश्व

भाषा के रूप में स्थापित हैं, क्योंकि दुनिया भर में इनके क्रमशः 150, 27.4 और 56.7 करोड़ से अधिक लोग इनका प्रथम और द्वितीय भाषा के रुप में उपयोग कर रहे हैं। साथ ही आधिकारिक, शैक्षणिक, अकादमिक व साहित्यिक स्तर पर भी इनका प्रयोजन अन्तरराष्ट्रीय भाषायी पैमानों के तदनुसार चला आ रहा है।

वास्तव में वैश्विक भाषा तंत्र विश्व के विविध भाषा समूहों के मध्य संयोजनों का एक सरल प्रतिमान कहा जा सकता है। वर्ष 2001 में डच समाजशास्त्री अब्राम डी. स्वान ने अपनी पुस्तक 'वर्ड्स ऑफ द वर्ल्ड : द ग्लोबल लैंग्वेज सिस्टम' में कहा है कि विश्व के भाषा समूहों के बीच बहुभाषी संयोजन महज संयोग नहीं हैं, बल्कि वे संयुक्त रूप से एक ऐसे आश्चर्यजनक सशक्त एवम् कुशल भाषायी अन्तर्जाल के निर्माण के लिए उत्तरदायी हैं, जिसके कारण पृथ्वी के छह अरब निवासी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से एक दूसरे के साथ मिलकर काम करते आ रहे हैं। इस तरह यह जटिल वैश्विक भाषा तंत्र अपने सिद्धांतों के आधार पर विश्व की भाषाओं के मध्य संबंधों को ध्यान में रखते हुए उन्हें चार स्तरों क्रमशः परिधीय, केंद्रीय, परिकेंद्रीय और अतिकेंद्रीय भाषाओं में विभाजित करता है। भाषायी केंद्र की यही प्रतिशतता किसी भाषा विशेष को जीवंत बनाते हुए उसे एक वैश्विक स्वरूप प्रदान करवाती है।

कुछ प्राप्त इण्टरनेटी विकीपीडिया आंकड़ों के अनुसार विश्व परिक्षेत्रीय आधार पर प्रथम और द्वितीय भाषा के रूप में बोलने वाले लोगों की संख्या भाषानुसार निम्न प्रकार है– मंदारिन चीनी भाषा (109.1–115.1 करोड़), अरबी (29.1 करोड़), पुर्तगाली (26 करोड़), रूसी (26 करोड़), जर्मन (10.5–13 करोड़) और डच तथा अफ्रीकी भाषा (4.6 करोड़)। इनके अलावा अन्य परिक्षेत्रीय महत्ता के मापदण्डों के आधार पर हिंदी को हिन्दुस्तानी के रूप में भारतीय उपमहाद्वीपीय क्षेत्र में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा बताया गया है। आंकड़ों के अनुसार इस क्षेत्र में विशुद्ध–रूप से 38.1 करोड़ हिंदी और 16.3 करोड़ उर्दू बोलने वाले कुल 54.4 करोड़ लोग हिन्दुस्तानी भाषा बोलते हैं। आज संपूर्ण विश्व में हिंदी 64 करोड़ लोगों की मातृभाषा, 24 करोड़ लोगों की दूसरी भाषा और 42 करोड़ लोगों की तीसरी, चौथी, पांचवीं अथवा विदेशी भाषा है।

हिंदी को विश्वभाषाई मानदण्डों के संदर्भ में विश्लेषित किया जाए तो वह विश्वभाषा के उन सभी अन्तरराष्ट्रीय पहलुओं पर खरी उतरती है, जो उसे विश्वभाषा बनाते हैं। यह अलग बात है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल होने के लिए हिंदी को अब भी दुनिया के 129 देशों के समर्थन की आवश्यकता है। लेकिन सिर्फ संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थान नहीं बना पा सकने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि हिंदी में विश्वभाषा बनने की सामर्थ्य नहीं है। यूं भी भाषाविज्ञान के आधारभूत सिद्धांत के अनुसार जब कोई भाषा विश्व के दो या दो से अधिक राष्ट्रों द्वारा बोली जाती है तो वह अन्तरराष्ट्रीय भाषा बन जाती है। इस दृष्टिकोण से देखा जाए, तो हिंदी को विश्वभाषा बने सदियां बीत चुकी हैं, जब मुगलों और अंग्रेजों ने पहली बार हिंदी को बोला था और जब ब्रिटिशकाल में गिरमिटियाओं के माध्यम से हिंदी भारत की सीमाएं लांघकर फिजी, ब्रिटिश गुयाना, डच गुयाना, कीनिया, मॉरीशस, ट्रिनीडाड, टोबेगा, नेटाल (दक्षिण अफ्रीका) आदि देशों में पहुंचकर स्वतः ही अन्तरराष्ट्रीय भाषा बन गई। आज विश्व के 206 देशों में विस्तारित हिंदी को एक अरब तीस करोड़ प्रयोक्ताओं ने वैश्विक स्वरूप प्रदान कर दिया है। भारत के बाहर हिंदी बोलने वाले लोगों की संख्या संयुक्त राज्य अमेरिका में 648, 983; दक्षिण अफ्रीका में 890, 292 और जर्मनी में 30, 000 बताई गई है। वर्तमान वैश्विक परिवेश में भारत की बढ़ती उपस्थिति हिंदी के वर्चस्व का भी उन्नयन कर रही है।

हांलाकि विडम्बना यह है कि विश्वभाषा की ओर

अग्रसर हिंदी को अपने ही देश में राजभाषा के रूप में अपना स्थान बनाने में जितना कष्ट और चुनौतियां सहनी पड़ी हैं, वे उसकी सहिष्णु प्रवृत्ति के सजीव प्रमाण कही जा सकती हैं। भारत की भाषायी विविधता के बीच हिंदीतर प्रान्तों अथवा अन्य भाषीय साक्षर से लेकर निरक्षर भारतीयों तक अपने सरल और सहज गुणों के कारण हिंदी आसानी से बोल–समझ कर विचारों को सहज रूप में पहुंचा पाने की सामर्थ्य रखती है। लोक भाषा की विशेषताओं से संपन्न और दूसरी भाषाओं के शब्दों, वाक्य–संरचनाओं और बोधगम्य आग्रहों को स्वीकार करने में समर्थ हिंदी की भाषागत विशेषता भी यह है कि उसे सीखना और व्यवहार में लाना अन्य भाषाओं की अपेक्षाकृत अधिक सुविधाजनक और सरल है। यह अलग बात है कि हिंदी की सरलता में भी कुछ लोग क्लिष्टता होने की बात करके उसके सरलीकरण का मुद्दा उठा देते हैं। भाषा विज्ञान के दृष्टिकोण से कोई भी भाषा सरल या क्लिष्ट नहीं होती, उसमें अरुचि रखने वाले लोग स्वयं की अक्षमता को भाषा की असमर्थता कहकर या तो उसे कठिन होने की संज्ञा दे डालते हैं या फिर भाषा को मनोग्रंथीय पैमाने पर उच्च या निम्न स्थान पर रखकर आत्मसंतुष्ट होने में भी उनको कोई हिचक नहीं होती। भारत में हिंदी का कठिन या सरल होना बहुत कुछ इन्हीं मानवजनित मानदण्डों पर निर्भर हो गया है।

हिंदी में बोलना और समझना और उसको लिखना ये दो अलग अलग बातें हैं। हिंदी की वैज्ञानिकता और मौलिकता इस बात से ही स्पष्ट हो जाती है कि इसे जैसा बोला जाता है, वैसा ही लिखा भी जाता है। हिंदी को सही उच्चारित करने वाले लोग उसे सही लिखते भी हैं, जबकि उच्चारण में त्रुटि करने वालों को लिखित हिंदी के गलत होने से हिंदी में सरलीकरण की सम्भावना नजर आने लगती है। हिंदी की ऐसी भावना–प्रसूत पूर्वाग्रही कठिनाईयों का कोई समाधान संभव नही है, भले ही इसके सरलीकरण के उद्देश्य से बृहत शब्दकोश और शब्दावलियां बना ली गईं हों या फिर हिंदी के आधुनिक कम्प्यूटरीकृत स्वरूप के सरलीकरण के लिए हजारों हिंदी फॉण्टों और सॉफ्टवेयरों को तैयार कर लिया गया हो। हिंदी को विश्वभाषा तो क्या ठीक से राजभाषा तक न समझने वाले हिंदी विरोधी जन भाषा के प्रति ऐसे दुराव से ग्रस्त होने की स्वयं की अभिधारणा के कारण उसे उसके वैश्विक स्वरूप में नहीं समझ पाते हैं।

अपनों के ऐसे विद्वेषों को हिंदी दशकों से सहती आ रही है, फिर भी कहीं उसने अपने ढाई लाख मूल शब्दों की समृद्धता का अहंकार किए बिना दर्शनशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, भौतिक विज्ञान, जीवविज्ञान, आयुर्विज्ञान, अभियांत्रिकी, समाजविज्ञान, विधि जैसे अनगिनत विषयों की अपनी–अपनी पारिभाषिक शब्दावलियों से बने लाखों शब्दों को भी स्वयं में बड़ी सरलता से समाहित कर लिया है। हिंदी के सरलीकरण और प्रचार–प्रसार के लिए 1975 में राजभाषा विभाग के भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अधीन स्थापित किए जाने के पहले ही केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, केंद्रीय हिंदी संस्थान और शब्दावली आयोग ने विभिन्न विज्ञानों, मानविकी तथा सामाजिक विज्ञानों की मूलभूत शब्दावली के निर्माण का कार्य वर्ष 1971 में पूरा कर लिया था। तत्पश्चात इन शब्दावलियों के समन्वय तथा समेकन का कार्य प्रारंभ हुआ। वर्तमान में इन सभी शब्द संग्रहों की स्थिति पर दृष्टिपात करें तो आश्चर्यजनक आंकड़े सामने आते हैं कि बृहत् पारिभाषिक शब्द संग्रहों में विज्ञान खंड के 130000, मानविकी के 80000, आर्युविज्ञान के 50000, इंजीनियरी के 50000, रक्षा के 40000, कृषि के 17500, प्रशासन के 8000 शब्दों को सरल हिंदी में तैयार किया गया है।

इन निर्मित शब्दों की पूर्ति के साथ जब लगने लगा कि हिंदी अब सरल हो जाएगी, तो लोगों ने

उसकी व्याकरण, वर्तनी और लिपि को लेकर उसके कठिन होने के दोष लगाने के दूसरे तरीके शामिल कर लिए। हिंदी विरोधी हिंदी को कितना भी क्लिष्ट कहते रहें, परन्तु यथार्थ यही है कि स्वनिम और संकेत यानी ध्वनि और लेखन का निर्भात सहसंबध प्रदर्शित करने वाली देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता उसे विश्व की सर्वोत्तम लिपि की श्रेणी में रखती है। किसी भी भाषा का लिपिकरण और लेखन उसके संस्कारों, परम्पराओं और अभ्यास पर निर्भर करता है। भाषा का सरलीकरण सैद्धांतिक रूप से जितना सरल लगता है, व्यावहारिक रूप में उतना ही कठिन होता है। निःसंदेह हिंदी के लिए भी यही नियम लागू होता है। हिंदी का कोई शब्द, व्याकरण और वर्तनी किसी के लिए सरल है तो किसी के लिए वह उतनी ही कठिन प्रतीत होती है।

विश्वभाषाई स्वरूप के विश्लेषण से पूर्व हिंदी के स्वगृह में विकास का विश्लेषण भी कहीं–न–कहीं मायने रखता है। वर्तमान में हिंदी भाषा ने अपने सरल व तकनीकी कम्प्यूटरीकृत रूप द्वारा पूरे भारत की कार्यालयीन व प्रशासनिक गतिविधियों में एक उत्तरदायीपूर्ण भूमिका निभाई है। देश के विभिन्न भाषा–भाषियों के मध्य इसे भावों और विचारों के आदान–प्रदान का एक सशक्त एवं स्वीकृत भाषा का रूप प्रदानकर इसे पुनः प्रचलित कर पाने में उल्लेखनीय सफलता मिली है। समस्त भारत के परिपेक्ष्य में देखा जाए तो देश में जब से हिंदी का प्रयोजनमूलक स्वरूप प्रयोग होने लगा है, तब से भाषायी तौर पर हिंदी का विकास बहुत अधिक दिखाई दिया है। प्रयोजनमूलक स्वरूप के प्रादुर्भाव के माध्यम से हिंदी ने अपने मात्र साहित्यिक स्वरूप को छोड़कर जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रभावी रूप से प्रयुक्त होना प्रारम्भ कर दिया है। केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच संवादों का सेतु बनाने में प्रयोजनमूलक हिंदी की महती भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

आज कम्प्यूटर, टेलेक्स, तार, इलेक्ट्रॉनिक, टेलीप्रिंटर, दूरदर्शन, रेडियो, अखबार, डाक, फिल्म और विज्ञापन आदि जनसंचार के माध्यम हिंदी को अपना बनाने की ओर आकृष्ट हुए हैं। वहीं शेयर बाजार, रेल, हवाई जहाज, बीमा उद्योग, बैंक आदि औद्योगिक उपक्रमों, रक्षा, सेना, इन्जीनियरिंग आदि प्रौद्योगिकी संस्थानों, तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों, आयुर्विज्ञान, कृषि, चिकित्सा, शिक्षा, प्रबंधन के साथ साथ विभिन्न संस्थाओं में हिंदी माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान करने महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सरकारी, अर्द्धसरकारी कार्यालयों में मुहरों, नामपट्टिकाओं, स्टेशनरी के साथ–साथ विभिन्न तरह के पत्रों जैसे कार्यालय–ज्ञापन, परिपत्र, आदेश, राजपत्र, अधिसूचना, अनुस्मारक, प्रेस–विज्ञाप्ति, निविदा, आदि में प्रयुक्त होकर प्रयोजनमूलक हिंदी ने अपने महत्व को स्वतः सिद्ध कर दिया है।

अब भारत से बाहर विश्व परिदृश्य में नज़र दौड़ाएं तो आज हिंदी की एक अंतरराष्ट्रीय बिरादरी विकसित हो रही है। विश्व स्तर पर भाषा के शैक्षणिक स्वरूप से सम्बद्ध एक विदेशी भाषा के रूप में पाठ्यक्रम में शामिल होने के साथ–साथ विश्व के विश्वविद्यालयों, संगठनों व अन्य शैक्षणिक समुदायों में हिंदी का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है। विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों तथा सैंकड़ों छोटे–बड़े हिंदी शोध केन्द्रों में हिंदी अध्ययन–अध्यापन के कार्य सुचारु ढंग से चल रहे हैं। विदशों में इंडिया स्टडी सेंटरों के माध्यम से विदेशियों को हिंदी भाषा से परिचित कराकर भारत से जोड़ने के प्रयास चल रहे हैं। इस समय कुल 40 से अधिक देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी के पाठ्यक्रम के तहत भाषा के अलावा हिंदी में भारतीय संस्कृति, इतिहास, समाज आदि के विषय में भी पढ़ाया जा रहा है। अमेरिका के येन विश्वविद्यालय में वर्ष 1815 से हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था चली आ रही है। इसके अलावा वहां हिंदी अध्यापन के कुल 114 केंद्र हैं। इसी तरह रूस में भी सात से अधिक हिंदी

शोध संस्थान हैं।

हिंदी भाषा के साहित्य में भी विश्वस्तर पर बड़ी तेजी से विकास हो रहा है, उसमें चिंतनपरक साहित्य के रूप में हिंदी कविताओं, लघु कहानियों, आधुनिक उपन्यासों तथा लेखों की संख्या विश्वस्तर पर बहुत बढ़ी है। हिंदी में विश्व का महत्त्वपूर्ण साहित्य अनुसृजनात्मक लेखन के रूप में उपलब्ध है और उसके साहित्य का उत्तमांश भी विश्व की दूसरी भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से जा रहा है। आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक ओर जहां हिंदी विदेशों में उनके विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों और साहित्यिक परिवेश में वर्चस्व स्थापित कर चुकी है, तो दूसरी ओर अंतरराष्ट्रीय बाजार में अपनी साख बनाए रखने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियां हिंदी अपनाने के प्रति प्रतिबद्ध हो गई हैं।

वर्ष 1980 और 1990 के दशक में भारत में उदारीकरण, वैश्वीकरण तथा औद्योगीकरण की प्रक्रिया काफी बढ़ी, जिसके परिणामस्वरूप अनेक विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां भारत में आई थीं। इसी दौरान यहां विविध टीवी चैनलों का भी चलन बढ़ा था, जिनके माध्यम से इन कम्पनियों ने अपने उत्पादों के विज्ञापन हिंदी में देने के लिए इन चैनलों का प्रयोग शुरु किया। देखा जाए तो तब से लगातार बढ़ी विज्ञापन की दुनिया में अंतरराष्ट्रीय व्यापार जगत में उसके बढ़ते प्रयोग के आधार पर हिंदी सबसे अधिक लाभ की भाषा साबित हुई है। कुल विज्ञापनों का लगभग 75 प्रतिशत हिंदी माध्यम से होता है। विश्वभाषा के इन मानदण्डों पर वर्तमान में हिंदी की अंतरराष्ट्रीय भूमिका का संबंध उसके बढ़ते अंतरराष्ट्रीय शैक्षणिक, साहित्यिक व व्यावसायिक संपर्कों व स्वरूपों से ही है।

सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में हिंदी भी अब कम्प्यूटर जैसे यांत्रिक और इलेक्ट्रॉनिक साधन उपकरणों पर अपनी पहचान बना चुकी है। कम्प्यूटर पर देवनागरी लिपि से लेकर हिंदी शब्द संसाधनों के संबंध में द्रुत गति से कार्य हुए हैं। हिंदी भाषा के लिए विकसित किए गए सफल सार्थक विविध सॉफ्टवेयरों ने हिंदी को एक अलग ही वैज्ञानिक आधुनिक स्वरूप प्रदान किया है। हिंदी के इसी स्वरूप के बल पर वह आज इंटरनेट और सोशल मीडिया पर विश्व में सरल रूप में उपलब्ध हो गई है। जैसे–जैसे इण्टरनेट पर हिंदी की वेबसाइटें बढ़ती जा रही हैं उसी के अनुपात में हिंदी पाठकों की संख्या में भी तीव्रता से वृद्धि दिखने लगी है। इलेक्ट्रॉनिक संचार–माध्यम और कम्प्यूटर आदि के उपयोग में हिंदी ने शनैःशनैः अपना स्थान बना लिया है। हिंदी आज कागजों से निकलकर इण्टरनेट की दुनिया में अपना सशक्त स्थान बना चुकी है। अब हिंदी में भी ई–रचनाएं, ई–साहित्य, ई–पत्रिकाएं, ई–कवि सम्मेलन होने लगे हैं। तकनीकी दृष्टिकोण से हिंदी विश्वभाषा बनने लायक साबित हो रही है।

वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

यद्यपि यह भी अभी उतना ही कड़वा सच है कि इण्टरनेट पर भाषावार स्थिति के आंकड़ों के अनुसार जहां अँग्रेजी 55.5 प्रतिशत से सबसे आगे है और इसके बाद क्रमशः रुसी, जर्मन, जापानी, स्पेनिश, फ्रेंच, चीनी, पुर्तगाली, इटैलियन आदि भाषाओं का स्थान आता है। इन सबके बीच विश्वस्तर पर अभी हिंदी 0.1 प्रतिशत की नगण्यता झेल रही है। हांलाकि हिंदी की इस क्षुद्रता के लिए वे 30 करोड़ से भी अधिक भारतीय ही उत्तरदायी हैं, जो इण्टरनेट का प्रयोग करने वाले विश्व के दूसरे स्थान पर आते हैं, पर हिंदी का इस्तेमाल नहीं करते। खैर, हिंदी न कभी इनके आंकड़ों की मोहताज थी और न रहेगी।

हिंदी अपने बल बूते पर गतिमान रही है और विभिन्न स्तरों पर पहली आवश्यकता बनी है। यही कारण है कि आज हिंदी विश्व क्षितिज पर अपना परचम लहराने में सफल हो सकी है।

वास्को–द–गामा, गोवा
पिन–403802

हिंदी का वैश्विक परिदृश्य और केंद्रीय हिंदी संस्थान

— प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी निरन्तर अपनी आवश्यकता को सिद्ध करती जा रही है। वैश्विक धरातल पर इसके महत्व को स्वीकार कर दुनिया के उन देशों ने भी हिंदी का पठन–पाठन आरंभ किया, जो केवल ये मान रहे थे कि यह दुनिया केवल अंग्रेजी के सहारे चलती है और अंग्रेजी वर्चस्व के बीच अन्य भाषाएँ तुच्छ या नगण्य हैं। यद्यपि विश्व के कई विकसित और विकासशील देश निरंतर अपनी भाषा में कार्य करते हुए वैज्ञानिक तथा आर्थिक दृष्टि से अपना वर्चस्व बनाए हुए थे। रूस, चीन, फ्रांस, जर्मनी, जापान और इजराइल इसके बेहतर उदाहरण हैं। इसके बावजूद लम्बे समय तक इंग्लैण्ड की गुलामी के कारण तमाम देश हीन भावना से उबर नहीं पा रहे थे। विशेष रूप से सत्तर के दशक में अंग्रेजों के गुलाम रहे कई देशों में नवस्फूर्ति आई। भाषिक चेतना तमाम आर्थिक दबावों के बीच जागृत हुई। कई विकसित देशों के उदाहरणों को देखकर यह भाव जगा कि अपनी भाषा में भी बेहतर प्रशासन किया जाता है। आर्थिक और वैज्ञानिक शोध का संबंध केवल अंग्रेजी से नहीं हैं। प्रबंधन, कृषि, शिक्षा, इतिहास, साहित्य, मनोरंजन, खेलकूद, लोक प्रशासन और कूटनीति की दुनिया केवल एक भाषा से न तो संचालित होती है, न नियंत्रित। विश्व के अलग–अलग देशों ने अपनी परम्परा, संस्कृति और लोक के बीच से विकास के अपने ढांचे ढूँढ़े हैं, निर्मित किए हैं और अपने शोधों के दम पर कई बार अंग्रेजी वर्चस्व को तोड़ा है। भारत में यह चेतना स्वतंत्रता आन्दोलन के समय ही जागृत और सक्रिय थी। कुछ अंग्रेजीदां राजनेताओं और ब्रिटिश प्रभाव में पले–पढ़े लोगों के गले हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने की बात अवश्य नहीं उतर रही थी। लेकिन स्वतंत्रता आंदोलन के महत् चेतना युक्त नेताओं तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के बीच यह चेतना स्फुर्लिंग की तरह काम कर रही थी। महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, विनायक दामोदर सावरकर, दयानंद सरस्वती, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, पंडित मदन मोहन मालवीय, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, माधव राव सदाशिव राव गोलवलकर, आचार्य विनोबा भावे, सुभाष चंद्र बोस, सरदार वल्लभ भाई पटेल तथा राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन जैसे लोगों ने भारत का विकास, जन–जुड़ाव, सांस्कृतिक चेतना का संरक्षण और अंग्रेजी वर्चस्व के तोड़ के रूप में हिंदी की महत्ता को स्वीकार कर लिया था तथा उसके प्रसार के लिए कार्य करना भी प्रारंभ कर दिया था। स्वतंत्रता संग्राम के वाँ तमाम वरिष्ठ सेनानियों ने यह संदेश दिया कि दो भारतीय यदि अन्य भाषा–भाषी हों तो आपसी संपर्क में अंग्रेजी की जगह हिंदी का प्रयोग करें।

अकादमिक तथा न्यायालय के धरातल पर हिंदी को स्थापित करने के लिए संघर्ष और रचनात्मक कार्य दोनों पिछली शताब्दी में जोर–शोर से प्रारंभ हुए थे। 1947 तक हिंदी मजबूत स्थिति में थी। परिणामस्वरूप 'राजभाषा' के रूप में भारतीय संविधान में हिंदी स्वीकृत हुई। हिंदी के तपस्वी लेखकों ने साहित्य के धरातल पर इस भाषा को समृद्ध कर विश्व की गति के साथ जोड़ा। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिंदी गद्य के जिस स्वरूप को गढ़ा, निखारा वह आजादी तक काफी समृद्ध हो गई थी। इस दृष्टि से हिंदी के उन तमाम साहित्यकारों–पत्रकारों का उल्लेख आवश्यक है, जिसमें प्रमुख हैं–प्रताप नारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, माखन लाल चतुर्वेदी, बाबू श्याम सुंदर दास, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', गणेश शंकर विद्यार्थी, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, कामता प्रसाद गुरु, किशोरी दास वाजपेयी,

लाला भगवान दीन, धीरेन्द्र वर्मा, प्रेमचंद, जैनेन्द्र कुमार, रामधारी सिंह 'दिनकर', राहुल सांस्कृतायन, बाबूराव विष्णुराव पराड़कर आदि। इनमें से तमाम लेखकों, कवियों ने अपने रचनात्मक लेखन के साथ हिंदी पत्रकारिता को भी समृद्ध बनाया तथा साहित्य को स्वतंत्रता आंदोलन के हथियार के रूप में अपनाया। ऐसे बहुत से नाम हैं जिनकी प्रेरणा और गीत जन–जन की जुबान पर थे लेकिन नाम गुमनाम या कम चर्चित रहे। स्वतंत्रता के पश्चात भी राष्ट्र–जागरण के गीत ऐसे तमाम कवियों ने लिखे जिससे हिंदी कविताएँ राष्ट्रभावना के साथ जन–जन तक पहुँची। इनकी तरलता और वेधकता ने न केवल देश में अपितु विदेशों में भी रह रहे तथा विदेश जाने वाले भारतीयों के भीतर स्वाधीन चेतना के साथ स्वभाषा का प्रेम जगाया। इस प्रभाव को हम भारतवंशी देशों के कवियों के प्रारंभिक लेखन में रेखांकित कर सकते हैं। इस दृष्टि से कुछ ऐसे अल्पख्यात कवियों का उल्लेख आवश्यक है, जिन लोगों ने प्रसिद्ध और जन–जन के कंठहार बने गीतों का सृजन किया। ऐसे कुछ नाम हैं—नंदा राही 'देहलवी', गिरधर शर्मा 'नवरत्न', नाथूराम शंकर, नारायण देवी, नष्यर, धीरजमल बच्छावत, धनंजय भट्ट 'सरल', नेमपाल मिश्र कोविंद 'पंकज', प्याजन बाई 'भागलपुरी', 'प्रणयेश शर्मा, प्रभुदयाल आर्य, बल्लभ प्रसाद गुप्त विशारद 'रसिज', बलवीर सिंह 'रंग', बहादुर शाह 'ज़फर', बालकृष्ण महिपाल, बालेश्वर गुरु, बिस्वानी, ब्रजभूषण त्रिपाठी 'निश्चल', माधव शुक्ल, महालचंद बोथरा, महावीर त्यागी, माणिक लाल वर्मा, मज़ाज़ लखनवी, मनोहर लाल 'दिल', मलखान सिंह 'सिसौदिया', 'भवानी प्रसाद तिवारी, महेंद्र चंद्र सरल, मुहम्मद मुस्तफ़ा खाँ 'मद्दाह', मुहम्मद शफी मुस्ताक, मेलाराम 'वफ़ा', त्रिशूल, 'मौलाना खुजंदी, रतन देवी मिश्र, रामचरित उपाध्याय, रामदयाल पाण्डेय, राजकुमारी श्रीवास्तव, रजा नकवी, रघुपति सहाय फिराक, मौलाना 'शिबली', रामप्रसाद 'बिस्मिल', रामानंद 'दोषी', लाड़ली प्रसाद श्रीवास्तव, लाला हरदयाल, लोचन प्रसाद पाण्डेय तथा वंशीधर शुक्ल आदि।

हिंदी की लोकप्रियता को उसकी संघर्ष की भाषा ने धार दी। स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक स्तर से लेकर उच्चतर माध्यमिक स्तर तक साठ के दशक में ही हिंदी, विशेष रूप से हिंदी भाषी क्षेत्र में स्वीकृत हो गई। सत्तर के दशक में 12वीं तक की विज्ञान, गणित और वाणिज्य की अच्छी पुस्तकें कई–कई लेखकों की बाजार में उपलब्ध हो गयी थी। हिंदी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थी इंजीनियरिंग तथा मेडिकल के क्षेत्र में चयनित होकर प्रतिष्ठा प्राप्त करने लगे थे। उसी कालखण्ड में विश्व स्तर पर हो रहे त्वरित बदलावों के बीच भारत सरकार ने भी भारत के बाहर हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए प्रयास करना प्रारंभ किया। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों ने हिंदी का अध्यापन प्रारंभ किया। 70 के दशक में भारत सरकार की विदेशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार योजना के कारण अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी अनुसंधान के कार्यों का महत्व बढ़ने लगा, जिसके परिणामस्वरूप अनेक विदेशी विद्वानों और शोधार्थियों का भारत आना प्रारंभ हुआ। फीजी, गयाना, त्रिनिडाड, सूरीनाम, मॉरीशस जैसे देशों में पहुँचे गिरमिटिया मजदूरों के वंशजों ने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता की तलाश में हिंदी की पढ़ाई के साथ शोध प्रारंभ किया। विश्व स्तर पर यह बोध धीरे–धीरे बढ़ने लगा कि हिंदी आधुनिक वैश्विक परिदृश्य में अपनी विविधर्मी प्रगतिशील भूमिकाओं के बीच तेजी से उभरती हुई वैश्विक अर्थव्यवस्था की भाषा है।

21वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जहाँ भारत में एक तरफ अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय गाँव–गाँव में खुलने प्रारंभ हुए वही उच्चस्तर पर हिंदी के अध्ययन और अध्यापन की माँग बढ़ी। विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों की संख्या भी बढ़ी, साथ ही वर्चस्व भी। भारत के तमाम विश्वविद्यालयों में हिंदी विभाग खुलने लगे। दक्षिण भारत तथा पूर्वोत्तर के विश्व विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में बढ़ती हुई हिंदी शिक्षकों की माँग को देखते हुए बड़ी संख्या में प्राध्यापकों की नियुक्तियाँ हुईं। आज कोई भी केंद्रीय विश्वविद्यालय ऐसा नहीं है जहाँ हिंदी विभाग नहीं है। पिछले चार वर्षों में पचास से अधिक विश्वविद्यालयों को हिंदी विभाग खोलने की अनुमति दी गई। इतने ही विश्वविद्यालयों के विभागों का प्राध्यापकीय दृष्टि से तथा 40 से 70 लाख

के बीच अनुदान देकर भौतिक और अकादमिक रूप से समृद्ध बनाने का उपक्रम किया गया।

विश्वभर में हिंदी सीखने के लिए जो गहरी अभिरुचि जगी है, उसका सांस्कृतिक कारण तो है ही, साथ ही दुनिया भर में यह संदेश भी गया है कि हिंदी के माध्यम से लोकतंत्र और मानवाधिकारों की रक्षा के सवाल पर जूझा जा सकता है। भारत की मीडिया की प्रभावशाली भाषा हिंदी है। सर्वाधिक पढ़े जाने वाले और छपने वाले अखबार हिंदी के हैं। उसके बाद प्रमुख भारतीय भाषाओं के हैं। वैश्विक शांति, सद्भाव और समानता के सिद्धांतों पर भारत की मूल आस्था के कारण भारत के साथ हिंदी ने भी अपनी पहचान बनाई है। दुनिया को यह मालूम है कि हिंदी भारत की राजभाषा है। भारत के संविधान ने हिंदी को बहुत मजबूत स्थिति में स्थापित किया है। यह भाषा संपूर्ण भारत में एकमात्र संपर्क भाषा की भूमिका में है। भारतीय संस्कृति और समाज की निर्मिति, प्रगति और सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण इस भाषा के माध्यम से हो रहा है। बड़ी संख्या में भारतवंशी विदेशों में तो हैं ही, निरंतर भारत से बाहर जाकर बसने वालों की संख्या बढ़ रही है। अमेरिका, खाड़ी देश तथा यूरोप के कई देशों में प्रशिक्षित, कार्यशील, ईमानदार तथा कर्मठ उद्यमियों सहित कार्मिकों की आवश्यकता है। भारत प्रशिक्षित से लेकर मजदूर वर्ग तक का मानव संसाधन उपलब्ध करा सकता है। भारत के शिक्षित–प्रशिक्षित के साथ ही कुशल–अकुशल श्रमिक निरंतर विदेशों में जा रहे हैं। ये अपने साथ अपनी भाषा लेकर जाते हैं। इनमें से विशेष रूप से खाड़ी देशों में जाने वाले लोगों की एक ऐसी संख्या है जो आपस में या अन्य देशों के नागरिकों के साथ हिंदी या अपनी भाषा के अतिरिक्त दूसरी कोई भाषा नहीं बोल सकते हैं। भारत के पड़ोसी देश विशेषकर पाकिस्तान, बंगलादेश, नेपाल और बर्मा में हिंदी समझने–बोलने वालों की अच्छी संख्या है। इन देशों के लोगों के साथ भारतीय हिंदी में बात करते हैं। इस प्रकार से हिंदी शीघ्रता से एक एशियाई संपर्क की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित होती जा रही है। उर्दू में प्रयुक्त फारसी और तुर्की की शब्दावली को हिंदी ने सहज रूप से ग्राह्य बनाया है। सैकड़ों फारसी के शब्दों से हिंदी भाषी क्षेत्र का ग्रामीण समाज भी परिचित है। इस कारण थोड़े समय में ही खाड़ी देशों में भारतीय नागरिक स्वयं को सहज महसूस करने लगते हैं। भारत में लगभग 50 करोड़ हिंदी भाषी आबादी है। 40 करोड़ के आस–पास हिंदीतर क्षेत्र के लोग हिंदी समझते हैं। इनमें से अधिकांश लोग हिंदी बोलते और लिखते भी हैं। भारत के पड़ोसी कई देश हिंदी बेहतर जानते हैं। उर्दू और हिंदी में बोलने के आधार पर फर्क न होने के कारण उर्दू बोलने वाली जनसंख्या हिंदी की तरह ही है। इस प्रकार विश्व की एक अरब से अधिक जनसंख्या में हिंदी का किसी–न–किसी रूप में प्रसार है। इस कारण वैश्विक धरातल पर हिंदी आज प्रभावी भूमिका में है।

आज हिंदी से अपेक्षाएँ भी बढ़ी हैं। प्रादेशिक भाषाओं को लगता है कि हिंदी के साथ उसकी भी समृद्धि होनी चाहिए। यह आकांक्षा सही भी है और जरूरी भी। हिंदी भाषियों को प्रादेशिक भाषाएँ सीखकर उनके संवर्द्धन के लिए सहयोग करना चाहिए। जनपदीय भाषाओं और बोलियों के बीच हिंदी माध्यम की पाठ्यपुस्तकों, कोशों और अन्यान्य शिक्षण सामग्री उपलब्ध करवाने की जिम्मेदारी हिंदी पर है। उनकी भाषा और साहित्य, विशेष रूप से लोक साहित्य का संरक्षण हिंदी के जरिए आवश्यक है। बहुत–सी बोलियों की लिपि नहीं है। उनके लिए देवनागरी लिपि उपयुक्त है। वहाँ देवनागरी के प्रचार–प्रसार के साथ ही बौद्धिक वर्ग में उसकी स्वीकार्यता बढ़ाने की आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति के मान बिन्दुओं, प्रतीकों और इतिहास को भारतीय समाज और विश्व, हिंदी माध्यम से समझना चाहता है। अभी वह ज्ञान विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक तथा संचार के आधुनिक माध्यमों में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। उसे उपलब्ध करवाने की बड़ी जिम्मेदारी हिंदी पर है। हिंदी के रचनात्मक साहित्य का अधिकांश हिस्सा अभी किसी भी पटल पर उपलब्ध नहीं है। उसे अभी आधुनिक माध्यमों तक पहुँचाना शेष है। संघ और राज्यों के बीच प्रशासनिक तथा अन्य क्रिया–कलापों में हिंदी की स्वीकार्यता और बढ़ानी है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर वार्तालाप, संधि, दस्तावेजों का हस्तांतरण तथा अन्तर्देशीय संबंधों के धरातल पर हिंदी की भूमिका स्थापित करनी शेष है।

दुनिया हिंदी के वर्चस्व से अनभिज्ञ नहीं है। रोजगार के साधनों की तलाश तथा बाजार के दबावों ने विश्व को हिंदी सीखने के लिए विवश किया है। लगभग सौ के आसपास देशों में किसी–न–किसी रूप में हिंदी पढ़ाई जा रही है।

कई संस्थाएँ शिक्षण–प्रशिक्षण के साथ ही प्रचार–प्रसार के कार्यों में लगी हैं। इस दृष्टि से एशिया में बहरीन इंडियन स्कूल इन एसोसिएशन विद भारतीय विद्या भवन, इंडियन इंटरनेशनल स्कूल इन जापान, नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय, नेपाल हिंदी साहित्य परिषद, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, नेपाल (हिंदी संस्थान श्रीलंका, केलेनिया विश्वविद्यालय, श्रीलंका) श्री जयवर्धनपुरा विश्वविद्यालय, श्रीलंका (स्कूल ऑफ फॉरेन लैंग्वेज पैकिंग यूनिवर्सिटी प्रमुख हैं। दक्षिण पूर्व एशिया में विशेष उल्लेखनीय है–भाषा सेंटर सिंगापुर राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, हिंदी साहित्य सम्मेलन सिंगापुर, वियतनाम राष्ट्रीय विश्वविद्यालय हो. ची. मिन्ह सिटी) तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज आदि। मध्य पूर्व एशिया में कार्मेल स्कूल कुवैत, भारतीय विद्यालय मस्कट, आई.एस.एम. (भारतीय विद्यालय सलाह, आई.एस.एम.) अंतरराष्ट्रीय भारतीय स्कूल, रियाद, भारतीय समुदाय स्कूल, कुवैत आदि।

उत्तरी अमेरिका में लगभग सौ संस्थाएँ, जिसमें विश्वविद्यालय भी शामिल हैं जो हिंदी का अध्यापन और प्रचार–प्रसार कर रही हैं। इसमें से कई संस्थाओं को भारतीयों ने स्थापित कर प्रचार–प्रसार का बीड़ा उठाया है। अफ्रीका में हिंदी शिक्षा संघ, जागृति हिंदी पाठशाला के अलावा कई विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्यापन होता है। यूरोप के प्रतिष्ठित संस्थानों में किसी–न–किसी रूप में हिंदी का अध्यापन होता है। इस संबंध में बोस्टन विश्वविद्यालय, केंद्रीय विद्यालय संगठन, हिंदी बाल भवन लंदन, हैमबर्ग विश्वविद्यालय, यू.के. हिंदी समिति, उप्पसाला विश्वविद्यालय, यॉर्क विश्वविद्यालय यूके, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय–एशियन तथा मध्यपूर्वी विभाग, साउथ एशियन स्टडीज केंद्र–कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, हार्बड विश्वविद्यालय–दक्षिण एशियायी विभाग, द ऑक्सफोर्ड सेंटर फॉर हिंदू स्टडीज (ओ.सी.एच.एस.), यूनिवर्सिटी ऑफ ऑक्सफोर्ड आदि का उल्लेख आवश्यक है। आस्ट्रेलिया और प्रशांत महासागरीय क्षेत्र में भारतीयों द्वारा निर्मित कई संस्थाओं के कारण हिंदी का वर्चस्व बढ़ा है। कई विश्वविद्यालय भी हिंदी पढ़ा रहे हैं। दक्षिण अमेरिका में आधा दर्जन हिंदी अध्यापन के विशिष्ट केंद्र हैं। मॉरीशस की कई संस्थाएँ हिंदी प्रचार–प्रसार में संलग्न हैं। सत्तर से अधिक चर्चित प्रतिष्ठित हिंदी के लेखक मॉरीशस में हैं।

भारत सरकार की विदेशों में हिंदी प्रचार की योजना के अंतर्गत श्रीलंका और नेपाल में हिंदी पुस्तकालयों की स्थापना की गई। प्रत्येक वर्ष हिंदी के नवीन प्रकाशनों को इन पुस्तकालयों में खरीद कर भेजा जाता रहा है। केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा श्रीलंका में भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, कोलंबो तथा 2017 से कैंडी में हिंदी के शिक्षण कार्यक्रमों में सहायता प्रदान की जा रही है। सम्प्रति श्रीलंका में संस्थान के माध्यम से शिक्षण–प्रशिक्षण और विद्यार्थियों के लिए पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। इनकी परीक्षाओं का आयोजन संस्थान के माध्यम से होता है। लगभग 450 विद्यार्थी प्रतिवर्ष केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा आयोजित परीक्षाओं में शामिल होते हैं। परीक्षा की दृष्टि से भी वर्ष 2017 से दो केंद्र कोलंबो और कैंडी में दिए गए हैं। श्रीलंका के चार विश्वविद्यालयों में हिंदी विभाग है। कैलेनिया विश्वविद्यालय में 2016 में हिंदी विभाग में 9 प्राध्यापक थे जिनमें से 6 संस्थान के विद्यार्थी रह चुके हैं। अफगानिस्तान में हिंदी शिक्षण कार्यक्रमों को संचालित करने में संस्थान की बड़ी भूमिका रही है। 2006–07 में संस्थान ने वहाँ के विश्वविद्यालयों के लिए अफगानिस्तान जाकर पाठ्यक्रम का निर्माण किया। 2007–2009 तक संस्थान के प्राध्यापक डॉ. कृष्ण गोपाल कपूर ने नागन्हार विश्वविद्यालय, काबुल में हिंदी तथा अंग्रेजी का अध्यापन किया तथा वहाँ के लिए शब्दकोश तैयार किया।

पिछले 46 वर्षों में विश्व के 88 देशों से अब तक लगभग 3600 अध्येता संस्थान से हिंदी सीखकर गए हैं। इसके अतिरिक्त श्रीलंका के दोनों केंद्रों की संख्या अब तक लगभग 1200 की है। ये अध्येता विविध स्तरों

के रहे हैं : अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका, कोरिया आदि देशों से प्रारंभिक स्तर से हिंदी सीखने वाले अध्येता आते हैं। रूस, इंग्लैंड, अमेरिका आदि देशों से विद्वान उच्च अध्ययन के लिए आते हैं। मॉरीशस, फीजी आदि देशों से अध्येता अनुवाद, पत्रकारिता आदि क्षेत्रों में विशेष प्रशिक्षण के लिए आते हैं। संस्थान सभी तरह के अध्येताओं के लिए अलग कार्यक्रमों का विकास करता है और उनके लिए आवश्यक सामग्री का निर्माण भी करता है।

गत 46 वर्षों में यहाँ शिक्षा प्राप्त करने वाले हिंदी के विद्वानों ने इस ज्योति को अपने देशों में जलाया है और विविध क्षेत्रों में हिंदी के प्रसार में योगदान किया है। प्रो. ज़्बेर्या जी ने संस्थान से प्रशिक्षण लेकर रोमानिया में सुदृढ़ हिंदी विभाग की स्थापना की। हंगरी से आई डॉ. मारिया न्येज्येशी ने संस्थान में रहते हुए हिंदी पढ़ाने की शिक्षण सामग्री का विकास किया और पिछले कई वर्षों से हंगरी में हिंदी विभाग का नेतृत्व कर रही हैं। पोलैंड से आई दनुता अब वार्सा विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग का संचालन कर रही हैं। मंगोलिया से आए न्यामदवा न सिर्फ मंगोलिया में भारतीय संस्कृति के दूत बनकर गए, बल्कि मंगोलिया देश के राजदूत बनकर भारत में आए। चीन के प्रो. जियांग जिंग ख्वे चीन में हिंदी प्रचार–प्रसार की धुरी हैं। इसी तरह संस्थान के प्रशिक्षित हिंदी के विद्वान अपने–अपने देशों में हिंदी के अध्ययन के साथ पत्रकारिता, रेडियो–टेलीविजन के प्रसारण, अनुवाद आदि प्रयोजनपरक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं।

विश्व स्तर पर विभिन्न कार्यक्रमों में संस्थान का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पिछले 40 वर्षों में संस्थान के 39 अध्यापक विश्व के विभिन्न विश्वविद्यालयों में एक वर्ष से 5 वर्ष तक की अवधि के लिए अध्यापन के लिए नियुक्त किए गए। उस अवधि में उन्होंने अध्यापन के साथ स्थानीय विद्वानों को परामर्श दिए, शोध कार्य कर तुलनात्मक अध्ययन, शब्दकोश आदि का निर्माण किया और भारतीय संस्कृति का प्रसार किया। संस्थान भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के तत्वावधान में ट्रिनीडाड और सूरीनाम में हिंदी अध्ययन के लिए दो अध्ययन पीठों (चेयर) की स्थापना के लिए पिछले कई वर्षों से आर्थिक अनुदान देता रहा है। संस्थान ने श्रीलंका द्वारा चलाए जाने वाले पाठ्यक्रमों की संबद्धता प्रदान की है और पिछले तीन वर्षों से परीक्षा संचालित कर सफल प्रतिभागियों को अपना प्रमाणपत्र दे रहा है।

पिछले कुछ सालों में भारत सरकार की अध्येतावृत्ति पर और स्वयं के आर्थिक साधनों से हिंदी सीखने के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान और अन्य उच्च शिक्षण संस्थाओं में आने वाले विद्यार्थियों की संख्या में कई गुना वृद्धि हुई है। निश्चित रूप से इसके पीछे उनके अपने सुनिश्चित व्यापारिक प्रयोजन और मजबूत आर्थिक कारण हैं लेकिन यह हिंदी सीखने के पक्ष में एक प्रमुख कारक भी है।

अंतरराष्ट्रीय फलक पर हिंदी को निरंतर समृद्ध बनाने की दिशा में देश–विदेश के अनेक विद्वान हिंदी शिक्षकों, भाषाविदों ने निरंतर कार्य किया है और आज भी कर रहे हैं। इन सबके प्रयासों से ही हिंदी के शैक्षणिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

वाँ भारत की बढ़ती हुई शक्ति के साथ हिंदी का वर्चस्व और संख्या बल भी वैश्विक धरातल पर निरंतर बढ़ रहा है। माननीय प्रधनमंत्री नरेन्द्र मोदी जी के हिंदी व्याख्यानों ने भी हिंदी के प्रति रूझान पैदा किया है। माननीय विदेश मंत्री सुषमा स्वराज जी द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में दिए जा रहे व्याख्यानों ने नई पीढ़ी में हिंदी के प्रति एक चेतना और ललक पैदा की है। वर्तमान सरकार का ज्यादातर मंत्रिमंडल हिंदी में भाषण दे रहा है। माननीय गृहमंत्री श्री राजनाथ सिंह जी तो हिंदी भाषी हैं, हिंदी के वर्चस्व के आग्रही भी हैं। गृह मंत्रालय राजभाषा के प्रचार–प्रसार और प्रभाव की दिशा में निरंतर क्रियाशील है। माननीय गृह राज्यमंत्री श्री किरेन रीजीजू के व्याख्यान हिंदीतर क्षेत्र के साथ हिंदी भाषियों को भी आकर्षित करते हैं। निःसंदेह हिंदी कल विश्व की महत्वपूर्ण संपर्क भाषा के रूप में स्थापित तो होगी ही, आधुनिक ज्ञान–विज्ञान की भाषा भी बनेगी।

निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान,
आगरा (उ.प्र.)–282005

हिंदी का आकाश

डॉ. हरीश नवल

धरती से आकाश तक हिंदी! हिंदी!! हिंदी!!! यह नारा एअर इंडिया ने राजभाषा की स्वर्ण जयंती पर दिया था और इसे चरितार्थ होते देखा था लंदन के विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लेने जा रहे साहित्यकारों के दल ने जब डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी की अध्यक्षता में तथा डॉ. अशोक चक्रधर के संचालनकत्व में उड़ते हुए विमान में एक कवि सम्मेलन सम्पन्न हुआ था। ऐसा पहली बार नहीं हुआ था। इस परम्परा का सूत्रपात वर्षों पूर्व द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लेने जाते समय मॉरीशस पहुंचने से पहले हवाई यात्रा में डॉ. कर्णसिंह कर चुके थे... जिसका संचालन डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने किया था... हवाई यात्राएं जारी हैं... हिंदी यात्रा जारी है। वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदवी, खड़ी बोली आदि की यात्राएं कर हिंदी अपने आज के स्थान तक पहुंची है। विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली या प्रयोग की जाने वाली भाषाओं में हिंदी अग्रणी है। भारत के अतिरिक्त राज–काज या कार्यालयी भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड, गुयाना, नेपाल आदि अनेक देशों में भी मान्य है। जहां ऐसी मान्यता नहीं है, ऐसे विश्व के अनेकानेक देशों में हिंदी का प्रयोग व्यवसाय, शिक्षा या सांस्कृतिक सरोकारों आदि के रूप में किया जाता है। ऐसे देशों में दो करोड़ से अधिक प्रवासी और अनिवासी भारतीय हैं, जो इन प्रयोगों का दायित्व वहन कर रहे हैं।

भारत से बाहर रहने वाले भारतीयों के प्रायः चार वर्ग माने जाते हैं, जो भारतीय भाषाओं के राजदूत हैं। प्रथम वर्ग में वे भारतवासी हैं जो ढाई हजार वर्ष पूर्व से धर्म–प्रचारकों के रूप में गए। द्वितीय वर्ग उन भारतीयों का है, जो गिरमिटियों के रूप में (एग्रीमेंट या शर्त बंदी प्रथा के अन्तर्गत) फिजी, मॉरीशस, त्रिनिडाड, गियाना, सूरीनाम, ग्वाटालूप, दक्षिण अफ्रीका, मार्टिनी, जमैका आदि देशों में गए। तृतीय वर्ग में वे भारतीय हैं, जो रोज़ी–रोटी कमाने अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि देशों में जा बसे। चतुर्थ वर्ग ऐसे भारतीयों का रहा है जो शिक्षा, प्रशिक्षण, भारतीय राजकीय सेवा या विदेशी उपक्रमों में सेवा हेतु जाते हैं। यह सचमुच गौरव और किंचित आश्चर्य का विषय है कि भारत के अतिरिक्त विश्व के पौने दो सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी भी अध्ययन का विषय है, जिनमें अमेरिका के पच्चीस विश्वविद्यालय भी सम्मिलित हैं। हिंदी शिक्षण के सौ से अधिक केंद्र अमरीका में है। यही नहीं विद्यालयी स्तर पर विश्व में भारत से दूर एक हज़ार से अधिक स्कूलों में हिंदी विषय है जिसे भारतीय व गैर भारतीय बच्चे पढ़ते हैं।

विदेशी हिंदी विद्वानों और साहित्य सर्जकों की एक परम्परा विगत दो ढाई सौ वर्षों से अबाध रूप से जारी है। इंग्लैंड के जॉन गिलक्राइस्ट, ग्रियर्सन और फ्रांस के गार्सा द तासी से लेकर वेल्जियम के फादर कामिल बुल्के, जापान के प्रो. दोई, तोशि तनाका और तोशि मिजोकामी, रूस के वरान्निकोव, डिमिसित्स, चेलिशोव आदि, इंगरी की ईवा और मारिया निगेशी, चेक के प्रो. स्मैकल, पौलेंड के प्रो. वृंस्की, ऑस्ट्रेलिया के प्रो. वाज, इटली की मारियो ला, जर्मनी के लोठार लुत्ज़े और श्लैंडर, फ्रांस की निकोलस बलबीर और बादविल, इंडोनेशिया के बी. राम, बल्गारिया की योरदाका, अमेरिका के चार्ल्स गोरडन रोडरमल तथा प्रो. गिबरेला, चीन के पाओकाड, कनाडा के जिस्तोफर किंग, रोमानिया के जार्ज आंका इंग्लैंड के ही मैंकग्रेगर और रूपर्ट स्नैल, कोरिया की किम, श्रीलंका की इंदिरा दसनायके, मॉरीशस के रसपुंज, वासुदेव विष्णुदयाल, मधुकर, नागदान, ठाकुरदत्त पाण्डेय,

चिंतामणि सोमदत्त बखौरी, अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, नेमा डागंगू फीजी के कमला प्रसाद मिश्र, जोगेन्द्र सिंह कमल और विवेकानंद शर्मा/सूरीनाम के मुंशी रहमान खां, सुरजन परोही और महात्म, त्रिनिडाड के छोटकन लाल, हरिशंकर आदेश और रविन्द्र महाराज, गियाना के पं. रामलाल आदि अनेक प्रख्यात नामों के अतिरिक्त और भी न जाने कितने हिंदी सेवी सेवारत् हैं। यह शोध का विषय है। हिंदी साहित्य के अनेक विधाओं के सर्वप्रसिद्ध हिंदी लेखक प्रायः प्रवासी भारतीय हैं जिनमें मॉरीशस के प्रवासी भारतीयों का लेखन विशेष उल्लेखनीय है।

अनिवासी भारतीयों ने इन्हीं प्रवासी भारतीयों की भांति विश्व में हिंदी की ध्वजा का आरोहण किया है। आज अमेरिका में डॉ. भूदेव शर्मा हिंदी की पत्रिका 'विश्व–विवेक' के माध्यम से हिंदी साहित्य और भाषा के प्रति चेतना भर रहे हैं। नार्वे के अमित जोशी की हिंदी पत्रिका 'शांतिदूत' एक अति प्रभावी पत्रिका सिद्ध हो चुकी है, जो हिंदी की एक गहरी छाप छोड़ रही है। इंग्लैंड में 'हिंदोस्थान' 'प्रवासिनी' और 'पूर्वा' पत्रिकाएं हिंदी की आभा बिखेर रही हैं जो अनिवासी नागरिकों के योग से ही प्रकाश में हैं। वि.प्र. 'बटुक', मदनलाल मधु, इंदु प्रकाश पाण्डेय, म.म. गौतम, अचला शर्मा, कु. चंद्रप्रकाश सिंह, उषा प्रियवंदा, दीप्ति नवल, सुषम बेदी, कृष्ण बलदेव, उषा राजे सक्सेना, पदमेश गुप्ता, सुरेश चंद्र शुक्ल, वैद राजेंद्र अरुण, गौतम सचदेव आदि जैसे बहुत अनिवासी भारतीय रचनाकार हैं, जो भारत से दूर अपने–अपने परिवेश में हिंदी के माध्यम से भारत बसाए हुए हैं।

प्रवासी भारतीयों के हिंदी भाषिक प्रयोग और भाषा का महत्व प्रत्येक देश में एक सा नहीं है। भारतवासियों की भांति भाषा के साहित्यिक प्रयोग की दृष्टि से मॉरीशस का स्थान सर्वोपरि है। मॉरीशस में भाषा के साहित्यिक प्रयोग की दृष्टि से मॉरीशस का स्थान सर्वोपरि है। मॉरीशस में भाषा संरचना का आधार भारतवासियों से मिलता–जुलता है। हिंदी भाषा को लोकप्रिय बनाने के लिए मॉरीशस रेडियो और दूरदर्शन निरंतर प्रयासरत है। एम.बी.सी. यानी 'मारीशन ब्राडकास्टिंग कम्पनी' के तत्वावधान में पूरे दिन हिंदी के कार्यक्रम आते हैं। मॉरीशसवासी दूरदर्शन के माध्यम से भारतीय गीत–संगीत को देखना, सुनना पसंद करते हैं। भारत के लोकप्रिय धारावाहिक वहां भी लोकप्रिय हैं। 'कौन बनेगा करोड़पति' कार्यक्रम ने मॉरीशसवासियों को काफी प्रभावित किया है।

मॉरीशस के महात्मा गांधी संस्थान ने हिंदी की उच्च शिक्षा का समुचित प्रबंध किया है। वर्ष 1988 से हिंदी का डिप्लोमा कोर्स, वर्ष 1990 से बी.ए. ऑनर्स हिंदी और वर्ष 2001 से एम.ए. हिंदी का प्रावधान किया गया है। हिंदी और फ्रेंच का ज्वाइंट ऑनर्ज़ पाठ्यक्रम मॉरीशस विश्वविद्यालय द्वारा चलाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम है, जिसमें विद्यार्थियों की रुचि बढ़ नही है। इन उच्च उपाधियों हेतु स्थापित किए गए इन हिंदी के कोर्सों का वर्चस्व बढ़ रहा है। वहां बी. ए. हिंदी ऑनर्स व एम.ए. हिंदी के विद्यार्थियों के लिए लघु शोध–प्रबंध लिखना भी अनिवार्य है, जो उनकी रचनाशीलता और शोधवृत्ति को बढ़ाता है। हिंदी के इन महती पाठ्यक्रमों के समुचित विकास और दिशा तय करने के लिए दिल्ली विश्वविद्यालय से एक बाह्य परीक्षक नियुक्त किया जाता है जो 'मॉडरेशन' भी करता है।

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

विद्यालयी स्तर पर भी हिंदी की प्रगति उल्लेखनीय है। सभी विद्यालयों में हिंदी विभाग हैं। हिंदी पत्रकारिता के अन्तर्गत मॉरीशस के बहुत से पत्र–पत्रिकाओं के नाम है, जिनमें समकालीन परिदृश्य में 'इंद्रधनुष', 'बसंत' ... आदि महत्वपूर्ण रहे हैं। ... अभिमन्यु अनत आज भी बेहद सक्रिय हैं तथा मॉरीशस के सबसे महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप में सम्पूर्ण हिंदी जगत में जाने जाते हैं। उनके साहित्य के कतिमय अनुवाद फ्रेंच में भी आए हैं। फ्रेंच का उत्थान हिंदी की तुलना में इस समय मॉरीशस में बहुत हो रहा है, हिंदी सेवियों को इस तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है।

फीजी में हिंदी की गंगा अविरल बहती रही है परन्तु वहां का हिंदी साहित्य अभी मॉरीशस की तुलना में कुछ पुराने स्वर का है। डॉ. विजयेन्द्र स्नातक का कथन है कि 'यदि कमला प्रसाद मिश्र भारत में रहते, पंत की भांति लोकप्रिय होते, अब पं. विवेकानंद शर्मा का निर्मित होता जा रहा है। 'लहर' पत्रिका के सम्पादन के अतिरिक्तत उनके उपन्यास 'जब मानवता कराह उठी'

और 'प्रशांत की लहरें' चर्चा का विषय हैं।

साथ पेसिफिक विश्वविद्यालय के अधीन फीजी में बी.ए. हिंदी और एम.ए. हिंदी की कक्षाओं का प्रावधान है। हिंदी का एक व्यावसायिक लाभ वहां के उन युवाओं को हो रहा है जो आस्ट्रेलिया जाकर पढ़ना या बसना चाहते हैं। भाषाई परीक्षा के अन्तर्गत वे हिंदी परीक्षा उत्तीर्ण करके भी आस्ट्रेलिया जाने के अधिकारी हो सकते हैं। हिंदी उनके लिए भारत से अमरीका जाने वालों के लिए 'टफल' की भांति है।

'रेडियो फीजी' से हिंदी के कार्यक्रम लगातार प्रसारित होते हैं। कार्यक्रमों का रूप अभी नवीनता की ओर बढ़ना आरम्भ हुआ है अन्यथा भक्ति गीत–संगीत ही प्रचलित हैं। फीजी में अभी राजनैतिक कारणों से हिंदी को प्राथमिकता नहीं दी जा रही है, क्योंकि हिंदी वहां भारतीय प्रवासियों की अस्मिता के साथ जोड़ कर देखी जाती है।

यही अस्मिता सूरीनाम में भी है और त्रिनिडाड में भी। इन देशों में भी भारतीयों को आपस में जोड़ने का मुख्य बिन्दु हिंदी ही है। सूरीनाम राजनैतिक अस्थिरता के कारण अभी बंद द्वार सा है, जिस कारण वहां की स्थिति ठीक से आंकी नहीं जा सकती। वेस्ट इंडीज़ विश्वविद्यालय' में हिंदी विभाग है, जहां भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् द्वारा भारत से हिंदी प्राध्यापकों को चुनकर भेजा जाता है।

त्रिनिडाड में हिंदी भाषा रोमन लिपि में मंदिर संस्कृति के साथ जुड़ी है। अंग्रेजी के वर्चस्व ने हिंदी को भुला दिया था जो अब विगत दस वर्षों से तीव्र गति से उभर रही है। मॉरीशस में रेडियो से प्रसारित होने वाले हिंदी कार्यक्रमों में हिंदी फिल्म 'गीतमाला' सर्वोपरि है। अंग्रेजी में हंस हनुमान सिंह की हिंदी गीतों की व्याख्या के बाद गीत श्रवण करने में जनता की बेहद दिलचस्पी रहती है। जहां तक साहित्य सृजन पक्ष है, त्रिनिडाड में वर्तमान में विशेष उल्लेखनीय साहित्यकार नहीं हैं। हरिशंकर 'आदेश' के बाद रविन्द्र महाराज की हिंदी की सराहना साहित्य जगत में सुनी जाती है या राजनेता वासुदेव पाण्डे की हिंदी वक्तृता बहुत प्रभावी है।

भाषागत अध्ययन की विशेषताओं से युक्त हो व्याकरण या भाषा–वैज्ञानिक आधार पर किसी भाषा को जानने की इच्छा से विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन हो ही रहा है। अपने विपुल साहित्य और उसकी विशिष्टताओं के कारण भी दुनिया में यह भाषा आकर्षित कर रही है। सम्पर्क भाषा के रूप में भी हिंदी भारत के अतिरिक्त कई अन्य देशों में भी सार्वजनिक रूप से प्रयोग की जाती है, जिसका एक खूबसूरत उदाहरण संयुक्त अरब अमीरात और संलग्न ओमान आदि देशों में देखने को मिलता है। इन खाड़ी देशों में अरबी भाषा केंद्र में है तथा उसे पर्याप्त सम्मान भी दिया जाता है। जहां कहीं भी अंग्रेजी भाषा में नामपट्ट आदि हैं वहीं साथ ही अरबी में भी हैं। राजकीय उपक्रमों में वहां अरबी को ही तरजीह दी जाती है। मस्कट में विश्वविद्यालय में अरबी और अंग्रेजी भाषाओं के ही विभाग हैं, किसी अन्य भाषा के नहीं– तब भी दुकानों व्यवसाय केन्द्रों आदि में जो सम्पर्क की या विनिमय की भाषा है– वह उर्दू शब्द मिश्रित हिंदी है। ओमान में बसे प्रवासी भारतीयों में मलयाली भाषी नागरिकों का वाहुल्य है, तत्पश्चात गुजराती, हिंदी और पंजाबी भाषियों का स्थान हे। ओमान के विकास के आधार में भारतीय ही है– अतः वहां मलयाली, गुजराती या पंजाबी में भारतीयों का आपसी विनिमय सम्भव नहीं हो पाता, वे हिंदी में बात करते हैं– उधर अरबी भाषी नागरिक इनसे सम्पर्क के लिए फारसी से होते हुए उर्दू और फिर हिंदी पर टिक जाते हैं।

खाड़ी देशों के भारतीयों के लिए अमीरों की कम्पनियों द्वारा 'इंडियन स्कूल' का प्रबंधन होता है, जहां सी.बी.एस.ई. भारत का पाठ्यक्रम व उसी के अधीन परीक्षाएं निर्धारित व संचालित करता है। केवल मस्कट में ही सोलह ऐसे भारतीय स्कूल हैं, जिनमें प्रत्येक स्कूल में कम–से–कम दो हजार विद्यार्थी हैं। इन विद्यार्थियों के लिए आठवीं कक्षा तक हिंदी पढ़ना अनिवार्य है, नवमी कक्षा से हिंदी और फ्रेंच में से एक चुनना होता है।

बहरहाल खाड़ी में लगभग दो सौ इंडियन स्कूल हैं, जहां हिंदी विभाग बड़ा विभाग माना जाता है। हिंदी विपणन के कारण भी वहां बाज़ार की मुख्य भाषा है, जो उसकी शक्ति का परिचायक है।

बाज़ार और मीडिया का प्रभाव आज पूरी दुनिया

की सभी मुख्य प्रयोग की जाने वाली भाषाओं के साथ जुड़ा हुआ है। बाज़ार और मीडिया अन्योन्याश्रित हो उठे हैं। हिंदी को इससे अपनी शक्ति जानने का अवसर मिला है। स्विटजरलैंड जैसे शांत सैलानियों के देश में इसी वजह से हिंदी भारी मांग में है। माउंट टिटलस पर्वत के हिम शिखर पर स्थित प्राकृतिक गुफा को देखने भारी संख्या में पर्यटक जाते हैं। पर्वतीय मार्ग पर वहां हिंदी में लिखी तख्तियां जो स्वागतार्थ लिखी हैं, किसी भी भारतीय पर्यटक को भावुक और चकित कर देती है। संलग्न लगे बाज़ारों में जाने पर बड़ी–बड़ी दुकानों से सेल्ज़ गर्ल्ज़स हिंदी में पर्यटकों को पुकार कर माल खरीदने की गुहार करती देखी जा सकी है। यह हुआ बॉलीवुड की हिंदी फिल्मों की चमक से। मुंबई के निर्माता, निर्देशक फिल्मों की शूटिंग के लिए पूरी यूनिट के साथ स्टिज़रलैंड जाते हैं, जहां उनकी अभ्यर्थना, उपभोक्ता–सामग्री की बिक्री के लिए हिंदी भाषा में की जाती है।

हिंदी सिनेमा की यह भाषाई प्रसारक देन पूर्वी यूरोप के बल्गारिया, ग्रीस आदि देशों में भी बखूबी देखी जा सकती है। हिंदी फिल्मों के कलाकारों प्रति वहां आकर्षण तथा हिंदी फिल्मी गीतों के प्रति उनका आग्रह चौंकाता है। इंग्लैंड, इटली, बेल्जियम, जर्मनी और फ्रांस तक यह जादू फैला हुआ है। फ्रांस के अधुना नगर पेरिस में इत्र के भव्य स्टोरों में फ्रेंच युवतियां हिंदी में न केवल अभिवादन अपितु समस्त विनिमय कर भारतीय, पाकिस्तानी, श्रीलंकाई, नेपाली, बंग्लादेशी और अफगानी ग्राहकों को आकर्षित भी करती हैं और जेब से अनायास लीरा खींचती हैं।

अफगानिस्तान फिर से उठने की प्रक्रिया में है, वहां आजीविका के साधन सुलभ नहीं रहे हैं। पढ़ने में यह बात संभवतः अचरज की होगी पर सच है। हालैंड का 'मोतीमहल' रेस्तरां हो, पेरिस का 'लालकिला' रेस्तरां या कलोन जर्मनी में स्थित 'विम्पी', सभी जगह यूरोपीय–सी दिखने वाली आकर्षक अफगानी बालाएं यूरोपीय वेशभूषा में हिंदी बोलते हुए भोजन परोसती दिख जाती हैं। हिंदी का ऐसा वर्चस्व इस रूप में भी होता होगा, यह विस्मयकारी ही लगता है।

अब एक नज़र अपने कुछ पड़ोसी देशों पर भी डाल ली जाए। पाकिस्तान में हिंदी शिक्षण की विश्वविद्यालयी व्यवस्था अच्छे स्तर पर है। लाहौर से करांची तक हिंदी की गूंज है। वहां के हिंदी कथाकारों, समीक्षकों में एक विशेष नाम अहमद हमेश का है, जिन्होंने भारतीय साहित्य की एन्थॉलॉजी उर्दू भाषा में प्रस्तुत कर हिंदी साहित्य के विशिष्ट संदर्भ दिए हैं।

नेपाली साहित्य पर हिंदी साहित्य का पर्याप्त प्रभाव रहा है। हिंदी साहित्य नेपाली साहित्य की तुलना में लगभग एक हज़ार वर्ष अधिक प्राचीन है, जिससे नेपाली साहित्य निरंतर प्रभावित हुआ है। शौरसेनी प्रकृति से निकलने के कारण नेपाली, हिंदी और गुजराती के साथ साम्य रखती है जिस पर देवनागरी लिपि होने से नेपालवासियों के लिए हिंदी सीखना कठिन नहीं होता। प्रतिवर्ष हज़ारों की संख्या में नेपाली छात्र–छात्राएं शिक्षा ग्रहण करने भारत आते हैं और हिंदी सीखते और प्रयोग करते हैं। हिंदी सिनेमा का जादुई प्रभाव भी नेपाल को हिंदी के सामर्थ्य के लिए उत्सुक करता रहता है।

हिंदी का भाषिक व साहित्यिक अध्ययन नेपाल के विश्वविद्यालयों में होता है, विशेषकर वाँ त्रिभुवन विश्वविद्यालय में भारतीय हिंदी प्राध्यापक आमंत्रित किए जाते रहे हैं।

म्यांमार यानी बर्मा में हिंदी का अध्ययन विगत चौरासी वर्षों से 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' के माध्यम से होता रहा है। एक समय वहां पांच सौ से अधिक हिंदी पाठशालाएं थीं। वहां की आर्य समाज संस्थाएं भी हिंदी के प्रचार–प्रसार में तत्पर रही हैं। हिंदी के अन्यतम प्रसारक, प्रचारक और शब्द–शिल्पी 'मौतिरि' (चंद्रप्रकाश प्रभाकर) जिन्हें 'गोदान' का बर्मी भाषा के अनुवाद करने पर तत्कालीन बर्मी सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया, ने अनेक हिंदी कृतियों का बर्मी में तथा बर्मी साहित्यिक कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया है, जिनमें टैक्तो फो नांई मौताया और चीओं जैसे समर्थ वर्गी रचनाकार हैं। मौतिरि 69 वर्ष की आयु में अभी भी हिंदी–बर्मी अनुवाद करते हैं, वे म्यांमर से विस्थापित होकर दिल्ली में रहते हैं।

जापान के डेढ दर्जन विश्वविद्यालयों में हिंदी सिखाई जाती है। वहां की हिंदी पत्रिका 'ज्वालामुखी' का सहित्यिक स्तर बहुत ऊंचा माना जाता है। हिंदी के माध्यम से भारत को जानने की लालसा से जापानी

हिंदी सीखते हैं। प्रो. दोई, तोश तनाका, कोगा आदि सम्मानजनक नामों के बाद इस समय जापान में हिंदी के प्रोफेसर तोमिओ मिजोकामि विश्व स्तर पर हिंदी प्रसारक के रूप में यशस्वी हो रहे हैं। वे हिंदी के अतिरिक्त बंगला और पंजाबी भाषाओं के भी अच्छे जानकार हैं। उनका कार्य क्षेत्र विस्तृत एवं बहुमुखी है, उन्होंने हिंदी धारावाहिक 'रामायण' का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन एवं रूपांतर तैयार करने के अतिरिक्त 'काया–कल्प'' नाटक की जापानी छात्रों की रंग मंडली लेकर देश–विदेश में उसका प्रस्तुतीकरण का बीड़ा उठाया है। हिंदी में इस जापानी प्रस्तुति का मंचन देख 1999 में लंदन में आयोजित हुए विश्व हिंदी सम्मेलन के अवसर आए प्रतिनिधियों ने न केवल भरसक सराहना की अपितु अपने देशों में निमंत्रित भी किया।

ओसाका विश्वविद्यालय और तोक्यो विश्वविद्यालय के अतिरिक्त ताइको विश्वविद्यालय, ओतानि विश्वविद्यालय, ओचेमन माकुइन विश्वविद्यालय और कानन विदेशी भाषा विश्वविद्यालय में भी हिंदी का यथोचित शिक्षण होता है। जापान में हिंदी भाषा का शिक्षण कराने में कई भारतीय विद्वानों की महत्वपूर्ण भूमिका है। चीन में भी हिंदी–चीनी शब्दकोश बहुत प्रसिद्ध है तथा पूर्वी भाषा विभाग, पेइचिंग विश्वविद्यालय हिंदी अध्ययन का एक बड़ा केंद्र है, जहां ल्यू को नान जैसे समर्थ हिंदी भाषाविद् पढ़ाते रहे हैं, उन्होंने चीनी भाषा में हिंदी पाठय–पुस्तक भी प्रकाशित की, जिससे वहां के वासी सुगमता से हिंदी सीख पाते हैं। वर्ष 1949 में चीन में सांस्कृतिक आंदोलन के बाद से हिंदी अध्ययन की सुविधाएं विकसित होती रही हैं। सम्प्रति भक्ति काल से आधुनिक काल तक की अनेक प्रमुख हिंदी कृतियों के अनुवाद चीनी भाषा में हो चुके हैं।

रूस में विगत पचास वर्ष से हिंदी का अध्यापन निर्बाध हो रहा है। यूं 1930 में स्थापित प्राच्य अध्ययन संस्थान, लेनिनग्राद से हिंदी साहित्य का परिचय रूसवासियों को मिलता रहा है। रूस के विदेश मंत्रालय द्वारा संचालित अन्तरराष्ट्रीय संबंध संस्थान' मास्को से पांच साल का पाठ्यक्रम निर्धारित है, जो रूसी राजनयिकों के प्रशिक्षण के लिए होता है जो भारत आते हैं।

शोध कार्य और अनुवाद कार्य, दोनों ही किसी भी भाषा को विकसित करने में सहायक होते हैं। डॉ. ब्लादीमीर चेरीनस्कोव अनुवाद में अग्रणी हिंदी भाषाविद् है। गौरतलब है कि ऐसी अनुदित पुस्तकों के संस्करण वहां तीस चालीस हजार प्रतियों के होते हैं। हिंदी विद्वानों में वरान्निकोव, चेलिशोव, येर्निशोव, ल्यूदमिला आदि नामों से हिंदी प्रेमी परिचित हैं।

वर्ष 1994 से 'वॉयस ऑफ रशिया' रेडियो से प्रतिदिन दो घंटे के हिंदी कार्यक्रम प्रसारित होते रहे हैं। भारत–रूसी मैत्री क्लबों द्वारा हिंदी सिनेमा तथा उनके संगीत से रूसियों को परिचित करवाया जाता है। 'भारतभूमि' और 'भारत दर्पण' हिंदी पत्र भी रूस से प्रकाशित हुए हैं।

श्रीलंका की हिंदी सेवी इंदिरा दसनायके अन्तरराष्ट्रीय हिंदी जगत की एक विभूति हैं। सिंहली भाषाविद इंदिरा, हिंदी की एक श्रेष्ठ अध्यापिका और लेखिका हैं। सिंहली भाषा में संस्कृत के अतिरिक्त हिंदी के भी बहुत से शब्द है, जो सिंहलियों को हिंदी सीखने की ओर प्रेरित करते हैं।

श्रीलंका में स्कूल और कॉलेज स्तरों पर हिंदी सीखने की सुविधा है। विद्योदय विश्वविद्यालय, बैलणी विश्वविद्यालय और पेरादेणी विश्वविद्यालय में हिंदी अध्ययन का प्रावधान है।

शास्त्रीय संगीत और हिंदी फिल्मों ने श्रीलंका में हिंदी को बचाकर रखा हे। यदि हिंदी–सिंहली शब्दकोश तैयार नहीं होते, हिंदी पढ़ना और अधिक असुविधाजनक हो जाएगा।

हिंदी मां की देशी और विदेशी संताने हिंदी का गौरव और मान बढ़ाने को कृतसंकल्प रही हैं। थाईलैंड के करुणा कुशलासय, कोरिया के ली जंग हो, नेपाल के सूर्यनाम गोप, म्यांमर के हरिवदन शर्मा आदि भारत के निकटस्थ देशों में हिंदी की दुंदुभि बजाते रहे हैं। इससे पता चलता है कि हिंदी का आकाश अत्यंत समृद्ध है।

65, साक्षर अपार्टमेंट, ए–3, पश्चिम विहार,
नई दिल्ली–110063

हिंदी का विश्व, विश्व की हिंदी

—डॉ. प्रेम जनमेजय

हिंदी भाषा को लेकर सकारात्मक एवं नकारात्मक, दोनों तरह की सोच विद्यमान है। जहां एक ओर सकारात्मक सोच के साथ हिंदी के स्वयंसेवी सैनिक है जो तन, मन और धन से इसकी सेवार्थ युद्ध स्तर पर मोर्चे पर सन्नद्ध है, अपनी अस्मिता की पहचान मान गंगाजल की तरह इसे सहेजे हुए है, विश्व के कोने – कोने में अध्यापन द्वारा, डॉलर में ही सही , अपनों से दूर अजनबी देश में कार्यरत हैं। हिंदी के विश्व को सुदृढ़ आधार देने के लिए देशी विद्वान ही नहीं विदेशी विद्वान भी अपनी भूमिका निभा रहें। अनेक प्रवासी भारतीय चाहे अपने बच्चों या अपने कारण दूसरी माटी की गंध के साथ जी रहे हैं , वो भी हिंदी साहित्य में अपनी उपस्थिति बनाए रखने के लिए हिंदी का वातावरण बनाए हुए हैं। छोटे – छोटे ही सही व्यक्ति, संस्था, समूह आदि के धरातल पर हिंदी की सीमा को असीम करने और विश्व में उसकी महत्वपूर्ण उपस्थिति को रेखांकित करने के लिए प्रयास जारी हैं। प्रशासकीय धरातल पर सरकार भी हिंदुस्तान में हिंदी को उसका देय देने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ तक में हिंदी की महत्वपूर्ण उपस्थिति को दर्ज कराने के लिए कटिबद्ध लगती है। राजभाषा विभाग द्वारा विविध विषयों पर आयोजित विचार–विमर्श नए झरोखे खोल रहा है।

एक समय था विश्व में ब्रिटिश राज्य का सूर्य नहीं डूबता था, आज हिंदी का नहीं डूबता है। विश्व के किसी–न–किसी कोने में लगातार हिंदी वायुमंडल को अपने शब्दों से भर रही है। भारत सोता है तो त्रिनिदाद, सूरीनाम, अमेरिका, कैनेडा जैसे देश जागते हैं और वहां हिंदी के शब्द वातावरण में प्रविष्ट होते रहते हैं। विश्व के 116 विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जा रही हो तो ऐसा कौन–सा क्षण होगा कि हिंदी उच्चरित न हो रही हो। हिंदी के संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनने में चाहे विलंब हो पर हिंदी का अपना राष्ट्र विकसित हो चुका है। अस्मिता की पहचान बनी हिंदी को गिरमिटिया देशों में गंगाजल की तरह पवित्र मानकर अपने हृदय पात्र में सहेजा गया है। ब्रिटेन, कैनेडा, अमेरिका, नार्वे, दुबई आदि जैसे अनेक देशों में बसे प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य का हिस्सा बने जन्मभूमि की गोद का ममत्व पाने को आवागमन करते रहते हैं। प्रोत्साहन के लिए प्रवासियों के लिए प्रवासी साहित्य पर न केवल विश्वविद्यालय में शोध हो रहे हैं अपितु प्रवासी साहित्य केंद्रित अनेक पुरस्कारों/ सम्मानों की स्थापना की गई और की जा रही है।

ऐसे में लगता है कि जैसे विश्व में हिंदी का बसंत छाया हुआ है पर प्रकृति तो परिवर्तनशील है, जिसमें सभी ऋतुएं अपने रंगों रोगन या बदरंगी के साथ अपनी 'छटा' बिखेरती रहती हैं। हिंदी का बसंत है तो पतझड़ भी है, हिंदी की बाढ़ है तो सूखा भी है और ठिठुरन भी है।

तुलसीदास ने प्रभु के लिए लिखा है, ' जाकि रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी '। आजकल हिंदी भी प्रभु की मूरति हो गई है और अनेक रूपों में अपने भक्तों का कल्याण कर रही है। किसी के लिए हिंदी विवशता है, किसी के लिए नौकरी, किसी के लिए अपनी अस्मिता की पहचान का प्रतीक, किसी के लिए अपनी अभिव्यक्ति को रचनात्मक एवं सौंदर्यपूर्ण आकार देने का माध्यम और किसी के लिए राजनीति के अखाड़े में दंगल करने का यंत्र और मंत्र। अपनी – अपनी भावना के अनुरूप लोग हिंदी के चरणों में नतमस्तक हैं।

भाषा का नवउपनिवेशीकरण हो रहा है। एक सोचे षड़यंत्र के तहत अखबारों और चैनलों की हिंदी भाषा को भ्रष्ट किया जा रहा है। हिंदी के लिए विपन्न, अक्षम,पुरातनपंथी एवं निर्बल देवनागरी लिपि को छोड़कर 'सरल, सहज, सस्ती, टिकाउ, सुंदर, मार्डन एवं सम्पन्न रोमन लिपि अपनाने की नेक सलाह दी जा रही है। हिंदी की बढ़ती ताकत को देखते हुए उसे अशक्त करने की चालें चली जा रही हैं।

हिंदी का भी भूमंडलीकरण हो गया है। हिंदी मात्र अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में एक भाषा ही नहीं है अपितु वह बाजार को विवश कर रही है कि वह उसकी ताकत को स्वीकारे। कभी भाषा और पानी कुछ कोस बाद बदल जाते थे परन्तु आज हालात यह हैं कि हर कदम पर बोतल में बंद एक ही स्वाद से युक्त तथाकथित मिनरल जल मिलता है और दिल्ली जैसे नगर के किसी भी कोने में एक साथ हिंदी के अनेक रूप कानों में रस घोलने लगते हैं। दूरदर्शन पर ही लगता है कि जैसे प्रत्येक चैनल की हिंदी अपना ही स्वरूप लिए हुए है। विज्ञापनों की भाषा, समाचारों की भाषा, धारावाहिकों की भाषा और हिंदी फिल्मों से अपनी रोजी – रोटी चलाने वाले बेचारे हीरो–हिरोईन की कब्जीयुक्त हिंदी – भाषा ने आपके कानों में अनेक प्रकार के रस घोलते ही होंगे। वैसे तो आपके पब्लिक स्कूली होनहार अध्यापिका या अध्यापक आपसे हिंदी में बात करके अपना स्तर नहीं गिरायेगी / गिरायेगा और अगर उसने गिरा भी लिया तो जो हिंदी उनके श्रीमुख से निकलेगी उसे सुन आप ईश्वर से प्रार्थना करेंगे कि हिंदी का जो होना है हो, भाषा के कारण इनका स्तर न गिरे। सरल / आसान / आम आदमी की भाषा आदि के नाम पर हिंदी से जो खेल हो रहा है उसे एक अच्छे नागरिक की तरह आप नज़र अंदाज कर ही रहे होंगे। ' चैनली हिंदी समाचारों ' में भाषा की सरलता के नाम पर जो अंग्रेजी का कुमिश्रण होता है उसे देखकर तो यही लगता है बेचारी हिंदी बहुत गरीब है, जिसके पास शब्द नहीं हैं और समर्थ अंग्रेजी कितनी उदार है कि वह हिंदी को शब्द दे रही है। मैंने अनेक हिंदी समाचारों में ' आसान हिंदी ' के नाम पर अंग्रेजी शब्दों का जो मिश्रण देखा है उससे तो अनेक बार भ्रम होने लगता है कि यह समाचार हिंदी के हैं या अंग्रेजी के। फिर मेरा देसी मन मुझे डांटता है कि रे जड़ तूने कभी अंग्रेजी के समाचारों में हिंदी के वाक्यों को सुना है जो ऐसी शंका करता है। अंग्रेजों ने हमपर शासन किया था कि हमने उन पर ! आज जो वे अपने माल को बेचने के लिए तेरी तुच्छ हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं , तेरी हिंदी को अपनी अंग्रेजी से समृद्ध कर रहे हैं तो तू उनका अहसान मान और नतमस्तक हो जा। अंग्रेजी बोलने में जो गौरव है वो हिंदी बोलने में कहा। दिल्ली विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ते समय मैंने अक्सर अनुभव किया कि विद्यार्थी हिंदी और उसके पढ़ाने वाले को बहुत फालतू – सी वस्तु समझते हैं।

भाषा हमारे सामाजिक स्तर का पर्याय बन गई है। अति सम्पन्न कॉलोनियों की भाषा, यहां तक उनके सेवकों की भी भाषा अंग्रेजी है और निम्न आय वर्गीय कॉलोनियों की भाषा हिंदी है। बेचारा मध्यवर्ग, वह तो इधर–उधर डोलता रहता है। हिंदी जानने वाले से वैभवयुक्त कार में बैठा कोई बड़ा अंग्रेजी में रास्ता पूछता है तो बेचारा टूटी– फूटी अंग्रेजी में उत्तर देकर गौरवान्वित होता है। पांच सितारा होटल में हिंदी के अखबार और पत्रिकाएं ढूंढ़े नहीं मिलती हैं तो क्या हुआ हम ढाबे में अंग्रेजी के अखबार और पत्रिकाएं कहां आने देते हैं। कभी आपने संभ्रांत ,खूबसूरत पाश्चात्य परिधान,जींस–शींस में लिपटी एवं खिला हो ज्यों बिजली का फूल जैसी सन्नारियों से हिंदी में बतियाने का साहस किया है ? आपका बच्चा अंग्रेजी स्कूल में पढ़ता है और उसका विज्ञान विषय कमजोर है तो आपको उसे हिंदी वाले स्कूल में भरती कराने का सुझाव दिया जाता है। कमजोर विज्ञान है और आपको सुझाव भाषा सुधारने का दिया जाता है। आप तो जानते ही हैं कि ये स्कूल वाले आपके बच्चे के भविष्य के बारे में कितने चिंतित हैं। बच्चे ने जरा–सी भी हिंदी बोली नहीं कि उसके लिए दंड निर्धारित है। करे बच्चा और फाईन का दंड भुगते मां–बाप। इसलिए समझदार मां– बाप चाहे आपस में और विशेषकर घर में अम्मा बाउजी से हिंदी बोलने में बोलने के लिए विवश हों अपने 'बालगोपाल' से अंग्रेजी में ही बतियाते हैं। गुलामी की जंजीरों को काटा होगा शहीदों ने अपने रक्त से, पर हम तो अपने बच्चों को हजारों रुपयों की डोनेशन देकर पुनः मूषको भवः जैसी स्थिति का सुअवसर दे ही रहे हैं। हम भूल गए हैं कि भाषा संप्रेषण का माध्यम है न कि हमारे सामाजिक स्तर की कसौटी। हमने माध्यम को ही कसौटी बना डाला है।

हम भारत में हिंदी को संपर्क भाषा बनाने की 'इच्छा' रखते हैं। हो सकता है इस इच्छा को साकार करने के लिए प्रयत्न भी हो रहे हों पर परिणाम उत्साहजनक नहीं हैं। आज भी भारत के अनेक अहिंदी राज्यों की संपर्क भाषा अंग्रेजी ही है। पिछले दिनों पर्यटन की दृष्टि से कश्मीर जाना हुआ। आम कश्मीरी पर्यटकों से आवश्यकतानुसार हिंदुस्तानी में बात तो कर लेता है पर मुझे किसी भी दुकान या राज्य सरकारी/ गैर सरकारी संस्थान का सूचना/नाम पट्ट हिंदी में नहीं मिला। हां 'गांधी खादी जैसे' केंद्रीय सरकार द्वारा संचालित संस्थानों अथवा कार्यालयों में हिंदी और अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में मिले। यही स्थिति चेन्नई की है जहां पर्यटकों से आवश्यकतानुसार हिंदुस्तानी में व्यावसायी हिंदी में बात तो कर लेता है पर स्वयं हिंदी का प्रयोग नहीं करता है।

वाँ

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

हिंदी दरिद्र नहीं है और न ही हिंदी की स्थिति दयनीय है। इसे दयनीय वे सिद्ध कर रहे हैं, तो इसे दयनीय रखने में अपने स्वार्थ साधते हैं। हिंदी आज देशीय सीमा से निकल कर विश्व के आकाश पर अपनी पताका लहरा रही है। विदेशी कंपनियां अपने फायदे के लिए ही सही, हिंदी के आगे नतमस्तक होती दिखाई पड़ रही हैं। इन सबके साथ हमें भी हिंदी का प्रयोग कर खुद को गौरवान्वित महसूस करना होगा।

73 साक्षर अपार्टमेंट्स,
ए–3 पश्चिम विहार नई दिल्ली– 110063

हिंदी : भाषा, भारतीयता एवं भविष्य

—डॉ. नरेश मोहन

सांस्कृतिक, वैज्ञानिक तथा शास्त्रीय दृष्टि से विवेचन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि भाषा केवल विचार– विनिमय का ही नहीं बल्कि स्वयं विचार का भी साधन है क्योंकि भाषा के माध्यम से ही सार्थक और समग्र चिन्तन संभव होता है। भारत में शब्द को ब्रह्म तथा भाषा को ब्राह्मी कहा गया है, अमर कोश में ब्राह्मी को भारती और भाषा का पर्याय बताया गया है। भाषा विचार को विवेक प्रदान कर उसे नियमित, निगमित तथा निगदित करती है। कभी–कभी 'भाषा' शब्द का प्रयोग अभिव्यंतना के अर्थ में न होकर 'कहने का ढंग' का द्योतक होता है। इसी उपक्रम में शब्द को ब्रह्म और भाषा को ब्राह्मी कहने का आशय यह है कि सृष्टा और सृष्टि एक ही तत्व के दो रूप हैं, शब्द आकाश का लक्षाण है और आकाश सर्वव्यापी है, इसी प्रकार शब्द से प्रसारित वाणी, सरस्वती, भारती या गौरी समस्त ब्रहमाण्ड में 'सहस्त्राक्षारा' बनकर निरंतर संचारित होती है–'' अक्षाराय दीप्तिरूच्यते''। यह तभी संभव है जब अक्षार संस्कार और साधना से सम्पन्न तथा समृद्ध हो और उसका उच्चारण स्पष्ट एवं निर्दिष्ट हो, ऐसा अक्षार मंत्र बन जाता है (क्षादहः स्पष्टाक्षारी मंत्रः)। यही वह मूल है जिससे विश्व की समस्त भाषाएं प्रसूत होती हैः–

''सर्वज्ञ तदहं वंदे परंज्योतिस्तमोडपहम्।
प्रवृता यन्मुखाद् देवी सर्वभाषा सरस्वती
– नाग वर्मा

भारतीय भाषा दर्शन की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि यहां शब्द केवल अर्थ के वाहक ही नहीं बल्कि परमार्श के साधक भी रहे हैं, शब्दानुशासन के प्रणेता पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी के अंत में केवल एक ही अक्षार 'अ' को दुहरा कर समापन सूत्र 'अ अज्ञति' कहा, जिसमें समस्त भाषा तत्व का सार समाविष्ट है।

तुलसी के मानस में वाणी और विनायक अर्थात् भाषा और चिन्तन, महाकवि कालिदास का पार्वती और परमेश्वर का वाक् एवं अर्थ की संपृक्त आत्माभिव्यजंना, आदि कवि वाल्मीकि की करुणा–कलित कालकी की अभिव्यंजना वाक्यज्ञ, वाक्यकोविद्, वाग् विशरद की अभिव्यक्ति, हदयस्पर्शी– हदय हर्षिणी और कल्याणी, मार्मिक–मांत्रिक और मंदास्मित शब्द की तृप्ति मन को नव अंकुरित करती है। यह भाव वैदिक भाषा नागरी संम्प्रति संस्कृत का रहा है। संस्कृति संवाहक संस्कृत का सात्विक तथा स्पृहणीय प्रयास अंकुरित होकर हिंदी के रूप में मुकुलित हुआ।

वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

हिंदी एक समृद्धशाली भाषा है, इसमें 'वसुद्यैव कुटुम्बकम' की पवित्र भावना निहित है, क्योंकि भाषा का सीधा संबंध देश की संस्कृति से होता है इसीलिए हिंदी को भारतीय संस्कृति का मूल आधार कहा गया है जो अपने आंचल में समस्त भारतीय संस्कृतियों को समाहित किये हुए है। हिंदी मात्र भाषा ही नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति की गौरवशाली संवाहिका भी है, राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक चेतना को जोड़ने की क्षमता केवल हिंदी में ही है, इसीलिए यह हमारी संस्कृति का विश्व में साक्षात्कार कराती है। अपनी सरलता, सहृदयता, सौहार्दता एवं सहज समन्वय के गुण के कारण हिंदी देश की ही नहीं अपितु विश्व के अन्य देशों में संपर्क भाषा का दायित्व निभा रही है।

हिंदी में एक अन्तरराष्ट्रीय भाषा होने की पूर्व क्षमता है। इस क्षमता को आज के वैज्ञानिक युग में पहचानना बहुत आवश्यक है। जो विद्वान, चिन्तक, भाषा वैज्ञानिक भाषा के प्रवाह की गति को पहचानते हैं वे समझने लग गये हैं कि निकट भविष्य में विश्व में कुल दस भाषाएं अन्तरराष्ट्रीय महत्व की रह जायेगी और जिनमें आपसी आदान–प्रदान सहज और स्वयंचलित

बनाने के लिए यांत्रिक सुविधाएं सुलभ हो सकेंगी, उनमें हिंदी का प्रमुख स्थान होगा। इन निष्कर्ष को मानने वालों में भाषा विज्ञान के सामाजिक पक्ष को समझने वाले और वस्तुपरक दृष्टि से भाषा की क्षमता पहचानने वाले भाषा–शाली भी शामिल हैं।

भौगोलिक दृष्टि से भी हिंदी विश्व भाषा है क्योंकि हिंदी बोलने, लिखने या समझने वाले समूचे संसार में हैं, हिंदी एक सरल तथा सहज भाषा है जिसे आसानी से सीखा जा सकता है, इसका विपुल तथा समृद्ध वाग्ङमय है। केवल दो लिंग वाली इस भाषा में पांच सौ धातुओं का प्रयोग होता है, जिनमें आधी सकर्मक और आधी अकर्मक हैं, यह ध्वनि, पद, वाक्य, अर्थ आदि की दृष्टि से संस्कृत का सरल स्वरूप कहा जाता है। यह वैज्ञानिक तथ्य केवल हिंदी में ही दृष्टिगत होता है। हिंदी की लिपि संसार की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि 'देवनागरी' है।

हिंदी का आज सिर्फ भारत में ही नहीं अपितु भारत के बाहर भी अनेक देशों में प्रयोग किया जा रहा है। व्यापारिक क्षेत्र की आवश्यकता तथा हिंदी सिनेमा की लोकप्रियता ने हिंदी को विश्व में अग्रसर होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। व्यापारिक अवागमन तथा वस्तु विनिमय ने तो शब्द सम्पदा की अभिवृद्धि में महत्वपूर्ण ढंग से अग्रणी भूमिका का निर्वहन किया है।

हिंदी भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक और भावात्मक एकता का सार्थवाह रही है। उसकी सीमाएं सीमित नहीं रही, सही अर्थों में यह हमारी मातृभूमि की भटषिगंघ है, अखण्डता का पावन प्रदीप, ऋग्वेद की वाणी ''भारतीभिः भारती संजोषा''को यह चरितार्थ करती है। भाषा अभिव्यक्ति का साधन है, जिसके द्वारा प्राणी विचार, भाव और इच्छाएं प्रकट करता है। पिछले वर्षों में हिंदी भाषा का जो नव संस्कार हुआ है, उससे हिंदी अपना उदारवादी तथा स्वत्ववादी दृष्टि से विश्व समाज के विचारों की समर्थ वाहिका बन गयी है। आज हिंदी भाषा शाश्वत अभिव्यक्ति तक ही सीमित नहीं है अपितु ज्ञान–विज्ञान के नये–नये क्षेत्रों को उद्घारित करने में भी हिंदी किसी से पीछे नहीं है। आज हिंदी का यायावर रूप भारत तक ही सीमित नहीं है किंतु परिवर्तन की दीपाशिखा लेकर हिंदी सम्पूर्ण विश्व में भावात्मक एकता स्थापित करने में लगी हुई। सामाजिक दशाओं में परिवर्तन के कारण हिंदी का प्रयोग प्रशरता और प्रबलता के साथ विश्व समाज के विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ रहा है। अनेक मंचों पर अन्तरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी के प्रसार की संभावनाएं, भारतीय मूल के जन समुदाय में हिंदी का प्रसार–प्रचार, संभावनाएं और प्रयास विश्व के अन्य देशों में हिंदी की संभावनाएं, संयुक्त राष्ट्र में हिंदी जैसे विषयों पर गहन चिन्तन हो।

विश्व हिंदी सम्मेलनों में यह बात उभर कर आई है कि हिंदी ऐसे देश की भाषा है, जो विश्व शांति और विश्वबन्धुत्व के प्रति अगाध प्रेम रखता है। यह विश्व के मानचित्र पर हिंदी की प्रभावी लोकप्रियता को दर्शाता है। हिंदी की विश्वभर में स्थिति का आकलन कर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व भाषाओं के बीच हिंदी का स्थान विश्व जनसंख्या के अनुपात में अग्रणी है। संचार क्रांति के इस युग में लेखन, तकनीकी तथा सूचना प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में भारतीय संस्कृति और उसकी संवाहिका हिंदी का प्रवाह भी विस्तारित होता गया। विश्व में प्रयोक्ताओं की संख्या में जो आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है उसी का परिणाम है कि विश्व स्तर पर हिंदी अपना अग्रणी स्थान बनाने में सफल हुई है। विश्व में हिंदी के तेजी से फलने–फूलने का एक मुख्य कारण इसका लचीलापन भी है। इसी कारण जितनी शब्द संख्या हिंदी की बढ़ी, उतनी किसी अन्य भाषा की नहीं बढ़ी।

भाषा का संबंध व्यक्ति की आस्था, उसके विश्वास, उसके समग्र परिवेश से होता है। भाषा अपने साथ एक विशेष संस्कृति को लेकर चलती है। लहराती नदी की भांति भाषा संस्कृति के माध्यम से अपना मार्ग स्वयं बनाती जाती है, कभी ठहरती, कभी प्रखर वेगवती और कभी सामाजिक भावनात्मकता को अभिव्यक्ति देती, इसी तथ्य के आधार पर विश्व में हिंदी का प्रवाह देने वाले मुख्य कारक हैं–

I. प्रवासी भारतीयों के माध्यम से प्रसार
II. विश्वविद्यालयों में उच्चस्तरीय अध्ययन, शोध, लेखन आदि में प्रयुक्त होने पर
III. भारत या भारतीयों के साथ व्यापार बढ़ाने की

दृष्टि से संबंध बनाने हेतु

IV. अपनी उत्कृष्टता के कारण लोकप्रियता के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ में अपना स्थान बनाने की दौड़ के कारण

हिंदी को विश्व पटल पर ले जाने के लिए उक्त बिन्दुओं के साथ ही अनेक विदेशी विद्वान भी उल्लेख के अधिकारी हैं, उदाहरण रूप में डॉ. चांलोड् (थाइलैंड), प्रो. मिन हों (चीन), डॉ. वर्तिले विक्कनेन (फिनलैंड), डॉ. लाज्मन दीनशिल्स (रूस), डॉ. मारगेट गात्सलाफ (जर्मनी), प्रो मैकग्रेगर (इंग्लैंड), यमुना काचरु (यूएसए), आपार्द दैब्रेत्सैनी (हंगरी), डां. विंतसेंथ (चेक), प्रो. क्यूयादोइ (जापान), डॉ. उलत्सिफेराव (सोवियत रूस), रिचर्ड हैरिस (न्यूयार्क), फेअरबैंक्स (न्यूयार्क), जून रुसरी (कैलीफोर्निया), ब्रूस आर.पे (मिशीगन यूनी), हार्टिन (वाशिंगटन), हेनिंग्सवाल्ड (वाशिंगटन), जूलियस फ्रेडरिक (जर्मनी), डब्ल्यू एम जानसन (जर्मनी), प्रो. क्रिस्तोफर ब्रिस्की (पोलैंड), रुपर्ट स्नेल (लंदन), जांन चेंवरलेन (अमेरिका), डॉ. बार्ज (आस्ट्रेलिया), डॉ. फादर कामिल बुल्के (फ्लेंडर्स), शिलक्राइस्ट (यूरोप), डॉ. रुनाल्ड हर्नली (जर्मन) डॉ. फ्रैडरिक पिंकाट (इंग्लैंड) आदि अनेकानेक नाम दिए जा सकते हैं, जिनकी समर्पित रचनाधर्मिता के कारण भी हिंदी स्वयं को विश्व पटल पर स्थापित करने में सफल रही।

आज हिंदी एक राष्ट्र की सीमा तक ही नहीं अपितु विश्वभाषा के स्तर पर पहुंच चुकी है। विश्व के अनेक देशों में हिंदी की नवभाषिक शैलियों का जन्म हुआ है। फीजी में 'फीजीबात', सूरीनाम में 'सूरीनामी हिंदी', दक्षिण अफ्रिका में 'नैताली' तथा उजबेकिस्तान और तजाकिस्तान में 'पारया' के नाम से हिंदी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। हिंदी साहित्य का व्यापक स्तर पर विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो रहा है तथा हिंदी के साहित्यिक और भाषायी पक्ष पर विश्व के अनेक प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में अनुसंधान हो रहा है।

विश्व के अधिकांश देशों में हिंदी बोली, समझी, लिखी और पढ़ी जाती है। लगभग 180 देशों में हिंदी प्रचलित है। हिंदी दुनिया की अधिकतम बोली जाने वाली भाषा है। अपनी सहजता, वैज्ञानिक संप्रेषणशीलता, चिन्तनशील चेतना के नाते हिंदी विश्व मानवता की एकता का ज्योति पुंज है। हिंदी आज भारत में ही नहीं अपितु विश्व में विस्तारित है। विदेशों में हिंदी अध्ययन की प्राचीन परंपरा रही है। सत्य तो यह है कि हिंदी भाषा के विश्लेषणात्मक अध्ययन की परंपरा का प्रारंभ भी विदेशियों द्वारा ही हुआ है। हिंदी व्याकरण लेखन परंपरा का श्री गणेश 17वीं शती के अंतिम दशक में हुआ और हिंदी का पहला व्याकरण ग्रंथ जॉन जोशुओ केटलियर ने लिखा।

हिंदी के विश्व के देशों में प्रसार में उन देशों की भूमिका बहुत अधिक महत्वपूर्ण है जिन देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी एक विषय के रूप में पढ़ाई जा रही है या हिंदी में उच्चस्तरीय शोध अथवा लेखन हो रहा है। हिंदी अपने एक दूसरे रूप में उन विदेशियों के बीच भी प्रसार का माध्यम है, जो भारतीयों के साथ या भारतीय मूल के व्यापारियों के साथ व्यापार में संलग्न हैं और अपने व्यापार के प्रयोजन के लिए हिंदी सीखना चाहते हैं। अप्रासंगिक नहीं है कि भारतीय परंपरा के अनुक्रम में हिंदी पूरे विश्व में आत्म अभिव्यक्ति/ समाज व जनसमुदाय के सम्पर्क, राष्ट्र की अभिव्यक्ति और विश्वमैत्री के रूप में व्याप्ति पा सकी है। हिंदी की भाषिक प्रवृति स्वयं 'वसुधैव कुटुम्कम' की प्रवृति को उजागर करने वाली रही है। हिंदी स्वयं में एक अन्तरराष्ट्रीय जगत को समाहित किए हुए है। हिंदी में सम्मिलित आर्य, द्रविड, आदिवासी, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मनी, फ्रेंच, अंग्रेजी, अरब, फारसी, चीनी, जापानी आदि अनेक शब्द हिंदी के अन्तरराष्ट्रीय महत्व को एक अन्तरराष्ट्रीय मैत्री को अभिव्यक्ति देने वाले आयाम हैं।

हिंदी के अनेक शब्द मध्यकाल में ही यूरोप पहुंच चुके थे। ये लोग हिंदी को रोमन या फारसी लिपि में लिखते थे। तिब्बत और मानसरोवर कैलाश के रास्ते व्यापारियों द्वारा हिमालय को पारकर हिंदी के शब्द चीन तक और बर्मा के रास्ते इंडोनेशिया तक पहुंचते थे। विश्व स्तर पर विदेशी विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं का अध्ययन यद्यपि 18वीं शती के उत्तरार्द्ध में प्रारंभ हो गया था, हिंदी शिक्षण का प्रारंभ विश्वविद्यालय स्तर पर फ्रांस में 1828, रूस में 1918, जर्मनी में 1921, चेकोस्लोवाकिया में 1925 तथा स्वीडन में 1938 में किसी–न–किसी रूप में प्रारंभ हो गया था। सच तो यह

है कि ईसाई मिशनरियों ने ईसाई धर्म के व्यापाक प्रचार के लिए सबसे पहले हिंदी सीखी और हिंदी सिखाने के लिए शिक्षण सामग्री तैयार की।

हिंदी के संबंध में यूरोप में बड़े महत्वपूर्ण कार्य पहले से ही हो रहे थे। नागरी टाइप ढालने का कार्य सर्वप्रथम यूरोप में प्रारंभ हुआ और अथानासी किरचरी की कृति चाइना इलेस्ट्रेटा में पहले–पहल इसका प्रयोग वर्ष 1667 में हुआ। हिंदी के दो अनिवार्य अंगों का श्री गणेश विदेशों में या विदेशियों द्वारा हुआ है, वे हैं 'शब्दकोश' तथा व्याकरण वर्ष 1773 में जे. फग्यूसन ने हिंदुस्तानी–अंग्रेजी कोश तथा अंग्रेजी–हिंदुस्तानी कोश संपादित कर रोमन लिपि में लंदन से प्रकशित कराया ऐसा ही एक कोश 1790 में हेनरी हेरिस के संपादन कोश 1808 में कोलकाता से प्रकाशित हुआ। देवनागरी अक्षरों में हिंदी का पहला कोश पादरी एम. टी. एडम ने तैयार किया जो 1830 में कोलकाता से प्रकाशित हुआ।

आज विश्व के विभिन्न देशों में हिंदी अध्ययन–अध्यापन/प्रचार–प्रसार की स्थिति को निम्न रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है:–

अ) एशिया महाद्वीपः– नेपाल, चीन, श्रीलंका, बर्मा, पाकिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, अफगानिस्तान, थाईलैंड, जापान, कोरिया, फिलिपीन्स, मंगोलिया, सिंगापुर, बहरीन, ईरान, कुबैत, ओमन, कतार, साउदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात आदि

ब) यूरोप महाद्वीपः– रूस, चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड, बल्गारिया, युगोस्लोवाकिया, रोमानिया, हंगरी, इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, इटली बेलजियम, आस्ट्रिया, हालैंड, स्वीडन, नार्वे, डेनमार्क, फिनलैंड आदि

स) अफ्रीका महाद्वीपः– दक्षिण अफ्रीका, इथिरोपिया, केन्या, लीबिया, मॉरीशस, नाइजीरिया, तंजानिया

द) अमरीका महाद्वीपः– संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको, क्यूबा

घ) आस्ट्रेलिया महादीपः– आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि ऐसे लगभग 80 देश हैं जहां अन्य देशों की तुलना में हिंदी अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी है इसमें विश्व के लगभग 140 विश्वविद्यालयों को योगदान विशेष रूप से सराहनीय है।

हिंदी के विश्व व्यापी इस प्रसार में वर्तमान समय की सर्वस्वीकृत तकनीकी सूचना प्रौद्योगिकी का भी महत्वपूर्ण सहयोग है। कुछ महत्वपूर्ण साइट्स का परिचय देना समसामयिक होगा–

www.indianlanguages.com	– भारतीय भाषा साहित्य
www.tdil.gov.in	– भारतीय भाषा प्रौद्योगिकी
www.dictionary.com	– विश्व की प्रमुख भाषाएं
www.rosettastone.com	– विश्व भाषा हेतु इलेक्ट्रानिक सुविधा
www.bharatdaershan.com	– न्यूजीलैंड हेतु हिंदी साहित्य
www.unl.ias.unu.edu	– टोकियो हेतु

वाँ ऐसी ही सैकड़ों साइट्स हैं, जहां से मन पसन्द हिंदी सामग्री प्राप्त की जा सकती है।

वास्तव में निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि विश्व में उसी भाषा को प्रधानता मिलेगी, जिसका व्याकरण विज्ञान–संगत होगा। जिसकी लिपि कम्प्यूटर लिपि होगी। वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित हिंदी में ये सब गुण विद्मान हैं, इसके कार्यान्वयन की पद्धति सरल तथा सुगम है, इसीलिए हिंदी सही अर्थों में विश्व भाषा के लिए सर्वोत्तम है।

आने वाला समय निसन्देह भारत का होगा और आने वाला समय हिंदी का ही होगा।

'' अखिल विश्व में हिंदी गूंजे,
यही हमारा नारा है।
हिंदी बनती विश्वभाषा
पूरा विश्व हमारा है।। ''

बीएचईएल, रानीपुर हरिद्वार
उ.प्र.–249403

विश्वभाषा की ओर हिंदी के बढ़ते कदम

—राकेश शर्मा 'निशीथ'

सृष्टि के निर्माण काल से ही भाषा का संबंध मानव समाज से रहा है। मानव जीवन में भाषा एक अभिन्न अंग है, जिसके बिना मानव गूंगा है। इस विश्व में कई महाद्वीप, राष्ट्र, प्रांत हैं। भारतेंदु हरिश्चंद का कथन ''चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी/बीस कोस पर पगड़ी बदले, तीस कोस पर धानी'' आज भी चरितार्थ हो रहा है। विदेशों से व्यापार करने के लिए संप्रेषण के लिए आवश्यकतानुसार भाषा अपनानी पड़ती है। उपभोक्ता वस्तुओं की बिक्री और उनके प्रचार के लिए अपनाये जाने वाले साधनों में स्थानीय भाषा का उपयोग होता है। भारत में इस कार्य के लिए अधिकतर हिंदी का उपयोग हो रहा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपना माल बेचने के लिए हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाएं अपना रही हैं।

विश्व भाषा की परिकल्पना और हिंदी

आज संचार साधनों की बदौलत स्थानों के बीच की दूरियां बेमानी हो गई हैं या यह भी कह सकते हैं कि एक तरह से मिट गई है। संपूर्ण विश्व एक गांव बन गया है, जिसमें कभी भी, कहीं से भी, किसी से भी तत्काल संपर्क स्थापित हो सकता है, यदि आपके पास उसके लिए अपेक्षित साधन हों। यह भी भविष्यवाणी की जा रही है कि वैश्वीकरण के इस दौर में विश्व की दस भाषाएं ही जीवित रहेंगी, जिनमें हिंदी भी एक होगी। वैश्वीकरण एवं बाजारवाद के संदर्भ में हिंदी का महत्व इसलिए बढ़ेगा क्योंकि भविष्य में भारत व्यावसायिक, व्यापारिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से एक विकसित देश होगा।

विश्वभाषाएं तो विश्व की उस प्रत्येक भाषा को कहा जा सकता है, जिसमें प्रयोक्ता एकाधिक देशों में बसे हुए हैं किंतु विश्वभाषा पद की वास्तविक अधिकारिणी वे भाषाएं हैं, जो विश्व के अधिकतर देशों में पढ़ी, लिखी, बोली, सुनी और समझी जाती हैं। वस्तुतः प्रत्येक विश्वभाषा के प्रमुख कार्य होते हैं – बोलचाल एवं जनसंपर्क, साहित्य सृजन, शिक्षा एवं जनसंचार माध्यम, प्रशासनिक कामकाज, व्यावसायिक और तकनीकी अनुप्रयोग और विश्वबोध या वैश्विक चेतना।

विश्वभाषा से अपेक्षाएं होती हैं कि उसे बोलने–समझने वालों का विस्तृत भौगोलिक विस्तार हो। आज भारत के बाहर नेपाल, भूटान, सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैंड, हांगकांग, फीजी, मॉरीशस, ट्रिनीडाड, गयाना, सूरीनाम, इंग्लैंड, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में हिंदी भाषी प्रचुर संख्या में हैं। दूसरी अपेक्षा है कि वह भाषा लचीली हो, उसमें भिन्न संदर्भों की अभिव्यक्ति की क्षमता हो, उसका एक सर्वस्वीकृत मानक रूप हो, उसमें उपमानकों की कुछ दूर तक स्वीकृति होते हुए भी परस्पर संप्रेषणीयता किसी–न–किसी स्वीकृत मानक के माध्यम से बनी हुई हो और हिंदी में यह गुण भी हैं।

हिंदी में ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, पहाड़ी, बुंदेली, बघेली, मागधी, छत्तीसगढ़ी और जाने कितनी उपजन भाषाओं के शब्द भंडार, मुहावरे और उसकी लोकोक्तियां रच–बस गई हैं। इसके अलावा हिंदी भाषा का भारत की अन्य भाषाओं के साथ शताब्दियों से घनिष्ठ संपर्क रहा है। विश्वभाषा से तीसरी अपेक्षा है कि भाषा में विश्व मन का भाव हो। हिंदी भाषी अपने देश में भी अनेक राज्यों में निवास करने के कारण प्रांतीयता से ऊपर उठा हुआ है और उसके पास ऐसे साहित्य की विशाल परंपरा है, जो विश्व के पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रयुक्त भाषाएं

संयुक्त राष्ट्र की प्रक्रिया नियम 51 से 57 में

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा तथा इसकी विभिन्न समितियों एवं उपसमितियों के लिए आधिकारिक तथा कार्य संचालन की भाषाओं की व्यवस्था की गई है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रथम अधिवेशन में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय को छोड़कर इसके सभी संगठनों के लिए अंग्रेजी, फ्रैंच, रूसी, चीनी और स्पेनिश को आधिकारिक भाषा के रूप में स्वीकार किया गया था। वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ की छह आधिकारिक भाषाएं हैं। अरबी को यूएन की ऑफिशियल लैंग्वैंज का दर्जा वर्ष 1973 में मिला था। भारत संयुक्त राष्ट्र संघ में एक महत्वपूर्ण देश है। हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाए जाने की मुहिम की शुरूआत भारत के नागपुर में 10 जनवरी, 1975 को आयोजित प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में हुई थी। श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में वर्ष 1977 में विदेश मंत्री के तौर पर और वर्ष 2002 में प्रधानमंत्री के तौर पर हिंदी में भाषण दिया था। वर्ष 2003 में सूरीनाम में सातवां विश्व हिंदी को विश्वभाषा का दर्जा मिलना चाहिए।

03 जनवरी, 2018 को लोकसभा में पूछे गए प्रश्न के जवाब में विदेश मंत्री, श्रीमती सुषमा स्वराज ने बताया कि संयुक्त राष्ट्र संघ की सातवीं आधिकारिक भाषा के रूप में हिंदी को स्थान दिलाने के लिए कुल 193 सदस्य देशों में से दो तिहाई बहुमत यानी न्यूनतम 129 सदस्य देशों के समर्थन की आवश्यकता है। इसके साथ ही हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा की मान्यता दिए जाने के बाद होने वाला खर्च भी भारत को ही उठाना होगा। एक अनुमान के अनुसार इसके लिए शुरू में लगभग एक अरब रूपये खर्च करने होंगे।

हिंदी विश्वभाषा की ओर –सकारात्मक प्रवृत्तियां

हिंदी एक विश्वभाषा है, क्योंकि वह एक देश की राष्ट्रभाषा होने के साथ–साथ अन्य देशों में भी पर्याप्त संख्या में लोगों द्वारा लिखी, बोली और समझी जाती है। वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी के प्रति सकारात्मक प्रवृत्तियां इस प्रकार दिखाई दे रही हैं –

- भौगोलिक आधार पर हिंदी विश्व भाषा है क्योंकि इसके बोलने–समझने वाले संसार के सब महाद्वीपों में फैले हैं।
- जनतांत्रिक आधार पर हिंदी विश्व भाषा है क्योंकि उसके बोलने–समझने वालों की संख्या संसार में तीसरी है।
- विश्व के 132 देशों में जा बसे भारतीय मूल के लगभग 2 करोड़ लोग हिंदी माध्यम से ही अपना कार्य निष्पादित करते हैं।
- एशियाई संस्कृति में अपनी विशिष्ट भूमिका के कारण हिंदी एशियाई भाषाओं से अधिक एशिया की प्रतिनिधि भाषा है।
- हिंदी का किसी देशी या विदेशी भाषा से कोई विरोध नहीं है। अनेक भाषाओं के शब्द ग्रहीत होकर हिंदीमय बन गए हैं। यही कारण है कि आज हिंदी का शब्दकोश विश्व का सबसे बड़ा भाषिक शब्दकोश है।
- हिंदी स्वयं में अपने भीतर एक अन्तरराष्ट्रीय जगत छिपाए हुए हैं। आर्य, द्रविड़, आदिवासी, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, चीनी, जापानी सारे संसार की वाँ भाषाओं के शब्द इसकी अन्तरराष्ट्रीय मैत्री एवं वसुधैव कुटुम्बकम वाली प्रवृत्ति को उजागर करते हैं।
- हिंदी का साहित्येतर लेखन बढ़ा है तथा लेखन का स्तर भी ऊंचा होता जा रहा है।
- गुणवता की दृष्टि है अनुवाद की स्थिति बेहतर होती जा रही है। लघु पत्रिकाओं में मौलिक और अनुवाद के प्रकाशन का स्वागत और स्वीकार्यता बढ़ती जा रही है।
- प्रवासी भारतीय (एनआरआई) वैश्वीकरण का सबसे प्रत्यक्ष वाहक लगते हैं और आडियो–वीडियो और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से उसके बीच हिंदी एक जीवंत कड़ी बन रही है।
- इंटरनेट पर हिंदी भी स्वीकार्य और लोकप्रिय हो रही है। हिंदी पत्रकारिता और हिंदी साहित्य भी अब इंटरनेट के माध्यम से विश्वभर में प्रसारित होने लगा है।
- देश–विदेश में प्रकाशित होने वाले पत्र–पत्रिकाओं ने हिंदी को विश्वभाषा बनाया है। इसके द्वारा

हिंदी भाषा और साहित्य का प्रसार विदेशों में हुआ है।

- भारत के आकाशवाणी और दूरदर्शन हिंदी को विश्व स्तर पर स्थापित करने में निरंतर कार्यरत हैं। विश्व के टी.वी. चैनलों से हिंदी के कार्यक्रमों के प्रसारण ने भी हिंदी को विश्व भाषा बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
- हिंदी की व्यापकता के कारण दुनिया के 175 देशों में हिंदी के शिक्षण एवं प्रशिक्षण के अनेक माध्यम केंद्र बन गए हैं। हिंदी का शिक्षण एवं प्रशिक्षण विश्व के लगभग 180 विश्वविद्यालयों, शैक्षणिक संस्थाओं में चल रहा है। सिर्फ अमरीका में 100 से अधिक विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में हिंदी पढ़ाई जा रही है। इससे हिंदी का वर्चस्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।
- ''एनाकाटीर् एनसाइक्लोपीडिया'' के अनुसार चीनी भाषा के बाद संसार में प्रयुक्त होने वाली सबसे बड़ी भाषा हिंदी है। हिंदी के बाद क्रमशः स्पेनिश, अंग्रेजी, अरबी, रूसी और फ्रांसीसी भाषाओं का स्थान आता है।

विश्वभाषा के रूप में हिंदी के समक्ष समस्या

विश्वभाषा के रूप में हिंदी के समक्ष अन्य अनेक समस्याएं हैं जैसे–विदेशों से जिस अनुपात में भारतीय/हिंदू संस्कृति का ह्रास और पश्चिमी भोगवादी सभ्यता का विकास होता चला जा रहा है, उसी मात्र में हिंदी का प्रचलन काफी कम होता जा रहा है। भारत से प्रवजन, पलायन करने वाले युवा बुद्धिजीवियों और श्रमिकों पर यह भाषा टिकी हुई है किन्तु वे बड़ी तेजी से अंग्रेजियत के रंग में रंगते जा रहे हैं। उनकी अगली पीढ़ी हिंदी से अपरिचित–सी है। जब इसे संविधान में भारत की राजभाषा के रूप में स्वीकृत किया गया तो ऐसा माना जाने लगा कि इसे देर–सबेर संयुक्त राष्ट्र संघ एवं संसार की अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं–संस्थानों में भी स्थान मिलेगा और अंतरराष्ट्रीय संपर्क की भाषा के रूप में इसे भी मान्यता प्राप्त होगी लेकिन ऐसा नहीं हो सका है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के व्यापक प्रचार–प्रसार के निमित अन्तरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है, यथासंभव अनुदान भी दिया गया किन्तु जिस लक्ष्य को लेकर उसकी स्थापना की गई थी वह अपनी लक्ष्य सिद्धि तक नहीं पहुंच सका है। भारत विश्व बाजार की टेक्नॉलॉजी से जुड़ तो रहा है पर केवल अंग्रेजी के माध्यम से। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं की इन आधुनिक संचार साधनों में उपस्थिति काफी कम है।

विज्ञापन एजेंसियों में सारे विज्ञापन पहले अंग्रेजी में बनते है बाद में जैसे–तैसे उनका काम–चलाऊ अनुवाद कर दिया जाता है। सरकारी कार्यालयों में हिंदी के नाम पर अनुवाद की ऐसी कृत्रिम और अटपटी भाषा तैयार हुई है, जो आम जनता के लिए अंग्रेजी जितनी ही दुरूह है। हिंदी और अंग्रेजी की अजीबो–गरीब खिचड़ी की भाषा गढ़ी जा रही है। विश्व बाजार की नई स्थितियों में यही हिंदी भाषा की सबसे की विडम्बना है। हिंदी केवल माल बेचने की भाषा बन रही है।

कानून के क्षेत्र में हिंदी की स्थिति खराब है। अभी तक उच्च न्यायालयों से हिंदी का प्रयोग कहीं–कहीं ही हो रहा है। सर्वोच्च न्यायालय की भाषा तो संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार अंग्रेजी ही है। जो कानूनी पुस्तकें नियम, अधिनियम आदि हिंदी में हैं उनका उपयोग नहीं हो पा रहा है और न ही अधिनियमों आदि की हिंदी भाषा लोगों की समझ में आती है। अटपटे और क्लिष्ट वाक्यों से युक्त कानूनी पुस्तकों की हिंदी बहुत–से हिंदी प्रेमियों के मन में भी अरुचि पैदा करती है।

विश्व व्यापार आयात–निर्यात के क्षेत्रों में दस्तावेजों आदि के लिए प्रयुक्त मानक फार्म आदि मात्र दिखावा बनकर रह गये हैं, उनका उपयोग बहुत ही कम हो रहा है। ऐसे में विश्व बाजार से जुड़े कानूनी दाव–पेंचों, विश्व व्यापार संगठन के समझौतों, उनके संबद्ध दस्तावेजों और उस समस्त प्रक्रिया में हिंदी के प्रयोग की कल्पना करना कठिन है।

हिंदी को विश्वभाषा बनाने के लिए सुझाव

10 जनवरी को विश्व के लगभग 180 देशों में हिंदी दिवस मनाया जाता है। वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में जब हम विदेश में हिंदी की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य विदेश में हिंदी भाषा के अधिक–से –अधिक

प्रसार के साथ ही विविध क्षेत्रों में हिंदी के उपयोग से है। इसके प्रसार और उपयोग में कई कठिनाइयां हैं, जिनके समाधान की आवश्यकता है। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :–

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी की भूमिका सार्थक हो तथा उसका प्रयोग बढ़ सके इसके लिए पहली आवश्यकता हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के मानकीकरण की है। केन्द्रीय हिंदी निदेशालय ने जो लिपि का मानकीकरण किया उसका उपयोग निदेशालय के अलावा कहीं नहीं होता। यहाँ तक कि सरकारी प्रकाशनों में भी नहीं, निजी प्रकाशकों की बात तो छोड़ ही दीजिए। यही स्थिति हिंदी भाषा की भी है। हिंदी देश की संविधान स्वीकृत राजभाषा है किन्तु उसके मानकीकरण की बात प्रशासकीय स्तर पर कोई नहीं सोचता।

हिंदी के सामने अन्य हिंदी भाषा का विदेशी भाषा के रूप में विधिवत शिक्षण–प्रशिक्षण है। देश में हिंदी का ऐसा कोई भी भाषा शिक्षण संस्थान नहीं है, जिसमें विदेशियों के लिए हिंदी भाषा के ऐसे विविध पाठ्यक्रम हो, जिनको पूरा कर कोई भी विदेशी छात्र हिंदी माध्यम से चलने वाले चिकित्सा, इंजीनियरी तथा अन्य विज्ञान के विषयों को पढ़ने–समझने की अपेक्षित योग्यता प्राप्त कर सके या फिर कोई विदेशी अल्प समय में भाषा पर इतना अधिकार प्राप्त कर सके कि वह भारत में यात्रा कर सके, अपने उपयोग की सामग्री खोज सके, हिंदी समाचारपत्र पढ़कर भारत के समाचार जान सके।

विदेशी हिंदी प्रशिक्षकों के लिए पुनश्चर्या पाठ्यक्रम हो, जिनमें उनकी समस्याओं पर विचार हो और योजनाबद्ध तरीके से अपेक्षित लक्ष्य के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम तथा पाठ्य पुस्तकें तैयार की जाएं। विश्व में हिंदी का प्रसार हो, हिंदी अध्ययन–अनुसंधान की दिशा में प्रगति हो, इसके लिए आवश्यक है कि हिंदी के संदर्भ ग्रंथ तैयार किए जाएं। यह भी निश्चित है कि हिंदी भाषा और उसे बोलने वालों की जिजीविषा उसे मरने नहीं देगी लेकिन इसके लिए उसे पहले अपनी ढुलमुल मानसिकता, दुविधा, अस्पष्ट चिंतन और तनावपूर्ण मनः स्थितियों से मुक्ति प्राप्त करनी होगी। इसका एक रास्ता अपनी जड़ों और अपनी बोलियों की वापसी भी।

सूचना क्रांति के युग में हिंदी को भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में अपनी भूमिका का महत्व बताना होगा। अतः इसे कंप्यूटर की भी भाषा बनाना होगा। हिंदी में ऐसे सॉफ्टवेयर विकसित करने होंगे जिनसे वैश्विक स्तर पर सूचनाओं का आदान–प्रदान करना और भी आसानी तथा सहजता से संभव हो सके। हिंदी कंप्यूटर प्रोग्रामिंग की रूपरचना और हिंदी कूटपदों तथा संकेताक्षरों का प्रचलन होना चाहिए। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में हम अपने यहां के उत्पादों पर लेबलिंग हिंदी में करेंगे तो निश्चित ही इससे हिंदी का प्रचार–प्रसार भी होगा, चाहे वे दवाइयां हो या अन्य पदार्थ जैसे उपभोक्ता वर्ग की अनिवार्य वस्तुएं आदि।

अनुवादक और अनुवाद के उपकरण तथा दुभाषियों की लम्बी श्रृंखला चाहिए। यही सब हिंदी को अन्य विश्व भाषाओं के समकक्ष खड़ा कर सकेगा। विदेशों में हिंदी मुद्रण–टंकण, आशुलेखन की सुविधा का विस्तार होना चाहिए। हिंदी की कालजयी कृतियों का विभिन्न भाषाओं वाँ से रूपान्तर की व्यवस्था होनी चाहिए। विदेशों में हिंदी पत्र–पत्रिकाओं और पुस्तकों का प्रकाशन तथा उनकी सुलभ बिक्री–वितरण होना चाहिए। विश्वभाषाओं से सबंधित द्विभाषी, त्रिभाषी और बहुभाषी शब्दकोशों, विश्वकोशों का सम्पादन–प्रकाशन होना चाहिए।

हिंदी के प्रति हमें अपने दायित्व पर भी विचार करना होगा। वस्तुतः हिंदी में हम जितना काम कर पाये हैं ? क्या कोई भाषा मात्र अपने साहित्य की वृद्धि से ही विश्व भाषा बन सकती है ? कदाचित नहीं। वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी के विश्वव्यापी प्रसार की बात तो हम करते हैं किन्तु इस दिशा में ठोस प्रयास नहीं करते। हम कागजी योजनाएं बनाते हैं किन्तु उन्हें कार्यान्वित नहीं करते, कार्यान्वयन होता है तो उसे पूर्ण नहीं करते या कर नहीं पाते। आवश्यकता है हिंदी के वैश्विक विकास के लिए एक ऐसी ठोस भूमि तैयार करना, जिससे हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचानी जाए। इस दिशा में विश्व स्तर पर कार्य हो रहा है और प्रगति भी दिख रही है।

हिंदी का विदेशों में बढ़ता प्रभाव

हिंदी भारतवासियों की संपर्क भाषा तो बन ही

चुकी है और अब विश्वभाषा बनने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रही है। अब हिंदी भले ही संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषा नहीं है परंतु व्यावहारिक स्तर पर उसकी सभी एजेंसियों की मान्य भाषा है। संयुक्त राष्ट्र संघ हिंदी में नियमित रूप से एक साप्ताहिक कार्यक्रम प्रस्तुत करता है, जो इसकी वेबसाइट पर उपलब्ध है। हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाने के लिए सघन प्रयास जिए जा रहे हैं। जिन देशों में हिंदी बोलीं और पढ़ी–लिखी जाती है, उन देशों का एक संगठन बनाने का प्रयास भी भारत सरकार कर रही है।

हिंदी के प्रचार–प्रसार को गति देने के लिए विदेश मंत्रालय में "हिंदी एवं संस्कृत प्रभाग" का गठन किया गया है। यह विदेशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए विभिन्न गतिविधियों को संयोजित करता है। यह अपने विदेश स्थित दूतावासों के माध्यम से हिंदी के प्रचार–प्रसार में जुटी संस्थाओं को हिंदी कक्षाएं आयोजित करने एवं अन्य गतिविधियों के लिए अनुदान देता है। साथ ही यह विदेशों में अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रीय हिंदी संम्मेलनों का आयोजन भी करता है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को प्रतिष्ठित करने के लिए भारतीय संस्कृति संबंध परिषद (आईसीसीआर) महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इसने दुनिया भर में अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा पीठ की स्थापना की है। इन विश्वविद्यालयों में यह भारत से ही शिक्षक प्रतिनियुक्ति पर भेजती है, जो उस देश में हिंदी के प्रचार–प्रसार, अध्यापन, शोधकार्य इत्यादि से सहयोग करते हैं। यह प्रतिवर्ष योग्य हिंदी प्राध्यापकों का पैनल भी तैयार करती है।

आज हिंदी बारह से अधिक देशों में बहुसंख्यक समाज की मुख्य भाषा है। आज सात समुद्र पार तक एक चौथाई दुनिया में उसका परचम लहरा रहा है। अमेरिका, इंग्लैंड, जर्मनी, दक्षिण अफ्रीका, नेपाल, मॉरीशस, न्यूजीलैंड़, सिंगापुर, यमन, युगांडा इन दस देशों में हिंदी भाषी–भारतीयों की जनसंख्या दो करोड़ है। फिजी, गुआना, सूरीनाम, टोबोगो, ट्रिनिडाड तथा अरब अमीरात – इन छह देशों में हिंदी को अल्पसंख्यक भाषा के रूप में संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। भारत से बाहर जिन देशों में हिंदी का बोलने, लिखने–पढ़ने तथा अध्ययन और अध्यापन की दृष्टि से प्रयोग होता है, उन्हें हम इन वर्गों में बाट सकते हैं –

- जहां भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते है जैसे – पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, म्यांमार, श्रीलंका और मालदीव आदि।
- भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पूर्वी एशियाई देश, जैसे– इंडोनेशिया, मलेशिया, थाईलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा जापान आदि।
- जहां हिंदी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है – अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और यूरोप के देश।
- अरब और अन्य इस्लामी देश जैसे–संयुक्त अरब अमीरात (दुबई), अफगानिस्तान, कतर, मिस्र, उजबेकिस्तान, कज़ाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा देने के साथ–साथ इसे संयुक्त राष्ट्र संघ की सातवीं आधिकारिक भाषा के रूप में स्वीकृति दिलाने के लिए कुछ ठोस पहल की जाए। हिंदी में यह शक्ति कब आएगी कि वह विश्व के लिए एक ऐसी महत्वपूर्ण भाषा बन जाए, जिसकी उपेक्षा न हो सके। यह तभी होगा जब हमारी मानसिकता बदलेगी। हमें अपनी भाषा बोलते हुए गौरव का अनुभव होगा। जापान, जर्मनी, इंग्लैंड, रूस, फ्रांस, चीन आदि सभी शक्तिशाली देश अपनी भाषा में वक्तव्य देते हैं और अनुवादक के माध्यम से उनकी बात विदेशी श्रोताओं तक पहुंचती है। हिंदी को लेकर भी ऐसे प्रयासों की आवश्यकता है। हिंदी के सामने कई चुनौतियां हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक है कि हम वास्तविक स्थिति और अपनी कमियां समझें, हमें लक्ष्य का स्पष्ट ज्ञान हो, लक्ष्य प्राप्ति की सार्थक योजनाएं बनें, ईमानदारी तथा दृढ़ता से योजनाओं को कार्यान्वित किया जाए तथा समय–समय पर प्रगति का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। हिंदी को विश्व में अपना स्थान बनाये रखने के लिए मिलकर प्रयास करने की जरूरत है।

निदेशक (तकनीकी/कार्यान्वयन) के निजी सचिव
राजभाषा विभाग,
एनडीसीसी–2 बिल्डिंग, चतुर्थ तल,
जयसिंह रोड, नई दिल्ली 110001

विश्व भाषा के रूप में हिंदी

—सुश्री स्मिता शुक्ला

यदि हम अतीत के पन्नों पर नज़र डाले तो यह ज्ञात होता है कि वैदिक संस्कृत भारोपीय परिवार की भाषा है और इस भाषा में अवेस्ता आदि भाषाओं से भी किसी न किसी रूप में साम्य दिखाई देते हैं। हिंदी भाषा की एक ओर जहां प्राचीनतम जड़ वैदिक संस्कृत है जो विश्व समुदाय की भाषा हैं तो वहीं दूसरी ओर हिंदी और इसकी उपभाषाएं एवं बोलियों ने एक बार पुनः विश्व की ओर अपना रूख किया। चाहे वह भारतवंशियो के कार्य–व्यापार के साथ विभिन्न देशों में पहुंची या फिर गिरमिटिया मजदूरों के संबल और आत्मबल के रूप में, रामचरित मानस और हनुमान चालीसा के रूप में या फिर भाई चारे की भाषा के रूप में विश्व की आबोहवा में मकरंद की तरह एक बार पुनः अपनी खुशबू को बिखेरने में सफल रही। अब विदेशों में हिंदी का प्रचलन इतना बढ़ गया है कि अनुमानतः विश्व के एक शतक देशों के कालेजों और विश्वविद्यालयों में हिंदी किसी न किसी रूप में पढ़ाई जाने लगी है। हिंदी की विश्व भाषा के रूप में यह विकास यात्रा कतई बलपूर्वक नहीं है, बल्कि हिंदी की यात्रा भारतीय संस्कृति की उस निर्बाध यात्रा का ही अंश है जो कस्तूरी की तरह भारतीय संस्कृति के रूप में संपूर्ण विश्व में फैली है। हिंदी भाषा का यह विस्तार और इसकी व्यापकता गरीबी और अमीरी तथा विकासशील और विकसित देशों की सीमा रेखा से परे है। हिंदी यदि गिरमटिया देशों में प्रचलित है तो विश्व के तमाम ऐसे विकसित देशों में भी इसका बोलबाला है। हिंदी प्राचीन भारतीय संस्कृति और शिक्षा को एक बार पुनः नया आयाम देने के लिए तत्पर है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि हिंदी विदेशों में भारतीयों एवं एशियाई देशों के लोगों में किसी न किसी रूप में अब संपर्क भाषा का रूप लेने लगी है। विदेशों में बसे भारतवंशी अपनी बोलचाल की भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग करते हैं। उनके रीति रिवाज, रहन सहन, और अनुष्ठान में हिंदी का किसी न किसी रूप में प्रभाव है। सिनेमा, गीत और धारावाहिकों के माध्यम से भी हिंदी ने विदेशों में अपनी पहुंच और पहचान बनायी है।

यह कहना कठिन है कि भारत से बाहर हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार कब से आरंभ हुआ किंतु यह कहा जा सकता है कि अंग्रेजी शासन के द्वारा गुलाम व्यापार अधिनियम 1807 को 1833 में (गुलामी उन्मूलन अधिनियम 1833 के द्वारा) समाप्त कर देने के बाद बाहरी देशों में भारी संख्या में मजदूरों की कमी महसूस की जाने लगी और एग्रीमेंट (करार) के तहत मजदूरों को पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल से वर्ष 1834 से मॉरीशस, ट्रिनीडाड टोवेगो, दक्षिण अफ्रीका, गुयाना, सूरीनाम तथा फिजी आदि देशों में भारतीय मजदूरों को भेजे जाने का सिलसिला आरंभ हुआ था। अंग्रेजी शब्द एग्रीमेंट का ही अपभ्रंश रूप 'गिरमिटिया' है। गिरमिटिया मजदूरों के साथ रामचरित मानस और हनुमान चालीसा के रूप में हिंदी का प्रवेश दूरस्थ टापुओं में हुआ। मॉरीशस ऐसा पहला देश है जिसमें सन् 1834 ई. में गिरमिटिया मजदूरों ने अपना कदम रखा। निर्जन और बीहड़ टापुओं को खेती योग्य बनाने के साथ उसे भारतीय संस्कृति और हिंदी से अभिसिंचित किया। वीरान और वियाबान इलाकों को अपने कठिन परीश्रम

से मानव के रहने लायक बनाया।

गिरमिटिया देशों में मॉरीशस प्रमुख देश है जहॉ हिंदी का पठन–पाठन, लेखन और प्रचलन व्यापक रूप में देखा जा सकता है। यह अलग बात है कि मॉरीशस की राजकाज की भाषा अंग्रेजी और फ्रेंच होने के कारण हिंदी को वांछित दर्जा नहीं मिल पा रहा है। उसके बोलने वालों की संख्या में क्रमिक हास दिखाई देता है। फिर भी यहॉ हिंदी के लेखकों की कुल संख्या लगभग 150 हो चुकी है और 300 से अधिक प्रकाशित पुस्तकें उपलब्ध हैं। मॉरीशस के हिंदी के प्रमुख लेखकों पं. आत्माराम विश्वनाथ, नरसिंह दास, पं. काशीराम, राम अवध शर्मा, श्रीनिवास, वासुदेव विसुनदयाल, सोमदत्त बखौरी, रामेश्वर ओरी, अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, जय नारायण राय, डा. शिवसागर, रामगुलाम, प्रहलाद रामशरण और वीरसेन जागासिंह आदि प्रमुख है। मॉरीशस की हिंदी की रचनाओं में हिंदी रीडर्स, छत्रपति शिवाजी, शिव शक्ति, ज्योतिर्लिंगाराधन, वेद भगवान वोले, सैनिक, विष्णुदयाल रचनावाली, बीच में बहतीधारा, मुझे कुछ कहना है, मसीहे नरक जीते हैं, सागर पार, नदी बहती रही, आंदोलन, तीसरे किनारे पर, लाल पसीना, हड़ताल कल होगी, एक बीच का आदमी, पूछो इस मारी से, बनते बिगड़ते रिश्ते, नवनिर्माण की बेला, आदि प्रमुख रचनाएं है। इन रचनाओं में मॉरीशस की माटी की महक, आरंभिक समय के कष्टकारी दिन, जी–तोड़ मेहनत और भोजपुरी के रंग में रंगी हुई मॉरीशस की लोक संस्कृति का व्यापक चित्रण देखा जा सकता है। हाल के दिनों में ''लालपसीना'' सरीखी बहुचर्चित और लोकप्रिय हिंदी रचनाएं भी मॉरीशस ने दी है। लाल पसीना में गिरमिटिया मजदूरों के जीवन का बहुत सजीव एवं मार्मिक चित्रण किया गया है।

भारत से बाहर फीजी एक ऐसा देश है जहॉ हिंदी का प्रयोग राजभाषा के रूप में भी किया जाता है। यहां विद्यालयों में हिंदी के पठन–पाठन की विधिमान्य व्यवस्था है। फीजी के प्रमुख हिंदी लेखकों में कमला प्रसाद मिश्र और विवेकानंद शर्मा का प्रमुख स्थान है। कमला प्रसाद मिश्र ने फीजी में हिंदी के प्रचार–प्रसार का व्यापक कार्य किया है। श्री मिश्र ने नांदी, दीनबंधु और जागृति आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। विवेकानंद शर्मा ने ''फीजी को तुलसी की सांस्कृतिक देन'' विषय पर अच्छा कार्य किया है। 'फीजी में सनातत धर्म के सौ साल', प्रशांत की लहरें, जब मानवता कराह उठी आदि इनकी प्रमुख रचनाएं है। इन रचनाओं में फीजी में रह रहे भारतवंशियों के जीवन का अदभूत चित्रण है। इन विद्वानों के अतिरिक्त बहुत से अन्य विद्वानों ने फीजी में हिंदी के संवर्धन के लिए कार्य किया है।

सूरीनाम में बसने वाले भारतवंशी उत्तर प्रदेश और बिहार मूल के हैं। मूलरूप से भोजपुरी भाषा का प्रयोग समय के साथ–साथ सरनामी हिंदी के रूप में किया और सरनामी हिंदी सूरीनाम में मातृभाषा के रूप में मिली। सूरीनाम में हिंदी के प्रचार–प्रसार में राम प्रसाद, जगत प्रसाद, पल्टन पंडित, सरयू पंडित, सूर्यप्रसाद वीरे, महातम सिंह और यदुनाथ पंडित का उल्लेखनीय योगदान है।

कैरीबियायी देशों में त्रिनीडाड टोबैगो में भी हिंदी भाषियों की पर्याप्त संख्या है। त्रिनीडाड रेडियो पर हिंदी गीतों का प्रसारण निरंतर होता रहता है। यहॉ के प्रमुख लेखकों में हरिशंकर आदेश, और लक्ष्मी नारायण शर्मा है। हरिशंकर आदेश की प्रमुख रचनाओं में अनुराग, मर्यादा पुरूषोत्तम, मनोव्यथा, आकाश गंगा और निष्कलंक आदि प्रमुख है। कैरीबियाई देशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार में इन लेखकों का सराहनीय योगदान है।

दक्षिण अफ्रीका में हिंदी के प्रचार–प्रसार का आरंभिक श्रेय भवानी दयाल संन्यासी को जाता है। इनके प्रयासों से ही डरबन, चार्ल्सटाउन और नाताल आदि क्षेत्रों में हिंदी के प्रचार–प्रसार का कार्य आरंभ हुआ। गिरमिटिया देशों में सामान्य रूप से हिंदी गीतों

का बोलबाला है। इन देशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार में हिंदी सिनेमा का भी व्यापक योगदान रहा है।

गिरमिटिया देशों के अतिरिक्त हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार जिन देशों में अधिक है, उन्हें दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम श्रेणी में ऐसे देश है जो प्राचीन भारतीय संस्कृति से जुड़े रहे जैसे जापान, कोरिया, श्रीलंका, चीन, इंडोनेशिया, न्यूजीलैंड, थाईलैंड, नेपाल आदि प्रमुख है। इन देशों में प्राचीन भारतीय सनातन संस्कृति और बौद्ध कालीन संस्कृतियों का प्रभाव रहा है। उसी क्रम में पहले संस्कृत भाषा और तत्पश्चात पालि भाषा का प्रचलन इन देशों में काफी रहा। कालान्तर में आधुनिक भारतीय भाषाओं के उदय के साथ–साथ इन देशों में हिंदी भाषा का पठन–पाठन आरंभ हुआ है। एक समय ऐसा था जब नेपाल के सभी कालेजों में हिंदी के पठन–पाठन की व्यवस्था थी। जापान में क्यूबा दोई, तोशियो तनाका, त्सुयोशी नार और एइजो सावा आदि प्रमुख हिंदी विद्वानों ने हिंदी का प्रचार–प्रसार किया। कोरिया में लीजंग और किंम सांग ओक आदि विद्वानों के नाम प्रमुख है। नेपाल में लक्ष्मी प्रसाद देवकोढा, गोपाल सिंह नेपाली, घुस्वाँ सायमि, सूर्यनाथ गोप और कृष्ण चंद्र मिश्र के नाम प्रमुखता से लिये जाते हैं। इन विद्वानों ने हिंदी में पर्याप्त लेखन कार्य किया है। इनके अतिरिक्त नेपाल में सौ से अधिक लेखक और कवि हुए हैं जिन्होंने नेपाली के साथ साथ हिंदी में रचनाएं लिखी है।

दूसरी श्रेणी में उन देशों के नाम लिये जा सकते हैं जो न तो गिरमिटिया देश हैं और न ही प्राचीन भारतीय संस्कृति से जुड़े देश हैं। बल्कि ये ऐसे देश है जो आधुनिक युग में विकसित और विकासशील देशों की श्रेणी में हैं और इन देशों में प्रवासी भारतीय व्यवसाय, नौकरी, शिक्षा, ज्ञान–विज्ञान प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों से जुड़े हैं। इनमें संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, डेनमार्क, इंग्लैड, जर्मनी, रूस, इटली, पोलैंड, फ्रांस, बल्गारिया, बेल्जियम, हालैंड और हंगरी आदि देश शामिल है। अमेरिका के हिंदी विद्वानों में सेम्यूल केलांग, टी ग्राहमवेलीं, माइकल शोपिरो, केरीन शोमर और लिंडाहेस प्रमुख हैं। कनाडाई हिंदी विद्वानों में के व्रायर, रावई ह्यूश्टस, त्रिलोक सिंह गिल, प्रो. आर बी सिंह आदि प्रमुख है। यूरोपीय देशों में इंग्लैंड के ग्रीब्स, रेमंड आलविन, आर एस मैग्रेकर, स्पर्ट स्नेक, श्याम मनोहर पांडेय, स्टेफनो पियानो आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन विद्वानों ने इंग्लैड में हिंदी के पठन–पाठन और प्रचार–प्रसार को नई ऊर्जा प्रदान की है। जर्मनी के हिंदी विद्वानों में हेल्मूट ग्लाजेनप, तारकनाथ, जाहेक्स हर्टल, फीडरिच बेलर, मार्गेट हेलसिंग, बारबरा ब्यूरनट और लोठार लुत्से आदि प्रमुख हैं। जर्मन कवि गेट ने संस्कृत साहित्य पर अच्छा काम किया है। भारतीय भाषाओं के लिए काम करने की गेटे की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए जर्मन विद्वानों ने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार–प्रसार के लिए ठोस कार्य किया है। फ्रांस में सिलवे द साती, गार्से द तासी, ज्यूल ब्लाक, डॉ. बौदवील आदि ने हिंदी के लिए उल्लेखनीय कार्य किया है। हिंदी साहित्य की प्रमुख कृतियों के अनुवाद और व्याख्या के माध्यम से फ्रांस में हिंदी के प्रचार–प्रसार को बढ़ाने के लिए बड़ा योगदान दिया है। यूरोपीय हिंदी विद्वानों के क्रम में रूस के हिंदी के विद्वान ए पी वारान्निकोव, गेरासिम, लेवदेव, सेंके विच, डा.पी. वारान्निकोव और पी.चेलिसेव आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। हिंदी के प्रचार–प्रसार में बेल्जियम का योगदान कमतर नहीं है। बेल्जियम के लारोसर रूखर्पे, एलरोषे, जे देलू, वान आल्फन और फादर कामिल बुल्के का नाम उल्लेखनीय है। राम कथा के मर्मज्ञ फादर कामिल बुल्के के योगदान से हर भारतीय हिंदी प्रेमी परिचित है। फादर कामिल बुल्के का अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश एक प्रामाणिक शब्दकोश के रूप में संपूर्ण भारत में प्रयोग किया जाता है।

विश्व के तमाम देशों में वर्तमान समय में प्रवासी भारतीयों ने हिंदी को अभिसिंचित किया है। हिंदी प्रवासी भारतीयों की पहचान है। हिंदी प्रवासी भारतीयों के बीच आपसी संपर्क, भाईचारा और रीतिरिवाज की भाषा है। यह भाषा उन्हें सुदूर देश में अपनों के करीब रखती है। आपसी मेलजोल बढ़ाती और उनके लिए एक तरह से जीवन रेखा का कार्य करती है। प्रवासी भारतीयों के मन में हिंदी और हिंदुस्तान से समान प्रेम है। भारत के विदेश मंत्रालय अधीन प्रवासी भारतीय मंत्रालय कार्यरत है। यह मंत्रालय वर्ष में एक बार 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस के रूप में मनाता है। मंत्रालय ने प्रवासी भारतीयों को एक बड़ा प्लेटफार्म उपलब्ध कराया है। हर वर्ष सैकड़ों की तादात में प्रवासी भारतीय इस अवसर पर एकत्रित होते हैं और हिंदी, हिंदुस्तान और भारतीय संस्कृति के प्रति अपना प्रेम व्यक्त करते हैं। अनेक प्रवासी भारतीय आश्चर्यजनक रूप में निजी श्रम से हिंदी की पत्रिकाएं प्रकाशित एवं वितरित कराते है लंदन में 'पुरवाई' और नार्वे में 'शांतिदूत' इसके उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् नई दिल्ली विश्व भाषा के रूप में हिंदी और भारतीय संस्कृति को एक विशेष पहचान देने का महती प्रयास कर रहा है। यह परिषद् विदेशों में अपनी हिंदी पीठों के माध्यम से हिंदी का व्यापक प्रचार–प्रसार कर रहा है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के विश्वभर में लगभग 70 देशों में हिंदी की पीठें है। इन पीठों के माध्यम से हिंदी शिक्षण और हिंदी के प्रचार–प्रसार को दिशा और गति दोनों मिली है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा अनेक देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी के पठन – पाठन का सुंदर प्रबंध किया गया है। यही नहीं भारतीय संस्कृति को विदेशों में जीवंत पहचान देने का कार्य भी भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् ने किया है। विश्वभर में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के 25 से अधिक केंद्र कार्य कर रहे हैं। इन केंद्रों के माध्यम से संपूर्ण भारत के अनेक कलाकार विश्व में भारतीय संस्कृति की पताका फहराते हैं। यही नहीं भारतीय संस्कृति और हिंदी एक दूसरे के पर्याय और प्रचारक का भी कार्य करते हैं।

वर्तमान समय में हिंदी विभिन्न उत्पादों के लिए विश्व बाजार की भाषा के रूप में भी कार्य कर रही है। हिंदी के प्रयोग और प्रचार–प्रसार को सही दिशा देने के लिए आवश्यक है कि विदेशों में हिंदी का मानकीकरण किया जाए। विश्व हिंदी सचिवालय मॉरीशस को सौंपे गए अन्यान्य कार्यों में प्रवासी भारतीयों की हिंदी रचनाओं का प्रकाशन का कार्य था। विदेशों में हिंदी को सही दिशा और स्वरूप देने का कार्य भी विश्व हिंदी सचिवालय बड़ी बखूबी कर सकता है। आवश्यकता है इस सचिवालय को सुदृढ़ बनाने और इसकी सुविधाओं का भरपूर उपयोग करने की।

उक्त तथ्यों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि हिंदी का कमोवेश प्रचार–प्रसार विश्व के हर कोने में है। विगत दो शताब्दियों में हिंदी भाषा का विश्वभर में दूर–दूर तक प्रचार–प्रसार बढ़ा है और हिंदी विश्व की प्रमुख भाषाओं में अपना स्थान बनाने में सफल हुई है।

संदर्भ ग्रंथः

1. हिंदी भाषा एवं साहित्य विश्वकोश भाग 3 परिशिष्ट 5 लेखक डा. शशि प्रभा श्रीवास्तव प्रमुख लेखक एवं संपादक डा. गणपति चंद्र गुप्त एटलांटिक पाब्लिशर्स एंड डिस्ट्री ब्यूटर्स, नई दिल्ली
2. हिंदी जगत, विस्तार एवं संभावनाएं गिरमिटिया देशों में हिंदी लेखन आर.के. सिन्हा संपादक प्रो. गिरीश्वर मिश्र, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय, वर्धा
3. विकीपीडिया

विकास आयुक्त सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्यम का कार्यालय, निर्माण भवन, नई दिल्ली

हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा में 'राजभाषा भारती' की भूमिका

– सुश्री प्रेरणा गौड़

भाषा, मनुष्य के मनोभावों की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम अध्ययन एवं विश्लेषण परक वैज्ञानिक उच्चरित माध्यम है। मनुष्य की सर्वांगीण अभिव्यंजना भाषा के अभाव में अपूर्व ही होगी। किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक अस्मिता का अध्ययन करने में भाषा की अहम् भूमिका निर्विवाद है। हमें यह स्वीकार करने में संकोच नहीं करना चाहिये कि मनुष्य को पशुत्व से पृथक करने वाले अन्यान्य लक्षणों की गणना में भाषा की निर्णायक स्थिति अवश्य ही स्वीकार्य होगी।

भारत की राजभाषा हिंदी है। अनुमानित एक सहस्राब्दी वर्षीय साहित्य सृजन की उर्वर परम्परा की संवाहक हिंदी जन–जन की आस्था की अभिव्यक्ति का मूर्तिमान स्वरूप है। हिंदी के इसी आत्मबल को उद्घाटित करने हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा था–''हिंदी साधारण जन की भाषा है। जनता के लिए ही उसका जन्म हुआ था और जब तक अपने को जनता के काम की चीज बनाए रहेगी, जन चित्त में आत्मबल का संचार करती रहेगी तब तक उसे किसी का डर नहीं है। वह अपने आप की भीतरी अपराजेय शक्ति के बल पर बड़ी हुई है, लोक सेवा के महान् व्रत के कारण बड़ी हुई है और यदि अपनी मूल शक्ति के स्त्रोत को भूल नहीं गई तो निसंदेह अधिकाधिक शक्तिशाली होती जायेगी। वह किसी राजशक्ति की अँगुली पकड़ कर यात्रा तय करने वाली भाषा नहीं है, अपने आपको भीतरी शक्ति से महत्त्वपूर्ण आसन अधिकार करने वाली अद्वितीय भाषा है। शायद ही संसार में कोई ऐसी भाषा हो, जिसकी उन्नति में पद–पद पर इतनी बाधा पहुँचाई गई हो, फिर भी जो इस प्रकार अपार शक्ति संचित कर सकी है, वह करोड़ों नर–नारियों की आशा और आकांक्षा, क्षुधा और पिपासा, धर्म और विज्ञान की भाषा है।''[1] आचार्य द्विवेदी जी के इस कथन में हिंदी की लोक गृहीत शक्ति, समन्वय की विशाल साधना, भिन्न संस्कृतियों एवं भाषा को आत्मसात करने की विराट प्रवृत्ति तथा भिन्न भाषा–भाषियों के प्रति अगाध औदार्य प्रमाणित होता है। आज भले ही इस बाजारवाद के तक्षकीय दंश से आहत सांस्कृतिक परिदृश्य में भी हिंदी की अजातशत्रु प्रवृत्ति संजीवित है, इसीलिए देश में दो प्रतिशत अंग्रेजी भक्तों की दुर्राभ संधि हो या सक्षम शब्दावली के अभाव की दुहाई देने वालों का षडयंत्र, चाहे सुव्यवस्थित ढंग से प्रचारित करने का दुष्प्रयास कि हिंदी तकनीकी, औद्योगिकी, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, विधि, विज्ञान ज्ञान की अनंत ज्ञान राशि को व्यक्त करने में पूर्व–सक्षम नहीं है और कान्वेंट के मानसिक दासत्व भार से आक्रान्त भद्र पुरूषों की मानसिकता अथवा 'मोबाइल कल्चर' व 'इंटरनेटी व्यवस्था' के भार में आपाद मस्तक निमज्जित चंद बुद्धिजीवियों को उन्मादी प्रलाप हो लेकिन आज यह प्रमाणित सत्य हैं कि हिंदी ने इन सभी भ्रांतियों का सफल निराकरण कर दिया है। आज ज्ञान–विज्ञान, कला, साहित्य, दर्शन, धर्म और संस्कृति का कोई भी पक्ष अब हिंदी में स्फटिक मणि के समान प्रदीप्त हो रहा है। सभी भ्रांतियां ध्वस्त हो चुकी है। आज हिंदी के प्रति प्रेम मात्र अंधानुकरण नहीं है। यह प्रेम ज्ञान द्वारा चालित और श्रद्धा द्वारा अनुगामित है। आज हिंदी कोटि–कोटि जनता के हृदय और मस्तिष्क की क्षुधा शमन करने का प्रभावी माध्यम बन चुकी है।

''आज विश्व में भारत ने अपनी पहचान बना ली है। भारत एक स्वतंत्र जनतांत्रिक राष्ट्र है। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का मुखिया भारत है। सार्क परिषद् का प्रणेता और संस्कृति की दृष्टि से भी वह विश्व का पथ प्रदर्शक और अगुआ है। ऐसे भारत की भाषा हिंदी है। इसलिए

यदि भारत से निकटता बनानी है तो हमें हिंदी के अध्ययन–अध्यापन को महत्त्व देना चाहिए, ऐसा विश्व के सभी राष्ट्रों ने सोचा। दूसरे, भारतवंशी लोग रोजगार हेतु पश्चिम के राष्ट्रों में गए हैं और पूरब के राष्ट्रों में भाईचारा, स्नेह, संस्कृति को लेकर अपना स्थान बनाया। इस कारण से भी हिंदी का अपना वैश्विक दायरा निर्माण हुआ।''[2]

मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, ट्रिनिडाड में तो श्रमिकों के रूप में ही भारतीयों ने अंग्रेज शासकों के षडयन्त्रों के कारण हिंदी को सुरक्षित रखा। गुयाना द्वीप, दक्षिण अफ्रीका, इग्लैंड, इटली, अमेरिका, कनाडा, कोरिया, चीन, जर्मनी, जापान, फ्रांस, रूस, हंगरी, पोलैण्ड, नेपाल, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, बर्मा, श्रीलंका इत्यादि देशों में हिंदी अपनी साहित्यिक क्षमता तथा भूमण्डलीकरण की अपरिहार्यता के कारण अत्यन्त ही लोकप्रिय बनी हुई है।

इतिहास साक्षी है कि हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा के संवर्द्धन में मध्यकालीन संतों, भक्तों और कवियों की महती भूमिका रही है, जिनसे आकृष्ट होकर विदेशी विद्वानों, भाषा वैज्ञानिकों, साहित्यकारों की लेखनी ने हिंदी की महत्ता को स्वीकारा है। अनेकानेक लब्ध प्रतिष्ठ हिंदी साहित्य स्रष्टाओं की लेखकीय प्रतिभा सात समुद्र पार देशों में प्रतिष्ठित हुई। हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा के महाभूत में इतनी आहुतियों का योगदान है कि यदि उसकी परिगणना इस आलेख की बात छोड़िये, न जाने कितने महाग्रंथों का प्रणयन भी कम ही होगा। इस आलेख का मूल विषय–हिंदी की वैश्विक प्रतिष्ठा के महाभूत में 'राजभाषा भारती' की भूमिका पर केन्द्रित है। यह पत्रिका वर्ष 1978 से अनवरत त्रैमासिक रूप में प्रकाशित हो रही है। संविधान सभा द्वारा हिंदी की स्वीकृति के रूप में प्रतिपादित प्रतिबद्ध ता की बहु–आयामी योजनाओं की सफल क्रियान्विति की शृंखला में 'राजभाषा भारती' भी एक अभिनव प्रयोग है। इस पत्रिका की हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार के प्रति प्रतिबद्धता की प्रशंसा करते हुए अपने 'संदेश' में पूर्व राष्ट्रपति महामहिम प्रणव मुखर्जी ने लिखा था–''मुझे यह जानकार प्रसन्नता हो रही है कि राजभाषा विभाग द्व ारा त्रैमासिक पत्रिका 'राजभाषा भारती' का प्रथम अंक अप्रैल 1978 में प्रकाशित हुआ था और तब से लेकर आज तक 'राजभाषा भारती' का प्रकाशन नियमित रूप से किया जा रहा है। हम सब जानते है कि संविधान निर्मात्री सभा द्वारा 14 सितम्बर 1949 को हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया था। इसका प्रमुख कारण था कि हिंदी भाषा भारत के एक बड़े जनसमुदाय द्वारा बोली एवं समझी जाती थी। हिंदी एक अत्यन्त सरल समृद्ध एवं सशक्त भाषा है और भारत की राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता की महत्त्वपूर्ण कड़ी है। .....हिंदी सभी को एक सूत्र में बांधे रखने का कार्य करती है।''[3]

राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार हेतु इस पत्रिका की 5000 प्रतियाँ केन्द्र सरकार के कार्यालयों एवं विभिन्न विभागों में निःशुल्क प्रेषित की जाती है। इसी अंक में तत्कालीन उप–राष्ट्रपति समान्य मो. हामिद अंसारी जी ने अपने 'संदेश' में लिखा–''हम सभी जानते है कि हिंदी हमारी राष्ट्रीय पहचान है, हमारी सांस्कृतिक समृद्धि की प्रतीक है। इसीलिए हमें विश्व में अपनी संस्कृति की पहचान सुदृढ़ करने के लिए हिंदी भाषा के विकास के लिये कृत संकल्प होना वाँ पड़ेगा।''[4]

'राजभाषा भारती' के संरक्षक व राजभाषा विभाग के पूर्व सचिव श्री प्रभास कुमार झा अपने 'उद्‌बोधन' में सत्य ही लिखते हैं–''आज हिंदी विश्व की सर्वाधिक बोली व समझी जाने वाली जनभाषाओं में अग्रणी है, जो इसकी बृहत स्वीकार्यता और व्यापक फैलाव का सूचक है। यह सोच सही नहीं है कि राजभाषा हिंदी मात्र अंग्रेजी के अनुवाद की भाषा है। सही सोच यह है कि हिंदी में मूलतः कार्य हो क्योंकि यह जनता की भाषा है। विश्व भर में अनुवाद का प्रचलन है, जिसका उद्देश्य अन्य भाषाओं में उपलब्ध अधुनातन ज्ञान को अपनी भाषा में मुहैया कराने हेतु होता है। इसी प्रकार हमें भी अनुवाद को हिंदी भाषा की समृद्धि तथा व्यक्ति के विकास से जोड़कर देखना चाहिए।''[5]

हिंदी की वैश्विक स्थिति के संदर्भ में लिये गये साक्षात्कार में भारत सरकार के गृह मंत्री माननीय श्री राजनाथ सिंह जी ने कहा–''विश्व के विभिन्न देशों में रह रहे भारतीय मूल के करोड़ों लोग जो हिंदी का

बखूबी प्रयोग कर रहे हैं इसके कारण आज हिंदी विश्व को सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। .....विगत दशकों में हिंदी का अन्तरराष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ। .....विदेशों से बहुत सारी पत्र–पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिंदी में प्रकाशित हो रही है।''[6]

'राजभाषा भारती' द्वारा हिंदी के प्रचार–प्रसार के निमित्त किये जा रहे भागीरथ प्रयासों की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए प्रख्यात आलोचक डॉ. नामवर सिंह ने एक साक्षात्कार में कहा–''राजभाषा भारती अंक 148 का कवर पेज मुझे बहुत ही अच्छा लगा, इस पर राष्ट्रीय प्रतीक शोभायमान हो रहा है, जिसे देखकर मुझे खुशी हुई। मुझे खुशी है कि राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय लगातार अपने पथ पर गतिशील है। राजभाषा के कार्यान्वयन की दिशा में विभाग अच्छा कार्य कर रहा है।''[7] इन सभी उद्धरणों से 'राजभाषा भारती' की हिंदी के प्रति प्रतिश्रुति स्वतः ही स्पष्ट होती है।

किसी भी पत्रिका की ख्याति की पृष्ठभूमि में उसका सम्पादकीय कौशल प्रमुख स्थान रखता है। मनुष्य के शरीर में जो स्थान मस्तिष्क का होता है और उसके भी भीतर उपमस्तिष्क का–जो हमारी सम्पूर्ण दैहिक व मानसिक क्रिया–प्रतिक्रियाओं का संचारक होता है, वही निर्णायक भूमिका सम्पादकीय दृष्टि की होती है। संपादक अपने पत्र या पत्रिका के लक्ष्य को भली भांति समझता है। उसी लक्ष्य के अनुरूप वह पत्रिका में सामग्री का चयन का प्रकाशन करता है। 'राजभाषा भारती' के प्रतिपालक डॉ. बिपिन बिहारी, संपादक डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल तथा उपसंपादक डॉ. धनेश द्विवेदी की चिंतन त्रिवेणी में 'राजभाषा भारती' का यशस्वी स्वर्ण कमल खिलता है। संपादक एवं उपसंपादक राजभाषा हिंदी के प्रति अपने दायित्व के गांभीर्य के प्रति सजग व सचेष्ट है। राजकीय उपक्रमों में हिंदी के प्रचार–प्रसार, प्रयोग जन्म कठिनाईयों एवं तद्विषयक समाधान, हिंदी की राष्ट्रीय अस्मिता तथा उसकी प्रयोजनमूलक उपादेयता, तकनीकी, अनुवाद, प्रारूपण आदि विषयों के प्रति जितना उत्तरदायी गांभीर्य का सफल निर्वहन इस पत्रिका में दर्शित होता है उतना ही हिंदी की विश्व स्तरीय भूमिका के प्रति भी उनकी अटूट आस्था दर्शित होती है। यही कारण है कि प्रत्येक अंक में एकाधिक आलेख हिंदी की वैश्विक भूमिका के संदर्भ में भी प्रकाशित होते है। 'विदेशी धरती पर हिंदी के सितारे' संज्ञक आलेख में श्री उपेन्द्र कुमार शुक्ल बड़े विस्तार से उन विदेशी साहित्यकारों के हिंदी अवदान की चर्चा करते हैं जिन्होंने–''हिंदी से वैसा ही प्यार किया जैसे कोई बेटा अपनी माँ से करता है। .....ब्रिटेन के शासकों ने अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए भारत के भाल की बिंदी, हिंदी को दबाने की कोई कसर नहीं छोड़ी, लेकिन आज उसी ब्रिटेन की धरती पर हिंदी फल–फूल रही है। .....लंदन की धरती पर हिंदी को प्रतिष्ठित करने में जितना योगदान भारतीय मूल के लोगों का है, उतना ही योगदान ब्रिटेन के अंग्रेज हिंदी सेवियों का भी है।''[8]

श्री शुक्ल फादर कामिल बुल्के (बेल्जियम), रूपर्ट स्केल (लंदन), डॉ ओदोलन स्मेकल (चेकोस्लोवाकिया), मारियो ब्रिस्को (पॉलैण्ड), मिवाको कोईजुका (जापान), पी.ए.वारन्निकोव (रूस) तथा लोठार लुत्से (जर्मनी) की हिंदी सेवा के रेखांकित करते हुए लिखते हैं–''जन्म से विदेशी लेकिन दिल से हिंदी इन हिंदी सेवियों के योगदान की चर्चा के बिना हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास पूरा नहीं होता। बाजारवाद के इस दौर में अंग्रेजियत के खिलाफ खड़े होने के लिए हमें यह हिंदी सेवी हमेशा प्रेरित करते रहेंगे।''[9]

वाँ

विश्व हिंदी सम्मेलन
मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

हिंदी की वैश्विक भूमिका के संदर्भ में 'राजभाषा भारती'' जिन आलेखों का चयन व प्रकाशन करती है उसकी विषय सामग्री का आकलन अत्यन्त ही सूक्ष्म तथ्यग्राही दृष्टि से करती है। प्रकाशित तद्विषयक सामग्री अत्यन्त ही ज्ञानवर्धक होती है। श्री राकेश शर्मा 'निशीथ' का आलेख 'चिंतन और दर्शन की भाषा : हिंदी' में अत्यन्त ही विस्तार से हिंदी का चिन्तन क्षेत्र उद्घाटित करता है, वहीं उसकी वैश्विक स्थिति के संदर्भ में कहता है–''हिंदी विश्व के 200 देशों में से 180 देशों में देशी और विदेशी लोगों के बीच भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रति अपनत्व एवं एकता का भाव जगा रही है। 'एनाकार्टा एनसाइक्लोपिडिया' के अनुसार चीनी भाषा के बाद संसार में प्रयुक्त होने वाली सबसे बड़ी भाषा हिंदी है। .....विश्व के 132 देशों में जाकर बसे भारतीय मूल के लगभग 2 करोड़ लोग हिंदी माध्यम से ही अपना कार्य करते हैं। 'पब्लिक लैंग्वेज सर्वे

ऑफ इंडिया' के अनुसार वृद्धि की वर्तमान गति से हिंदी आगामी 50 वर्षों में अंग्रेजी को पीछे छोड़ देगी। .....175 विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षण–प्रशिक्षण के कार्यक्रम और शोध कार्य चल रहे है। ..... कुछ हिंदी प्रेमियों ने हिंदी का विश्व मंच स्थापित करने की दिशा में काम करना शुरू कर दिया है। विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। 11 वां विश्व हिंदी सम्मलेन वर्ष 2018 में मॉरीशस में आयोजित किया जायेगा।''[10]

श्री जितेन्द्र मोहन शर्मा अपने विस्तृत आलेख 'वैश्वीकरण एवं हिंदी का विकास' में वर्तमान पटल पर उभरती हिंदी की महती छवि को अंकित करते हैं। एक तरफ से भूमंडलीकरण की चर्चा करते हैं तो दूसरी ओर भूमंडलीकरण के कारण भी विदेशों में हिंदी की महिमा स्वीकार्य हुई है। बाजारवाद इसका सबसे बड़ा कारण बना–इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती। बाजार की आवश्यकता हो गई है कि विदेशी शासकों द्वारा अपनी जनता के आर्थिक हितों के निमित्त ''वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में डिजिटल मीडिया द्वारा हिंदी को अफ्रीका, मध्य–पूर्व यूरोप और उत्तरी अमेरिका में एक चिंताकर्षक ढंग से लगातार पहुँचाया जा रहा है। दूसरी ओर बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा दक्षिण एशिया के बाजार में पैठ लगाने हेतु हिंदी की उपयोगिता में उत्तरोत्तर बढ़ोतरी की जा रही है।''[11]

वैश्विक स्तर पर हिंदी के परम्परागत स्वरूप में भी परिवर्तन लक्षित हो रहे हैं। 'राजभाषा भारती' के लेखक श्री जितेन्द्र मोहन शर्मा वैश्विक हिंदी के एक नये रूप 'हिंगलिश की चर्चा करते हुए लिखते है–''ब्रिटेन में तो धड़ल्ले से ''हिंगलिश' चल पड़ी है। इतना ही नहीं उपन्यासकार और शिक्षक बलजिंदर महल ने हिंगलिश जैसी मजेदार भाषा के संसार को व्यापक बनाने के लिए इसकी एक गाइड, शब्दकोश के रूप में पेश की है, जिसका नाम है–''द बर्ग्रीस हिंगलिश हाऊ टू स्पीक पक्का।'' अंग्रेजी के अखबार के स्तम्भकार श्री जग सुरैया ने हिंगलिश पर अपने एक लेख में लिखा– "You are not believing on me? Just you go to Bilayat or America and Finding out your will be peoples there are using many many ajib words we desiAngreziwalls are bilkul not under Standing, no matter how much koshis kro we do."[12]

कहने का तात्पर्य यह है कि 'राजभाषा भारती' दोहरी चुनौतियों के दायित्व को सफलता पूर्वक निभा रही है। राष्ट्रीय स्तर पर सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग का विस्तार करना और वैश्विक स्तर पर हिंदी की अतुलित शब्द संपदा, अभिव्यक्ति सामर्थ्य, विश्वजनीज समन्वयात्मक प्रवृत्ति तथा समय के साथ परिवर्तनशीलता की क्षमता के संदर्भ में स्तरीय आलेखों का प्रकाशन–इस दोहरे दायित्व का सफल निर्वहन करने में 'राजभाषा भारती' निस्संदेह स्तुत्य भूमिका निभा रही है। इस पत्रिका का मुख पृष्ठ मुक्त कंठ से कहता है–''जन जन की भाषा है हिंदी''–यह 'जन' केवल कश्मीर से कन्याकुमारी तक का ही नहीं बल्कि 'वसुधैव कुटुम्बकम' के भाव का उद्घोष करने वाला 'जन' है जिसकी भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है–हिंदी।

संदर्भ–

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी : विश्व भाषा हिंदी, पृ. 54
2. डॉ. सुरेष माहेश्वरी (सम्पा.) : हिंदी : राष्ट्रभाषा से विश्व भाषा की ओर, पृ. 100
3. राजभाषा भारती, वर्ष 39, अंक 150, जन.–मार्च 2017, पृ. 3
4. वही, पृ. 4
5. वही, पृ. 7
6. वही, पृ. 3
7. वही, पृ. 5
8. वही, वर्ष 39, अंक 148, जुलाई 2016, पृ. 58–59
9. वही, पृ. 60
10. वही, वर्ष 39, अंक 150, जन.–मार्च 2017, पृ. 82
11. वही, वर्ष 39, अंक 152, जुलाई–सितम्बर 2017, पृ. 27–28
12. वही, पृ. 30

पृथ्वीपुरा, रसाला रोड़, जतनी कुंज,
पावटा, जोधपुर, राजस्थान–342001

विश्व क्षितिज पर प्रकाशमान होती हिंदी

—डॉ. धनेश द्विवेदी

भारतीय संस्कृति का एक सिद्धान्त जिससे बाहरी दुनिया बहुत अच्छी तरह से परिचित है, 'तत्वमसि' का है। अमृत हमारी आत्मा में ही मौजूद है। जो सभी बाह्य वस्तुओं का आन्तरिक तत्व है वह हमारी आत्मा का भी तत्व है। भारतीय संस्कृति कहती है कि मनुष्य ईश्वर का प्रतिबिम्ब है इसलिये मनुष्य पवित्र है। वह तत्वतः एक दृष्टा है, दृश्य नहीं। यह भारतीय संस्कृति का एक अद्वितीय रूप है कि मनुष्य के अंदर के मनुष्यत्व का परिचय आत्ममंथन द्वारा किया जाता है। कुल मिलाकर भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों में आत्मा में छिपी हुई ईश्वरीयता, लोकतंत्र में आस्था, सारे जीवन और सत्ता की एकता तथा सबसे महत्वपूर्ण मानव—जाति की एकता की वृद्धि के लिये विभिन्न विश्वासों और संस्कृतियों के समन्वय पर जोर शामिल है। भारतीय संस्कृति का प्रभाव एशियाई देशों पर तो है ही विश्व के बाकी हिस्से पर भी यह प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति के प्रचार—प्रसार में हिंदी भाषा की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका समझ में आती है। 'मेरा जूता है जापानी, ये पतलून इंग्लिस्तानी, सर पे लाल टोपी रूसी फिर भी दिल है हिंदुस्तानी' जैसे गीतों के बोल लगभग पाँच दशक पहले से विश्व के कई देशों में सुनाई दे रहे हैं। इसके साथ न जाने कितने ही हिंदी गीत भारत ही नहीं विश्व के अनेक देशों में गाए व समझे जाते हैं। यह भारतीय संस्कृति का ही कमाल था कि यह गाना सारी विविधताओं को समेटे हुये 'हिंदुस्तानी दिल' के साथ लोगों की जुबां पर था। मैंने इस गाने का जिक्र इसलिये किया क्योंकि रूसी द्विभाषिये के रूप में कार्य करते हुये मुझे 8 वर्षों में सैकड़ों रूसी इंजीनियरों/सैनिकों से बात करने का अवसर मिला। कई बार हिंदी, हिंदुस्तान की संस्कृति पर चर्चा हुई, कई बार दूसरे देशों की भाषा, विचार, जीवन शैली पर गहन चिंतन भी हुआ किंतु निष्कर्ष एक ही रहा। वह था, विविधताओं से भरा अतुल्य भारत और भारत की प्राण—भाषा हिंदी की सहजता, सरलता एवं व्यापकता। मैं आपको यह भी बता दूं कि इन चर्चाओं के दौरान न जाने कितने ही रूसी नागरिकों ने हिंदी सीखने में अपनी रुचि दिखाई और अल्पकाल में ही छोटे—मोटे संवाद हिंदी भाषा में करने में वाँ सफल भी रहे। ज्यादातर रूसी भारतीय सिनेमा के माध्यम से भारतीय संस्कृति को नजदीक से समझने में आनंदित होते प्रतीत हुये। अधिकतर वयस्क रूसी नागरिक पुरानी पीढ़ी के भारतीय सिनेमा के नायक राजकपूर की भूरि—भूरि प्रशंसा करते दिखे। अगले दौर में मिथुन चक्रवती जैसे दूसरे नाम भी रूसी धरती पर बसने वाले गैर भारतीय नागरिकों की पसंद बने।

वर्तमान में भी हिंदी को वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय बनाने में भारतीय फिल्म उद्योग 'बॉलीवुड' द्वारा बड़ी संख्या में बनाई जाने वाली हिंदी फिल्मों का अहम योगदान है। भारतीय फिल्मों और भारतीय फिल्मी एवं गैर फिल्मी संगीत ने भी हिंदी को दुनिया के कोने—कोने तक पहुँचाने को काम किया है। ऑस्कर पुरस्कार विजेता भारतीय संगीतकार ए. आर.रहमान के गीत 'जय हो' ने भारत और हिंदी को अभूतपूर्व लोकप्रियता दी है। अनेक मशहूर विदेशी गायकों और संगीतकारों ने अपनी रचनाओं एवं गीतों में भारतीय गीतों के शब्दों

का इस्तेमाल करके काफी कामयाबी एवं लोकप्रियता अर्जित की है।

यहां एक और उदाहरण देना समीचीन होगा कि राजस्थान के अखबार दैनिक नवज्योति में पत्रकार के रूप में कार्य करते समय मुझे राजस्थान की मशहूर नृत्यांगना गुलाबो सपेरा का साक्षात्कार लेने का अवसर प्राप्त हुआ। पिछले कई दशकों से कालबेलिया नृत्य की सशक्त हस्ताक्षर गुलाबो सपेरा दुनिया के 115 से ज्यादा देशों में अपनी प्रस्तुति दे चुकी हैं। आप कहेंगे कि ऐसे कई भारतीय कलाकार होंगे, परन्तु आकर्षित करने वाली बात यह है कि यह नृत्यांगना एक ऐसे समाज से आती है, जहां हिंदी भाषा के अलावा केवल मारवाड़ी भाषा की जानकारी होती है और यह बात खुद उस महान नृत्यांगना ने कही कि हिंदी भाषा के सहारे संसार के एक बड़े हिस्से में वह अपनी प्रस्तुति देने में सफल रहीं। विशेष बात यह भी है कि इस नृत्यांगना के साथ पूरा दल कई बार विदेशों में सिर्फ हिंदी के भरोसे भारतीय संस्कृति की अमिट छाप छोड़ने में सफल रहा है। ऐसे न जाने कितने ही कलाकार, फनकार हैं जिन्होंने हिंदी भाषा के साथ भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार करने और नई पीढ़ी को भारतीय संस्कृति से परिचित कराने का महती दायित्व निभाया है।

इन उदाहरणों से यह समझा जा सकता है कि विश्व क्षितिज पर हिंदी कितनी आभा और प्रखरता के साथ दैदीप्यमान हो रही है। दिन प्रतिदिन बढ़ते हिंदी भाषा के स्वरूप को समझने से पूर्व इतिहास के पन्नों पर नजर डालें तो हम पाते हैं कि भारत जैसे विशाल देश में जहां हर कोस पर भाषा का बदला मिजाज दिखाई पड़ता है, एक बोली दूसरे से भिन्न पाई जाती है, वहां एकमात्र संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग सदियों से किया जा रहा है। आजादी से पूर्व जब पूरे देश को एकजुट करने की आवश्यकता पड़ी तो हिंदी भाषा के कंधों पर यह दायित्व रखा गया। गैर हिंदी भाषी प्रांतों के विद्वान/स्वतंत्रता सेनानी/बुद्धिजीवी यह समझते थे कि अंग्रेजों से लड़ने के लिये एकजुटता जरूरी है और यह एकजुटता हिंदी भाषा के माध्यम से ही संभव थी। सभी स्वतंत्रता प्रेमियों ने इसे समझा और हिंदी भाषा में आंदोलन का स्वरूप तय किया, जिसके सुखद परिणाम आज हमारे सामने हैं पर जाते–जाते अंग्रेजी हुकूमत अंग्रेजी भाषा के रूप में एक ऐसा दंश दे गई, जो हमारी संस्कृति, हमारी भाषा को छिन्न–भिन्न करने का प्रयास करने लगी। किंतु हम सभी यह मानते हैं कि 'मुद्दई लाख बुरा चाहे तो क्या होता है, वही होता है जो मंजूरे खुदा होता है' और यह बात भाषायी दृष्टि से हिंदी के विकास, प्रचार–प्रसार पर एक दम खरी उतरी। हिंदी का विकास रथ स्वतः ही अपनी गति से आगे बढ़ता रहा है। तमाम विषम परिस्थितियां हिंदी के विकास के मार्ग में हो सकती हैं पर हम जानते हैं कि आज देश में ही नहीं, दुनिया के कई देशों में हिंदी अपने बल–बूते पर भाषाओं की अग्रणी पंक्ति में खड़ी है। आज दुनिया का प्रत्येक देश भारत और हिंदी भाषा की ओर एक विश्वास के साथ देख रहा है। यही कारण है कि कितने ही देशों में हिंदी की पढ़ाई पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। हिंदी भाषा दुनिया के अनेक विश्वविद्यालयों में तो पढ़ाई ही जा रही है कितने ही विदेशी छात्र हिंदुस्तान में रहकर हिंदी भाषा सीखने का प्रयास कर रहे हैं।

ज्यादातर देश यह मानने लगे हैं कि यह समय की आवश्यकता है। इसका एक कारण बाजार का बदलता परिदृश्य भी है। दुनिया के सभी देश यह जानते हैं कि आज हिंदी का बाजार दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है, हिंदी भाषी अगर किसी उत्पाद को अपना लें तो वह उत्पाद स्वतः ही शीर्ष पर आ जाता है और उसे बनाने वाली कंपनी शीर्ष कंपनियों में शामिल हो जाती है। बड़ी–बड़ी अन्तरराष्ट्रीय कम्पनियां हिंदी भाषी संसार को लुभाने के लिये इसी भाषा में अपने विज्ञापन दे रहीं हैं। गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, फेसबुक, विकीपीडिया समेत दूसरे संस्थानों ने हिंदी भाषा को अपने कार्यक्षेत्र में न सिर्फ शामिल किया बल्कि विशेषज्ञों की टीम बनाकर

इस पर कार्य करना शुरू कर दिया है।

हिंदी का जो एक विशाल संसार हम आज देख रहे हैं उसके पीछे न जाने कितने ही हिंदी प्रेमियों का श्रम शामिल है, न जाने कितने ही लोग हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में अपना जीवन अर्पित कर चुके हैं और कितने अभी भी सच्ची लगन से इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। ऐसे महान भाषा प्रेमियों के माध्यम से हिंदी आज नये मुकाम पर है। हिंदी के प्रसार और लोकप्रियता में बढ़ोतरी का उल्लेखनीय आयाम यह है कि हिंदी भाषा ने विभिन्न वैश्विक भाषाओं के बीच बौद्धिक संपर्क सूत्र के रूप में अपना स्थान सुदृढ़ किया है। हमें समझना होगा कि हिंदी भाषा वर्तमान भारत के राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन की रीढ़ की हड्डी है।

विभिन्न संस्थाओं द्वारा हिंदी को विश्व भाषा के रूप में स्थापित करने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं लेकिन अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। देश–विदेश में हिंदी के शिक्षण एवं प्रचार–प्रसार के लिए वर्धा (महाराष्ट्र) में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय और मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की गयी है। विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की संकल्पना 1975 में नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान की गई। मॉरीशस स्थित विश्व हिंदी सचिवालय वैश्विक स्तर पर हिंदी को प्रतिष्ठित करने तथा अंतरराष्ट्रीय फलक पर उसका प्रचार–प्रसार करने वाली अग्रणी अंतरराष्ट्रीय संस्था है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी तरह की एकमात्र संस्था होने के कारण यह और भी जरूरी हो जाता है कि इसके कार्यकलापों को और अधिक प्रभावशाली बनाया जाए। इस कड़ी में विश्व हिंदी सम्मेलन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। विश्व हिंदी सम्मेलन हिंदी भाषा का सबसे बड़ा अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन है, जिसमें विश्वभर से हिंदी विद्वान, साहित्यकार, पत्रकार, भाषा विज्ञानी, विषय विशेषज्ञ तथा हिंदी प्रेमी जुटते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के प्रति जागरूकता पैदा करने, समय–समय पर हिंदी की विकास यात्रा का आकलन करने, लेखक व पाठक दोनों के स्तर पर हिंदी साहित्य के प्रति सरोकारों को और दृढ़ करने, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहन देने तथा हिंदी के प्रति प्रवासी भारतीयों के भावुकतापूर्ण व महत्वपूर्ण रिश्तों को और अधिक गहराई तथा मान्यता देने के उद्देश्य से विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया जाता है।

कहते हैं कि किसी भी भाषा को समृद्ध से समृद्धतर बनाना हो तो उसे रोजगार से जोड़ देना चाहिये। रोजगार के अवसर होने से भाषा स्वतः ही अपने आयाम तय कर लेती है और यह बात अत्यंत सुखदायक है कि हिंदी भाषा उस दिशा की ओर उन्मुख हो चुकी है। वैश्विक स्तर पर रोजगार के विभिन्न अवसर हिंदी भाषा के जानकारों के लिये उपलब्ध हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम कितनी सकारात्मकता के साथ प्रयास करते हैं। जब बात हिंदी की हो तो हिंदुस्तान की बात स्वतः हो जाती है क्योंकि हिंदी, हिंदुस्तान की संस्कृति की संवाहक है।

वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस, 18–20 अगस्त, 2018

हिंदी भाषा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बेहद मजबूती के साथ खड़ी है, जिसमें भारत के बाहर रह रहे हिंदी भाषियों का योगदान सराहनीय है। हिंदी भाषा का समुदाय अत्यंत विशाल होने के कारण अन्य भाषा–भाषी समुदाय हिंदी विश्व के नजदीक आने को आतुर है। यह भी कहा जा सकता है कि विश्व के पटल पर भारतीय संस्कृति की छाप छोड़ने में हिंदी भाषा का योगदान अद्वितीय है या यूं कहें कि भारत से पूरे विश्व को जोड़ने में हिंदी भाषा एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य कर रही है और हिंदी विश्व दिन–प्रतिदिन और सशक्त होता जा रहा है।

पश्चिम तथा मध्य क्षेत्रों के राजभाषा सम्मेलन एवं पुरस्कार वितरण समारोह के दौरान राजभाषा भारती का विमोचन करते मंचासीन अतिथिगण

राजभाषा हिंदी के प्रभावी कार्यान्वयन में राजभाषा भारती की भूमिका पर डॉ. बिपिन बिहारी, संयुक्त सचिव (रा.भा.) से चर्चा करतीं माननीया जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण मंत्री सुश्री उमा भारती

भारत सरकार, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय), एन डी सी सी–II भवन, नई दिल्ली–110001
के लिए डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित